CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय,
सरस्वती निधि, करौंदी

1.2

श्रीराधा-सुधा-निधि

[हिन्दी अनुवाद]

आम्नाय-ग्रन्थालय,
सरस्वती निधि, करौंदी
वाराणसी-5

ग्रन्थालय
वाराणसी-५
4

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीराधासुधानिधि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भावी प्रकाशन—

श्रीहरिवंश-चरितामृत

लेखक—बाबा हितदास

इस ग्रन्थ में रसिकाचार्य्य-शिरोमणि गोस्वामी श्रीहित हरिवंशचन्द्र महाप्रभुपाद के सम्पूर्ण जीवन-चरित्र का विस्तार-पूर्वक वर्णन किया गया है। साथ ही श्रीहित राधावल्लभीय सम्प्रदाय का जन्म, प्रसार और उसकी विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला गया है। श्रीराधावल्लभीय सम्प्रदाय के सिद्धान्त, रसोपासना की परिपाटी और रस का भी इसमें वर्णन है। इसके सिवाय, रसिक-शेखर श्रीराधा-वल्लभलाल के श्रीवृन्दावन-विलास का सैद्धान्तिक एवं शृंगारिक पद्धति से भी निरूपण किया गया है। तत्कालीन महापुरुषों के जीवन और उनकी विशेषताओं का भी इस ग्रन्थ में प्रसङ्गानुसार वर्णन है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

श्रीहित राधावल्लभो जयति
श्रीहित हरिवंशचन्द्रो जयति।

श्रीराधा-सुधा-निधि

(हिन्दी भावानुवाद-सहित)

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

श्रीमद्गोस्वामी श्रीहितहरिवंशचन्द्र महाप्रभु
प्रणीत।

श्री राधावल्लभ-आनन्द-भवन,
झगरहटा—बिलासपुर
१३ जनवरी सन् १९५० ईस्वी।

अनुवादक—

—बाबा हितदास।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुद्रक तथा प्रकाशक—
सुन्दरलाल इन्दुरख्या एम. ए. विशारद
संचालक —
नर्मदा प्रिंटिंग वर्क्स,
जबलपुर ।

प्रथम संस्करण
मूल्य—.... ३।)
सजिल्द— ३॥।)

पुस्तक मिलने का पता :—
श्रीबाबा हितदासजी
व्यास-भवन बाद ग्राम,
पोस्ट—बरारी
जिला—मथुरा, यू. पी. ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीराधे

विषय-सूची

क्रम	विषय	पृष्ठ
१	मङ्गलाचरण	....
२	गुरु-वन्दना	...
३	इष्ट-वन्दना	...
४	समर्पण	...
५	भूमिका	(१)
६	गोस्वामी श्रीहित हरिवंशचन्द्र महाप्रभु का संक्षिप्त जीवन-चरित्र ...	(२४)
७	श्रीराधा-सुधा-निधि ...	[१
८	अकारादि क्रमानुगत श्लोक-सूची ...	[१६५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री

नमो नमो जै श्रीहरिबंस ।
रसिक-अनन्य बेनु-कुल-मंडन,
लीला मान-सरोवर हंस ।।
नमो जयति श्रीवृन्दावन सहज माधुरी,
रास-बिलास प्रसंस ।
आगम-निगम-अगोचर राधे,
चरन सरोज 'व्यास' अवतंस ।।

—श्रीव्यासजी ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रसिक-पद-रेणु—
हितदास ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री राधे

मङ्गलाचरण—

स्पृष्ट्वा स्पृष्ट्वा मृदुकरतलेनाङ्गमङ्गं सुशीतं ,
सान्द्रानन्दामृत रसह्रदे मज्जतो माधवस्य ।
अङ्के पङ्केरुह सुनयना प्रेममूर्त्तिः स्फुरन्ती ;
गाढाश्लेषोन्नमित चिबुका चुम्बिता पातु राधा ॥

"जिनके सुशीतल अङ्ग-प्रत्यङ्गों को बारम्बार अपने करतल से स्पर्श करके माधव घनीभूत आनन्दामृत-रस-समुद्र में मग्न हो जाते हैं, जो अपने प्रियतम के अङ्क (गोद) में विराजमान हैं; गाढालिङ्गन के कारण जिनका सुन्दर चिबुक कुछ ऊपर उठ रहा है, प्रियतम ने जिसका चुम्बन भी कर लिया है, इस कारण जो और भी चञ्चल हो उठी हैं। वह कमल-दल सुलोचना प्रेम-मूर्त्ति श्री राधा हमारी रक्षा करें।"

श्रीराधा-चरण-रेणु-कृपाकांक्षी—

हितदास।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

❀ श्री ❀

गुरु बन्दना—

लसदद्वन पङ्कजः कनककूट देहद्युतिः
प्रशस्त सुख सम्पदां निधिरपूर्वमानप्रदः।
सकृष्ण वृषभानुजा चरणमाधुरी चञ्चुरः
सदा मधुर वाक् पटुर्जयति साधु वैयासकिः॥

"अत्यन्त प्रेमोद्रेक से जिनका मुख-कमल विकसित हो रहा है, सुन्दर शरीर की आभा मनोहर स्वर्ण-शैल की तरह चमक रही है; जो प्रशस्त सुख सम्पत्ति (प्रेम) की अपूर्व निधि ही हैं। प्रायः प्राणिमात्र को सम्मान देना जिनका सहज स्वभाव है। श्रीकृष्ण के सहित श्रीवृषभानुनन्दिनी जू की चरण-माधुरी के आस्वादन में जो अत्यन्त निपुण हैं तथा जो सदा ही मधुर वचन-रचन-कला में सहज पटु हैं उन साधु-शिरोमणि व्यास-कुमार श्रीहित हरिवंश चन्द्र की सदा जय हो।"

———

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

❀ श्री ❀

इष्ट वन्दना—

सान्द्रानन्द रसैक सार वपुषं माधुर्य्य रम्योदितां
सद्वक्त्रच्छवि निन्दितामलशरत्पूर्णेन्दुविम्बामहम्।
भ्रूभङ्गीजितकाम कार्मुकलतां लावण्य लोलेक्षणां,
वन्दे नन्दितनन्दसूनुमनिशं राधामसाधारणाम्॥

"जिनका श्रीवपु क्या है; मानो घनीभूत आनन्द रस का सार है। जिससे माधुर्य्य और रमणीयता का प्रतिक्षण उदय होता रहता है। सुहावने श्रीमुख की छबि अनिन्दित एवं अमल शरत्कालीन पूर्णचन्द्र-मण्डल को भी तिरस्कृत कर रही है। अहा! भ्रूभङ्गिमा ने तो सर्व-विजयी कामदेव की धनुर्लता को भी अनादृत कर दिया है और फिर तिस पर लोल लोल लोचनों का लावण्यमय ईक्षण? वास्तव में ये श्रीराधा असाधारण हैं। अहा! ये अपनी सौन्दर्य्य-सम्पत्ति से सदा-सर्वदा नन्दनन्दन श्रीलालजी को आनन्दित करती रहती हैं। मैं इनकी बन्दना करता हूँ।"

कृपाभिखारी—

हितदास।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

—: समर्पण :—

प्यारे हितचन्द्र !

मैंने अपने बाल-स्वभाव-वश तुम्हारी कृति की विकृति कर डाली है और धृष्ट बनकर उसी विकृति को लेकर तुम्हारे—श्रीचरणों में उपस्थित हूँ।

नाथ !

कैसे कहूँ कि मेरी इस धृष्टता पर रीझ जाओ। किन्तु खीझने से डरता भी हूँ। जो चाहो सो करो, अन्ततः हूँ तो आपका ही और आप स्वयं 'हित' हैं फिर क्या चिन्ता ?

केवल आपका ही—

हितदास।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

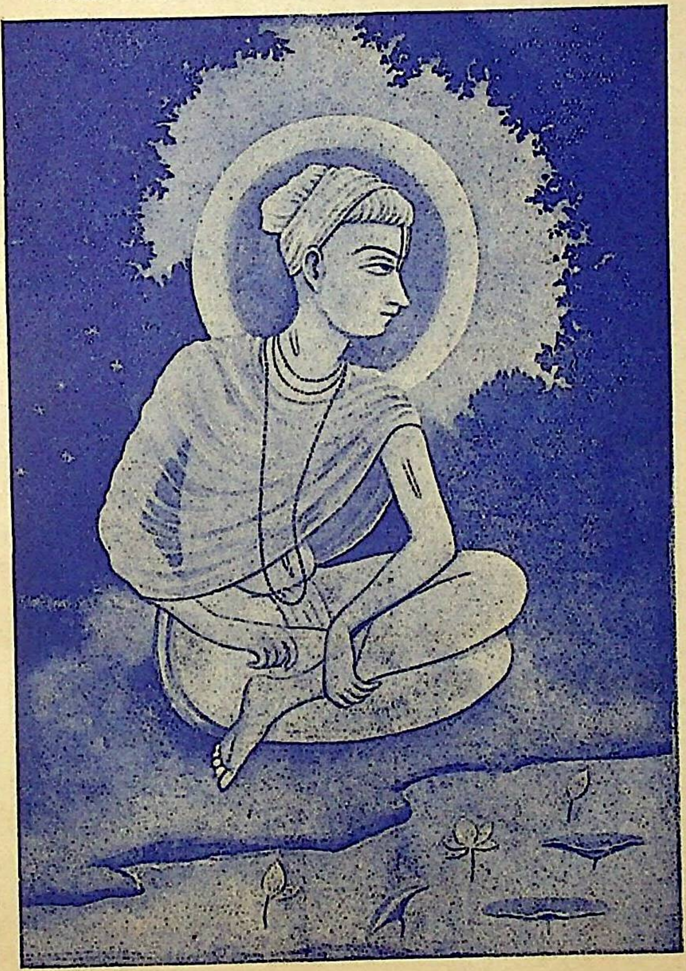

रसिकाचार्य्यवर्य्य अनन्तश्री गोस्वामी
श्रीहित हरिवंशचन्द्र महाप्रभु ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीराधावल्लभोजयति ।

भूमिका

पाश्चात्य सभ्यता ने भारत पर अपना कम असर नहीं डाला है। इसीलिए प्रायः नव-शिक्षित भारतीयों का अपने प्राचीन साहित्य, सभ्यता आदि पर से स्नेह भी उठसा गया है। साहित्य के नव-रसों में से शृङ्गार-रस तो अधिक लोगों के लिये व्यर्थ एवं उपहासास्पद हो गया है। किन्तु यथार्थ में बात ऐसी है नहीं। विद्वान् मनीषियों ने शृङ्गार-रस के साहित्य को ही सर्व-श्रेष्ठ स्वीकार किया है।

हम यहां जिस ग्रन्थ के विषय में कुछ लिखने जा रहे हैं वह संस्कृत-साहित्य का एक अनुपम शृङ्गार-रस पूर्ण काव्य-ग्रन्थ है। इसकी रूप-रेखा का अङ्कन स्वयं ग्रन्थकार के इसी एक श्लोक पर से हो सकेगा—

"अद्‌भुतानन्द लोभश्चेन्नाम्ना रस सुधानिधिः।
स्तवोयं कर्णकलशैगृहीत्वा पीयतां बुधाः॥

—श्रीहित हरिवंशचन्द्र।

और श्रीहित हरिवंशचन्द्र का परिचय देते हुए श्री-ध्रुवदास जी ने कहा है:—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"प्रगट प्रेम को रूप धरि, श्रीहरिवंश उदार।
राधावल्लभलाल कौ, प्रगट कियो रस सार॥
निगम ब्रह्म परसत नहीं, जो रस सबतें दूरि।
प्रगट कियौ हरिवंशजू, रसिकन जीवन-मूरि॥

इन प्रेमावतार के द्वारा गान की गई 'श्रीराधा-सुधा-निधि' वास्तव में सुधा-निधि ही है। इसे पढ़ते ही ऐसा आभासित होता है कि प्रेमाभिलाष-वेलि की प्रत्येक श्लोक-कोंपल प्रतिक्षण वर्द्धमान् होती हुई अपने प्रियतम को आवेष्टित कर लेने के लिये लहलहाकर उठ रही है। अथवा! अनेक ललक-निर्भरों का स्नेह-सलिल एकत्र होकर अनवरत अनुराग-धारावाही इष्ट-सङ्गोन्मत्त आवर्त्त-मयी रसकुल्या के रूप में प्रवाहित हो रहा है। सर्वत्र अथ से इति तक प्रेम—विशुद्ध प्रेम की ही झाँकी है। इस प्रेमके आलोक ने कर्म, धर्म, उपासना, ज्ञान, योग आदि तारागणों को ज्योत्सना-विहीन सा कर दिया है।

आचार्य्यपाद कहीं अपनी आराध्या श्रीराधा की नाम स्मृति में डूबकर प्रेम-पूरित वचनों में कह उठते हैं—

"सा राधेति सदा हृदि स्फुरतु में विद्या परा द्व्यक्षरा।"

अर्थात् 'वह राधा नामक द्व्यक्षरा परा-विद्या सदा ही मेरे हृदय में स्फुरित रहे।'

क्योंकि 'राधेति में जीवनम्'।
'राधा ही तो मेरा जीवन है'।

इस श्रीराधा नाम की विशेषता क्या है? इस पर कहते हैं—

"जल्पत्यश्रु मुखो हरिस्तदमृतम्" और

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"सदा जपति यां प्रेमाश्रु पूर्णो हरिः ।"

हरि की 'प्रेम नीर दृग, मुख राधा रट' यह दशा है।

यदि कोई पूछे कि श्रीहरि, श्रीराधा नाम किस प्रकार रटते रहते हैं? तो उत्तर में आप कहते हैं—

"योगीन्द्र वद्यत्पद ज्योतिर्ध्यान परः ।"

कहीं नाम-स्मृति के साथ ही श्रीप्रिया-चरणारविन्दों का नमन करते हुए कह उठते हैं—

"... ...श्री वृषभानुनन्दिनि सदा वन्दे तव श्रीपदम् ।"

कभी अभिलाषा के उमाह में कहते हैं—

"कदा नु वृन्दावन कुञ्ज वीथीष्वहं नु राधे ह्यतिथिर्भवेयम्" ।

अर्थात् 'हे श्रीराधे! क्या मैं कभी वृन्दावन की कुञ्ज-वीथियों में अतिथि (अभ्यागत) होऊँगी ?'

कभी आकांक्षा करते हैं—

"कदा रसाम्बुधि समुन्नतं वदन-चन्द्रमीक्षे तव ?"

अर्थात् 'मैं समुन्नत रस-समुद्र रूप आपके मुखचन्द्र को कब देखूँगी ?

कभी रूप-लावण्यमयी नव-यौवना किशोरी श्रीराधा का ध्यान आते ही—

"तस्मै नमो भुवन मोहन मोहनाय-
श्रीराधिके तव नवस्तन मण्डलाय ।"

—कहकर केवल नमस्कार ही कर लेते हैं। और इन्हीं श्रीप्रिया-चरणों के दास्य की अभिलाषा करते हुए उस दास्य की श्रेष्ठता का वर्णन करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'कर्हि स्यां श्रुति शेखरो परिचरआश्चर्य्यचर्य्याचरन् ।'

अर्थात् 'राधे ! मैं कब आपकी श्रुति-शेखर-उपनिषदोपरि परिचर्य्या—आश्चर्यमयी परिचर्य्या का आचरण करूंगी ?

उस परिचर्य्या के समक्ष—

'वृथा श्रुति-कथा बत विभेमि कैवल्यतः"

'श्रुति कथा भी व्यर्थ है और कैवल्य तो भयप्रद है।' एवं—

धर्माद्यर्थचतुष्टयं विजयतां किंतद्वृथा वार्त्तया ?"

'अरे ! ये धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष होंगे उत्तम किसी और के लिये ! हमें तो उनकी चर्चा से भी कुछ लाभ नहीं !'

इस प्रकार श्री राधिका-चरणों की महत्ता दिखाकर साधक के चित्त में रस-लोलुपता का उदय करते हैं, फिर क्रमशः उस रस की प्राप्ति का मार्ग दिखाते हैं। तत्पश्चात् उस दास्य-रस का आनन्द और उसकी अनिर्वचनीयता का संकेत करते हैं...

"प्रेमोल्लासैक सीमा परमरस चमत्कार वैचित्र्य सीमा,
सौन्दर्य्यस्यैक सीमा किमपि नव वयो रूप लावण्य सीमा ।
लीला माधुर्य्य सीमा निज जन परमौदार्य्य वात्सल्य सीमा,
सा राधा सौख्य सीमा जयति रतिकला केलि माधुर्य्य सीमा ॥"

बस, इन्हीं श्रीराधा का चरण-दास्य ही सबका एकमात्र अभीष्ट होना चाहिये। इस बात को आप अपनी निष्ठा-द्वारा प्रकट करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"यत्र यत्र मम जन्म कर्मभिर्नारकेथ परमे पदेथ वा।
राधिका रति-निकुञ्ज-मण्डली तत्र तत्र हृदि मे विराजताम् ॥"

अर्थात् 'मैं अपने जन्म कर्मानुसार नरक किंवा परम पद कहीं भी जाऊँ। सब जगह हृदय में श्रीराधिकारति-निकुञ्ज-मण्डली सर्वदा विराजमान् रहे।'

ऐसी महिमामयी श्रीप्रियाजी की उपासना करने वाले महापुरुषों की वन्दना करते हुए उनके स्वरूप का दिग्दर्शन कराते हैं—

न जानीते लोकं न च निगमजातं कुलपरं—
परां वा नो जानत्यहह न सतां चापि चरितम्।

और—

त्यक्ताः कर्मभिरात्मनैव भगवद्धर्म्मेप्यहो निर्ममाः

अर्थात् 'वे रसिक-जन न लोक-वेद को ही जानना चाहते और न आदर्श कुल-परम्परा को ही जानते। और तो और संत-आचरण के आदर्श के भी वे कायल नहीं! अरे! उन्होंने कर्मों को नहीं छोड़ा वरं कर्मों ने ही उन्हें त्याग दिया। आश्चर्य तो यह कि वे श्रीराधाचरण-रसोन्मत्त होकर भगवद्धर्म्म से भी निर्मम हो गये'। इसलिये—

"सर्वाश्चर्य्य गतिं गता रसमयीं तेभ्यो महद्भ्यो नमः।"

अर्थात् 'सर्वाश्चर्य्य गति को प्राप्त हुए उन श्रीराधा-रसोन्मत्त रसिकों—महज्जनों की मैं बन्दना करता हूँ।'

इस प्रकार श्रीहित हरिवंशचन्द्र महाप्रभु पाद ने अपने ग्रन्थ 'श्रीराधा-सुधा निधि' में श्रीराधाकृष्ण-स्वरूप, श्रीवृन्दावन-स्वरूप, रसिक स्वरूप, रसोपासना-पद्धति, और इन सबका महत्व भली-प्रकार प्रदर्शित किया है। उक्त प्रसङ्ग में श्रीराधा-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुधा-निधि का विन्दु-मात्र ही निकालकर पाठकों को दिखाया गया है। इस सुधा-समुद्र का पूर्ण रूपेण आस्वादन तो पाठक गण करेंगे ही। यह उन महापुरुष की देन है; जिनके सम्बन्ध में भक्तमाल-कार स्वामी श्रीनाभाजी महाराज कहते हैं:—

श्रीराधा-चरन-प्रधान हृदय अति सुदृढ़ उपासी।
कुंज-केलि दम्पती तहां की करत खबासी॥
सर्वसु महाप्रसाद प्रसिद्ध ताके अधिकारी।
विधि-निषेध नहिं दासि अनन्य उत्कट व्रतधारी॥
श्रीब्यास-सुवन पथ अनुसरै सोई भलैं पहिचानि है।
श्रीहरिवंश गुसांई-भजन की रीति सकृत कोऊ जानि है॥

—भक्त-माल

श्रीनाभाजी महाराज की इस उक्ति का विद्वान्, विवेकी, एवं निष्पक्ष महात्मा-गण ही यथार्थ भाव समझ सकेंगे। हां, यह बात अवश्य है कि श्रीराधा-सुधानिधि के मर्म को समझने के लिए श्रीहित हरिवंशचन्द्र महाप्रभु के रसोपासना-सिद्धान्त को भी भली प्रकार समझना आवश्यक होगा। तभी ग्रन्थ एवं ग्रन्थकार दोनों का यथार्थ रूप समझा जा सकेगा, और श्रीनाभाजी की उक्ति की चरम सत्यता समझ में आ सकेगी।

अस्तु; अब इस ग्रन्थ के सम्बन्ध में दूसरी विचारणीय बात यह है कि अभी-अभी कुछ वर्षों से श्रीमाध्वगौड़ेश्वर सम्प्रदायानुगत वैष्णवों ने इस ग्रन्थ के आदि और अन्त में श्रीकृष्ण-चैतन्य महाप्रभु की वन्दना के दो श्लोक नवीन जोड़ कर इस-की श्लोक-संख्या दो सौ सत्तर से बढ़ाकर दो सौ बहत्तर कर दी है और वे इसे श्रीस्वामी प्रबोधानन्दजी सरस्वती कृत

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बताने लगे हैं। तथा इसका पूर्व प्रचलित नाम भी उन्होंने थोड़ा सा बदल दिया है। वे इसे 'श्रीराधा-सुधा-निधि' की जगह 'श्रीराधा-रस-सुधा निधि' लिखने, छपाने लगे हैं। ऐसी दशा में यह आवश्यक हो जाता है कि सत्य-सूर्य का उदय करके इन पक्षपाती साम्प्रदायिक जनों का कपट-कुहर विलीन कर दिया जाय। इसके लिये हम यहां कुछ पुष्ट-प्रमाण उपस्थित करते हैं, जिनसे अपने आप ही पाठकों को सत्य एवं असत्य का साक्षात्कार हो जायगा—

(१) श्रीराधा-सुधा-निधि ग्रन्थ अपनी इष्ट-अनन्यता के लिये प्रसिद्ध है और श्रीप्रबोधानन्दजी अपनी धाम-अनन्यता के लिये विख्यात् हैं। फिर कैसे हो सकता है कि एक ही व्यक्ति दो प्रकार की निष्ठाओं से पूर्ण हो सके और धाम-अनन्यता के साथ-साथ इष्ट-अनन्यता को लिये रह सके। धाम-अनन्य श्रीप्रबोधानन्द पादको वृन्दावन के बाहिर यदि कहीं युगल-सरकार प्राप्त भी हों तो वे उन्हें नहीं चाहते। उन्होंने स्वयं कहा है—

मिलन्तु चिन्तामणि कोटि कोटयः
स्वयं वहिर्दृष्टिमुपैति वा हरिः।
तथापि बृन्दावन धूलिधूसरं
न देहमन्यत्र कदापि यातु मे॥

अर्थात् 'यदि कदाचित् श्रीबृन्दावन से अन्यत्र मुझे कोटि-कोटि चिन्तामणि ही क्यों न दृष्टि-गोचर हों, अथवा स्वयं श्रीकृष्ण ही क्यों न दृष्टि-गोचर हो रहे हों किन्तु मैं उनकी ओर दृष्टि तक न करूंगा वरन् श्रीबृन्दावन में ही मेरा देह धूलि-धूसरित होता रहेगा अन्यत्र कदापि न जावेगा।'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसके विपरीत श्रीहित हरिवंश महाप्रभु कहते हैं—

यत्र यत्र मम जन्म कर्मभिर्नारकेथ परमे पदेथ वा।
राधिका रति निकुञ्ज मण्डली तत्र तत्र हृदि मे विराजताम् ॥

अर्थात् 'अपने जन्म-कर्मानुसार मुझे नरक किंवा स्वर्ग परम-पद आदि कहीं भी क्यों न जाना पड़े किन्तु सर्वत्र श्रीराधिका-रति-निकुञ्ज-मण्डली मेरे हृदय में विराजमान् रहे।'

इन दोनों वाक्यों में कितना अन्तर है। एक तो श्रीबृन्दावन के बिना श्रीराधाकृष्ण को भी स्वीकार नहीं करते, उनको ओर देखना नहीं चाहते और दूसरे श्रीराधिका-निकुञ्ज-मण्डली के हृदयस्थ होने पर नरक और परम-पद में जाना स्वीकार करते हैं। यहां विचारणीय बात इतनी ही है कि इन दो विरोधी वाक्यों का एक व्यक्ति के मुख से कैसे समर्थन हो सकता है? इससे सिद्ध होता है कि दोनों व्यक्ति अलग-अलग निष्ठाओं के व्यक्ति हैं। और उनकी रचनाएँ भी भिन्न-भिन्न हैं। उनमें से "श्रीबृन्दावन महिमामृतम्" श्रीप्रबोधानन्द पाद की रचना है और 'श्रीराधा-सुधा-निधि' श्रीहितहरिवंशचन्द्र महाप्रभु की।
(२) 'वैष्णव फेथ एण्ड मूव्हमेंट इन बेङ्गाल' अर्थात् "वैष्णव सम्प्रदाय और बङ्गाल में उनका षड्यंत्र" इस अंग्रेजी पुस्तक के सम्भ्रांत लेखक हैं ढाका विश्व-विद्यालय संस्कृत-विभाग के हेड श्रीयुत सुशील कुमार दे (एम. ए. डी. लिट.)। आप अपनी उक्त पुस्तक के पृष्ठ ६६ के फुट-नोट में इस प्रकार लिखते हैं—

In the book—"*Early History of the Vaisnava Faith and Movement in Bengal*" by—Sushil Kumar De, M. A., (Calcutta), D.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Lit, London). Professor end Head of Department of Sanskrit, University of Dacca; and published by—Sures C Das, M. A.. from General Printers and Publishers Ltd., and printed by him at their works—Abinas Press-119 Dharamtala St., Calcutta; the author) (S. K. De) writes on the page 99 the third foot note as follows :—

"*The Stotra-Kavya,* named-Radha-Rasa-Sudhanidhi, printed in two parts from the Bhakti-prabha Office, Hugli 1924, 1935, is wrongly ascribed to Prabodhananda The first and the last verses of the printed text pay homage—to Chaitanya. but these verses are missingin the MSS noticed by Eggeling (India Office Catalogue, vii. pp. 1464-65), Aufrecht (Bodleian Catalogue. p. 131. No. 239) Haraprasad Sastri (Descriptive Catalogue of ASB Collection, vii, p. 230 and Notices, 2nd Series. i p 384), while the work is uniformly ascribed in these and other MSS to Hitaharivamsa, son of Vyasa. It is obviously a case of appropriation by the Chaitanya sect of a work composed by Hitaharivamsa of the Radhavallabhi sect ! *"

---

* ध्यान-पूर्वक देखिये :—

श्रीसुशील कुमार दे महाशय अपनी इसी पुस्तक " वैष्णव फेथ एण्ड मूव्हमेण्ट इन बेंगाल " (जो कि रिसर्च की पुस्तक है अर्थात् साहित्य की खोज करके यथातथ्य तत्त्व का उद्‌घाटन करने के लिये ही लिखी गई है) में और भी क्या क्या लिख रहे हैं ।

(१) पृष्ठ—७६, फुट नोट नं० १ —

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थात् 'स्तोत्र-काव्य' जिसका कि नाम "श्रीराधा-सुधा-निधि" है और जो दो भागों में 'भक्ति ऑफिस हुगली' से सन् १६२४ ई. और सन् १६३५ ई. में छपा है–गलत ढंग से प्रबोधानन्दजी का बतलाया गया है। इस छपी हुई पुस्तक के प्रथम और

"उड़ान-छू ढंग से यह भी बहुधा कहा जाता है कि वैष्णव-सम्प्रदाय के चालक श्रीवल्लभाचार्य (या वल्लभ दीक्षित) प्रयाग और पुरी में श्रीचैतन्यदेव से मिलने आये थे [चैतन्य चरितामृत, मध्य X । X, ६१–११३]। इस बात की यथार्थता प्राप्त करने के संतोषजनक कोई प्रमाण नहीं हैं। वरं श्रीचैतन्य के चरित्र (Biography) में प्रयाग और पुरी के दर्शनार्थी वैष्णव – अड़ैल गांव के एक वैदिक ब्राह्मण वल्लभ भट्ट का नाम दिया गया है। वह ब्राह्मण प्रसिद्ध आचार्य श्रीवल्लभाचार्य ही थे इसके लिये वहाँ पर कोई उल्लेख नहीं है। इस बात के प्रमाण में अनेकों प्रसङ्ग हैं, जो दे महाशय के ग्रन्थ में ही देखे जा सकते हैं।

(२) [i] पृष्ठ ३४ फुट नोट नं० ३ —

कवि कर्णपूरकृत "गौर-गणोद्देश दीपिका" नामक ग्रन्थ का सम्पादन राधारमण-प्रेस, बरहामपुर (मुर्शिदाबाद) से हुआ है। इस ग्रन्थ की निर्माण-तिथियाँ भिन्न-भिन्न प्रतियों में भिन्न-भिन्न हैं। जैसे आफ्रेक्ट केटॅलाग में शाके १४६८ है, तो एँगलिंग केटॅलाग में कुछ और ही अर्थात् शाके १४६६ है; इसी प्रकार अन्यत्र और ही कुछ है।

[ii] पृष्ठ ६७, फुट नोट नं० २ —

ऐसे ही, राधारमण प्रेस बरहामपुर (मुर्शिदाबाद) के द्वारा सम्पादित सन् १६२६ ईस्वी में प्रकाशित 'चैतन्य-चन्द्रामृत' के श्लोकों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्तिम श्लोक शब्द श्रीचैतन्य की वन्दना के हैं लेकिन ये छन्द उन हस्तलिखित प्रतियों में नहीं है, जिनका उल्लेख [१] एग्लिङ्ग (Eggeling) ने इण्डिया-आफिस केटलॉग नं० ७ पेज १४६४–६५; [२] आफ्रेक्ट (Aufrecht) ने वार्लियन

की संख्या अन्यान्य केटॅलागों के मिलान करने पर भिन्न-भिन्न प्राप्त होती है। कहीं १४१ श्लोक तो कहीं १४३ हैं। कहीं १४४ भी हैं। उनमें पाठ (Text) भी भिन्न-भिन्न मिलते हैं।

[iii] पृष्ठ ६६, फुट नोट नं० ३ —

उसी राधारमण-प्रेस के द्वारा सन् १९२१ ईस्वी में श्रीलोचनदास रचित पदों का बङ्ग-भाषा में सम्पादन हुआ है। उस पदावली में श्रीरामानन्द राय का केवल एक भक्ति-परक पद (नानो-चार-कृत-पूजन) उद्धृत किया गया है, किन्तु यह पद 'कवि कर्णपूर' के काव्य में भी दिया गया है। तिस पर मजा यह है कि साथ ही यह पद कृष्णदास कविराज-रचित श्रीचैतन्य-चरित्र (मध्य viii; ७०) में चैतन्य और रामानन्द राय के कथोपकथन प्रसङ्ग में भी दिया गया है।

यह तो हुईं राधारमण-प्रेस की बातें। अब इधर दूसरी ओर भी देखिये—

(३ [i] पृष्ठ १६६; फुट नोट १—(इसी का विवरण और भी

पृष्ठ ११७ फुट नोट ४ में भी दिया गया है।)

अभी हाल ही में "भक्ति रसामृत शेष" नामक ग्रन्थ खोजकर छपाया गया है। इसका सम्पादन बँगला भाषा में श्रीजुक्त हरिदासदास

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

केटलॉग नं० २३६ पेज १३१ में और [३] श्रीहरप्रसादजी शास्त्री ने डिस्क्रेप्टिभ केटलॉग आफ (A. S. B.) कलक्शन नं० ७ पेज २३० और नोटिसेज सेकण्ड नं० १ पेज ३८४ में किया है। इन सब और इसके अतिरिक्त हस्त-लिखित प्रतियों में यह

हरिबोल-कुटीर नवद्वीप ने सन् १९४१ ईसवी में किया है। इस ग्रन्थ को श्रीजीव गोस्वामी कृत बताया गया है और इसका रचनाकाल शाके १६१८ (शकेवस्वे कर्त्तुविधौ) सन् १६९६ ईसवी बताया गया है परन्तु श्रीजीव गोस्वामी उस समय धराधाम पर ही न थे। लगभग सौ वर्ष पूर्व ही श्रीगोलोकधाम पधार चुके थे।

इस ग्रन्थ की गिन्ती (भक्ति) रस-ग्रन्थों में कराई गई है किंतु वास्तव में यह ग्रन्थ काव्य-रस का है। इसकी रचना 'साहित्य-दर्पण', कवि कर्णपूर कृत 'अलङ्कार-कौस्तुभ' और श्रीवलदेव विद्याभूषण रचित 'ममता' की टिप्पणी 'साहित्य-कौमिदी' के अंशों को जोड़-तोड़कर की गई है। रचियता ने अन्यान्य वैष्णवों के शब्दों और भावों को तोड़-मरोड़कर अपने ग्रन्थ में भरा है। यथा—

निःशेष च्युत कन्दलम् ['ममता']

इस प्राचीन प्रसिद्ध पद्य का अपने ग्रन्थ में येन-केन प्रकारेण लाभ उठाने के लिये इस प्रकार बनाया गया है—

"सत्यं जल्पसि गोपीबन्धु जनतावञ्चि क्रियाद्यञ्चिते।
कृष्णां स्नातुं इतो गतासि न पुनस्तं गोपिका कामुकम्॥"

देख ली ग्रन्थ की वास्तविकता ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ग्रन्थ व्यास के पुत्र हित हरिवंशजी का रचित लिखा हुआ है।

यह स्पष्ट है कि यह मामला वह है, जिसमें चैतन्य सम्प्रदायवाले राधावल्लभीय सम्प्रदाय के हित हरिवंशजी द्वारा रचित एक ग्रंथ को हड़प करना चाहते हैं।"

[ii] पृष्ठ ३६५; फुट नोट १—

श्रीदे महाशय के ही शब्दों में ही पढ़िये—

"Information, however, is supplied by Srijut Haridas Das of Navdwipa that M. S. of a Brahat Krishnarchan Dipika by Jiv Goswanisiin his possession "

अर्थात् 'मुझे श्रीयुक्त हरिदास दास नवद्वीप के द्वारा सूचना प्राप्त होचुकी है कि जीव-गोस्वामी कृत 'वृहत् कृष्णार्चन दीपिका' उनके हस्तगत हो चुकी है"।

उपरोक्त विवरण-पूर्ण टिप्पणी से विज्ञ पाठक भली प्रकार समझ सकेंगे कि श्रीदे महोदय के कथन में कितनी स्पष्टता से गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय की धींगा-मस्ती नजर आ रही है। जो केवल उलटा-पलटी ही करना जानते हैं। वे यदि 'श्रीराधा-सुधा-निधि' को श्रीप्रबोधानन्द-कृत कह दें तो आश्चर्य ही क्या है? उनकी इस सज्जनता के लिये उन्हें धन्यवाद!

—भूमिका लेखक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीदे महाशय के इस, अनुसन्धान-पूर्ण लेख को पाठक देखें और श्रीचैतन्त के निर्मल यश में कलङ्क लगाने वाले उनके मतानुयायी भी। यदि उन्हें उचित जचे तो अपनी भूल का सुधार भी करलें। अब हम तीसरा प्रमाण उपस्थित करते हैं।

(३) श्री राधावल्लभीय वैष्णवों के पास श्रीराधा-सुधा-निधि की बहुत सी प्राचीन प्रतियाँ हैं जो व्यास-नन्दन श्रीहित हरिवंश कृत लिखी हैं। उनकी श्लोकं-संख्या भी दो सौ सत्तर (२७०) ही है। उनमें से कुछ प्रतियों का हम यहाँ पता दे रहे हैं; जिन्हें देखना अभीष्ट हो देख सकते हैं—

(i) श्रीबनवारीलालजी पचौरी अलीगढ़ के यहाँ सम्बत् १७५७ वि. की हस्तलिखित प्रति जो आज से २५३ वर्ष पूव की है। श्रीहित हरिवंश कृत ही है उसमें लिखा है।

(ii) श्रीबैजनाथजी बाबा (झांसी वाले) श्रीधाम बृन्दावन के पास सम्बत् १७८६ वि. की हस्त-लिखित प्रति है जो आज से दो सौ सोलह वर्ष पूर्व की है।

(iii) तीसरी प्रति श्री श्रीगोस्वामी श्रीवृन्दावनवल्लभजी महाराज शृंगार-सेवाधिकारी श्रीराधावल्लभीय सम्प्रदायाचार्य्य श्रीधाम बृन्दावन के यहाँ भी एक प्रति २५७ वर्ष की प्राचीन है।

(४) इस ग्रंथ पर श्रीराधावल्लभीय सम्प्रदाय के महात्माओं के द्वारा जो जो टीकाएँ लिखी गई हैं। उनसे भी इस सम्प्रदाय और ग्रंथ के तादात्म्य एवं इष्टता का परिचय मिलता है। हम यहाँ कुछ टीकाओं का परिचय देते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नं.	टीकाकार	टीका परिचय	टीका-काल
१	श्रीतुलसीदासजी (गोस्वामी श्रीसुखलालजी महाराज के शिष्य)	ब्रजभाषा पद्य (ह. लि.)	सं. १७७० वि.
२	श्रीसन्तदास जी (श्रीदामोदरवर जी के शिष्य)	” पद्य (ह. लि.	वि. अठारहवीं सदी
३	श्रीवृन्दावनदासजी (गोस्वामी श्रीरूपलालजी म. के शिष्य)	” ” (ह. लि.)	सं. १८२० वि.
४	श्रीनरोत्तमजी (गोस्वामी श्रीकृपालालजी म. के शिष्य)	संस्कृत प्रकाशित (श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस बंबई)	सं. १८३० वि.
५	श्रीहितदासजी (श्रीभोरी सखीजी के शिष्य)	संस्कृत अन्वय सहित पद्य ब्रज भाषा (ह. लि.)	सं. १८३२ वि.
६	श्रीहरिलालजी व्यास	संस्कृतवृहद् रसकुल्या (ह. लि.)	सं १८६०
७	”	मध्य व्याख्या (”)	पश्चात् क्रम
८	”	लघु व्याख्या (”,	शः १९०० तक
९	श्रीलोकनाथजी	ब्रजभाषा गद्य (ह. लि.)	सं. १६०० वि.
१०	श्रीबड़ैंतीलालजी	पद्य (प्रकाशित)	सं १९२८ वि.

इनके अतिरिक्त और भी टीकाएँ हैं जो स्थान-संकोच से यहाँ नहीं लिखी जा सकतीं। इन सब प्रमाणों के अतिरिक्त अब हम एक और भी अत्यंत पुष्ट प्रमाण उपस्थित करके अपनी लेखनी को विश्राम देंगे। इस प्रमाण के जोहर को भी पाठक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

देखें कि यह किस प्रकार इन षड्यंत्रकारी साहित्यिक चोरों के माया-जाल का विनाश करता है—

(५) 'प्रेम-पत्तन' नामक संस्कृत का एक बड़ा ही सुन्दर ग्रंथ है इसके रचयिता हैं श्रीश्रीगदाधर भट्टात्मज श्रीरसिकोत्तंसजी महाराज। ये श्रीगदाधर भट्टजी तत्कालीन बृन्दावनस्थ महात्मा गण श्रीहित हरिवंश महाप्रभु, श्रीस्वामी हरिदासजी, श्रीरूप-सनातनजी, श्रीप्रबोधानन्दजी, श्रीगोपालभट्ट प्रभृति रसिकों के समकालीन हैं।

उक्त ग्रंथ 'प्रेम-पत्तन' का प्रकाशन 'अच्युत-ग्रंथ-माला काशी' से सम्वत् १९८९ वि. में हुआ है। इसके सम्पादन-कर्त्ता हैं श्रीयुत श्रीकृष्ण-पन्त शास्त्री। श्रीशास्त्रीजी अपनी गवेषणा-पूर्ण भूमिका में अनेक पुष्ट प्रमाणों से श्रीरसिकोत्तंस जी का जन्म-काल सम्वत् १६५६ विक्रम निर्धारित करते हैं। जो आज से ३१० वर्ष पूर्व है। इस प्रकार 'प्रेम-पत्तन' ग्रंथ का रचना काल २५० वर्ष पूर्व ही स्वीकार करना पड़ेगा।

इस प्रेम-पत्तन ग्रंथ में ग्रंथकार ने कई स्थलों पर प्रेम-सिद्धांत की पुष्टि के लिये अनेक-अनेक महात्माओं के वाक्यों का उद्धरण दिया है। उसमें से एक प्रसङ्ग यहाँ अविकल रूप से लिखा जाता है जिससे अपने आप ही यह सिद्ध हो जाता है कि श्रीराधा-सुधा-निधि' ग्रंथ श्रीहितहरिवंशचन्द्र गोस्वामी कृत है। पाठक उसे देखें—

"यत्राधर्म एव धर्मः स्थापितः ॥ १४ ॥"

१तदुक्तं श्रीभगवतैव गीतायाम्—

"सर्वधर्म्मान् परित्यज्य मामेकं शरणंव्रज।
अहंत्वा सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२ तथैवोक्तं प्रथमे—

"त्यक्त्वा स्वधर्मं चरणाम्बुजं हरेः" इति ॥

(श्रीमद्भागवत स्क० १ अध्याय ५)

३ तथैवोक्तमेकादशे—

"देवर्षिभूतात्त नृणां पितृणामिति"।

तदुक्तं दशमे उद्धवेन—

"आसामहो चरणरेणु जुषामहं स्यां। इति"।

४ तथैवोक्तं सतीसमूह-सेवित पदाब्ज-रजोभिः श्रीव्रज-सीमन्तिनीभिः—

"यत्पत्यपत्य सुहृदामनुवृत्तिरङ्ग" इति।

५ तथा पुनस्ताभिरेवोक्तम्—

यर्ह्यम्बुजाक्ष तव पादतलं रमायाः" इति।

६ पुनरपि ताभिरेवोक्तम्—

"कास्त्र्यङ्गते कलपदायत वेणुगीत संमोहिता" इति।

७ तथोक्तं श्रीमन्महाप्रभुपादैः—

"नाहं विप्रो नच नरपतिर्नापि वैश्यो न शूद्रो,
नो वा वर्णी न च गृहपतिर्नो वनस्थो यतिर्वा।
किन्तु प्रोद्यन्निखिल परमानन्द पूर्णामृताब्धे,
गोपीभर्त्तुः पदकमलयोर्दास दासानुदासः" इति॥

८ तथैवोक्तं श्रीगोस्वामि श्रीहरिवंश महानुभावैः—

"कैशोराद्भुत माधुरीभर धुरीणाङ्गच्छविं राधिकां
प्रेमोल्लास भराधिकां निरवधि ध्यायन्ति ये तद्धियः।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

त्यक्ताः कर्मभिरात्मनैव भगवद्धर्म्मैप्यहो निर्ममाः
सर्वाश्चर्यगतिंगता रसमयीं तेभ्यो महद्भ्योनमः" इति ॥

——(श्रीराधा-सुधा-निधि)

९ तथोक्तं तैरेव—

"लिखन्ति भुजमूलयोर्न खलु शङ्ख चक्रादिकं,
विचित्र हरिमन्दिरं न रचयन्ति भाल-स्थले।
लसत्तुलसिमालिकां दधति कण्ठपीठे न वा,
गुरोर्भजन विक्रमात् क इह ते महा बुद्धयः ॥" इति

(श्रीराधा-सुधा-निधि)

१० तथोक्तं श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ति महाशयैः दानकेलि-कौमुदी टीकायाम्—

"दानकेलि कलौ लुप्त धर्म्ममर्य्यादयोर्भजे।
राधामाधवयोः काम लोभ दम्भ मदानृतम् ॥" इति

११ तथोक्तं श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती पादैः—

"कुरु सकलमधर्मं मुञ्च सर्वं च धर्मं,
त्यज गुरुमपि वृन्दारण्य वासानुरोधात्।
स तव परमधर्मः साच भक्तिर्गुरूणां,
सकल कलुष राशिर्यद्धि वासान्तरायः ॥" इति

(श्रीवृन्दावन महिमामृतम्)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१२ तथा स्कान्दे—

धर्म्मो भवत्यधर्म्मोऽपि तो भक्तैस्तवाच्युत ।
पापं भवति धर्म्मोऽपि तवाभक्तैः कृता हरे ॥" इति ।

(रेवा-खण्डे स्कान्दे)

……………………… ……………… इत्यादि ।

उक्त प्रसङ्ग में आठवें और नवें नम्बर के प्रमाण श्रीगोस्वामी श्रीहरिवंश महानुभाव के हैं । इसे प्रेम-पत्तन ग्रन्थकार लिख रहे हैं—

८ "तथैवोक्तं श्रीगोस्वामि श्रीहरिवंश महानुभावैः"—

अर्थात् 'इसी प्रकार गोस्वामी श्रीहरिवंश महानुभाव कहते हैं ।'

एवं—

६ तथोक्तं तैरेव—

अर्थात् 'फिर भी वही (गोस्वामी श्रीहरिवंश) महानुभाव कहते हैं ।'

तत्पश्चात् उनके कथन के प्रमाण में श्रीराधा-सुधा-निधि के ८३ (तिरासी) और ८४ (चौरासी) संख्या के श्लोक क्रमशः—

(८) "कैशोराद्भुत माधुरी………………………………
……………………………………………………
………………………………………… महद्भ्यो नमः" ॥

और

(६) "लिखंति……………………………………………
……………………………………………………
……………………………………… महाबुद्धयः" ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीरसिकोत्तंसजी प्रमाण रूप में उद्धृत करते हैं। अब इसमें तो कोई सन्देह ही नहीं रहा कि 'श्रीराधा-सुधा-निधि' स्तोत्र-काव्य श्रीहित हरिवंश गोस्वामी का है और श्रीप्रबोधानन्दजी सरस्वती का नहीं है। इससे प्राचीन और सम्भ्रान्त प्रमाण क्या होगा कि आज से ३०० तीन सौ वर्ष पूर्व श्रीरसिकोत्तंसजी अपनी लेखनी से 'श्रीराधा-सुधा-निधि' को श्रीगोस्वामी श्रीहरिवंश-कृत स्वीकार कर रहे हैं।

दूसरी बात पाठकों के ध्यान देने योग्य और भी है कि इसी स्थल में ग्यारहवें प्रमाण में श्रीप्रबोधानन्द पाद का श्लोक श्रीवृन्दावन-महिमामृत से उदाहरण रूप में श्रीरसिकोत्तंसजी लेते हैं। आप लिखते हैं —

११ तथोक्तं श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती पादैः—

अर्थात् 'इसी प्रकार श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती चरण कहते हैं'।

क्या कहते हैं —

कुरु सकलमधर्मं··· ··· ··· ··· ···
··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···
··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···
··· ··· ··· ···· ··· ··वासान्तरायः ॥

अब यहाँ विचारणीय केवल इतना ही है कि प्रमाणों में श्रीहरिवंश गोस्वामी और श्रीप्रबोधानन्दपाद दो महानुभावों के श्लोक अलग-अलग देकर लिखे गये हैं अर्थात् दोनों की रचनायें भिन्न-भिन्न हैं। यदि श्रीराधा-सुधा-निधि की रचना श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती पाद के द्वारा हुई होती तो जहाँ पर 'कुरु सकलमधर्मं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

...... 'प्रमाण श्रीप्रबोधानन्द पाद का दिया गया है; वहीं पर 'कैशोराद्भुत माधुरी ......' और 'लिखन्ति भुज... ' ये दोनों श्लोक भी श्रीहरिवंश महानुभाव के नाम से न लिखे जाकर श्री-प्रबोधानन्द सरस्वती महाशय के नाम लिख दिये जाते। किन्तु जब दोनों के नाम अलग-अलग देकर उनकी रचनाओं का उल्लेख किया गया हैं तब तो बिलकुल ही स्पष्ट हो जाता है कि श्रीराधा-सुधा-निधि स्तोत्र-काव्य श्रीहित हरिवंश गोस्वामि-पाद-विरचित है। श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती पाद विरचित कदापि नहीं है। इसके ज्वलन्त प्रमाण श्रीरसिकोत्तंसजी महानुभाव हैं। जिनके सम्बन्ध में सभी विद्वत्समाज एवं भक्त-समाज यह स्वीकार करता है कि अपने समय के वे एक सम्भ्रान्त विद्वान् एवं सद्भक्त ही नहीं श्री-वृन्दावन-रस के सुज्ञाता रसिक थे। मुझे यह कहने में सङ्कोच न होगा कि वे आज के कतिपय तिलकधारी वैष्णवों के समान साहित्यिक चोर और ठग नहीं थे। अथवा 'लम्बा तिलक अरु मधुरी बानी। दगाबाज की यही निशानी'॥ को चरितार्थ करने वाले गोमुख व्याघ्र नहीं थे। वे सत्य सेवी, सत्य परायण थे। यद्यपि वे भी चैतन्य-चरणानुयायी थे पर आजकल के कुछ श्रीचैतन्य-चरणानुयायियों के सदृश श्रीचैतन्य के प्रेम और नाम को कलङ्कित करने वाले नहीं, अपितु उसे शोभा, श्री और यश प्रदान करने वाले थे, अस्तु।

इस भूमिका के द्वारा मानों श्रीचैतन्य-मतानुयायी उन समस्त वैष्णवों, सन्तों एवं आचार्य्यों को सूचित किया जाता है जो श्रीराधा-सुधा-निधि के आदि-अन्त्य दो श्लोक बढ़ाकर उसे श्रीप्रबोधानन्द कृत बताने की सनक में बावले हो रहे हैं। वे अपनी नीचता से श्रीप्रबोधानन्द पाद को क्यों अपयश-पात्र बना रहे हैं। आप लोगों की इस तुच्छ एवं नीच-क्रिया का कोई सज्जन पुरुष सम्मान न करेगा अतएव प्रार्थना की जाती है कि अब भी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपनी आदतों से बाज आइये और कम से कम अपने वेश की लज्जा को तो बचाइये ? अन्यथा 'दण्डेन गो गर्दभौ' की नीति न आजाय ? साथ साथ कानूनन-कार्य्यवाही यदि इस ओर से प्रारम्भ कर दी जाय तो कोई आश्चर्य्य नहीं।

अस्तु; विज्ञजन हमारी इस अभद्रता को क्षमा करें, जो सङ्गते सङ्ग दोषेण उत्पन्न हुई। न सही शारीरिक सङ्ग, मानसिक तो हो ही गया। आप तो हमारी इन बातों को भूलकर श्रीराधा-सुधा-निधि का अवगाहन करें। इस खड़ी हिन्दी के साहित्यिक युग में श्रीराधा-सुधा-निधि जैसे रसमय काव्य का हिन्दी-अनुवाद अभी तक नहीं हो पाया था तब फिर उसे इतने सरल रूप में उपलब्ध करा देने का यह अनुवादक महोदय का प्रयत्न स्तुत्य क्यों न कहा जायगा ? अनुवाद की उत्कृष्टता तो विज्ञजन ही जानेंगे। हाँ इतना अवश्य है कि श्रीराधा-सुधा-निधि के गम्भीर रस को थोड़े शब्दों में प्रकट करने के लिये प्रायः संस्कृत-गर्भित भाषा का उपयोग किया गया है; क्योंकि भाव-व्यञ्जना के लिये इसके सिवाय और कोई गति ही नहीं थी।

इस ग्रन्थ में पूरे (२७०) दो सौ सत्तर श्लोक हैं और उनमें से प्रत्येक मूल के साथ प्रथम सङ्केत में जो कुछ कहा गया है, वह श्लोक के विषय में सहायक है और भावार्थ में मूल श्लोक का यथामति भाव-प्रकाश किया गया है। भावार्थ लिखने में अनुवादक महोदय ने जो शैली बरती है उससे मुझे ऐसी आशा है कि संस्कृत व्याकरण ज्ञान-हीन पाठकों को भी श्लोकों के मूल को समझने में पर्याप्त सहायता मिलेगी। मुझे विश्वास है कि इस टीका से हिन्दी के छोटे-बड़े सभी साहित्य-प्रेमियों को सुख एवं रस प्राप्त होगा और रसिक महानुभावों की तो यह अपनी वस्तु

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ही है । क्योंकि ग्रन्थ स्वयं 'यथा नामः तथा गुणः' है । अलमतिविस्तरेण ।

भवदीय—

ता: २२-११-१९४८ ई० श्रीवृन्दावन ।

बाबा [हित] वंशीदास
राधावल्लभीय
[हित-गढ़] बाद-ग्राम ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीराधावल्लभो जयति

गोस्वामी श्रीहित हरिवंशचन्द्र महाप्रभु
का
संक्षिप्त
जीवन-चरित्र

"स्फुरद्वदन पङ्कजः कनक-कूट देह द्युतिः,
प्रशस्त सुख-सम्पदां निधिरपूर्व मान-प्रदः ।
सकृष्ण-वृषभानुजा चरणमाधुरी-चञ्चुरः,
सदा मधुरवाक् पटुर्जयति साधु वैयासकिः ॥"

—*गोस्वामी श्रीकृष्णचन्द्र*

'अत्यन्त प्रेमोद्रेक से जिनका मुख-कमल विकसित हो रहा है, देह की मनोहर आभा स्वर्ण-शैल-वत् प्रकाशमान है, जो विशाल सुख-सम्पत्ति (प्रेम) की अपूर्व निधि ही हैं, सब को सम्मान देना ही जिनका सहज स्वभाव है; श्रीकृष्ण के सहित श्रीवृषभानु-नन्दिनीजू की चरण-माधुरी के आस्वादन में जो अत्यन्त निपुण हैं; उन, सदा-मधुरवाक्-पटु साधु-शिरोमणि व्यासनन्दन श्रीहरिवंशचन्द्र की जय हो।'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जगत में सब समय एक सी शान्ति सुख और आनन्द का साम्राज्य रहा आवे, प्रायः ऐसा सम्भव नहीं है। देखा यही जाता है कि कभी दुःख, अशान्ति, अज्ञान, अधर्म और दुराचार बलशाली बन जाते हैं, तो कभी सुख, शान्ति, ज्ञान, धर्म और सदाचार का साम्राज्य छाया रहता है; क्योंकि यही स्वाभाविक पद्धति है। इसी नियम के अनुसार भारत ने चौदहवीं पन्द्रहवीं शताब्दी में आज की तरह किसी घोर अशान्ति का अनुभव किया था। उस समय यवनों के अत्याचार ने सनातन धर्म की पताका ही उखाड़ फेंकने की सोच रखी थी। सरे बाजार हिन्दू-बधुओं की मर्य्यादा-प्रतिष्ठा हाथों-हाथ लूट ली जाती थी। लाखों नहीं करोड़ों हिन्दू केवल तलवार के बल मुसलमान बना डाले गये थे और नित्य-प्रति बनाये जा रहे थे। उस भीषण सङ्कट में हिन्दुओं के त्राता हुए थे, तो केवल सन्त-महात्मा ही। उस समय भारत के कोने-कोने में सन्त-महात्मा पुरुषों का प्रादुर्भाव हुआ था और उनके भक्ति-ज्ञान के तुमुल घोष ने यवन एवं अधार्मिक गीदड़ों को भयभीत करके कन्दराओं में छिपा दिया था।

बङ्ग और कलिङ्ग को कलि-पावनावतार श्रीकृष्ण-चैतन्य और नित्यानन्द प्रभु ने सरस श्रीकृष्ण-भक्ति से अभिसिञ्चित कर दिया तो उत्तर भारत को श्रीरामानन्द, कबीरदास, तुलसीदास और उनके अनुयायी सन्तों ने। पश्चिम में मीरा, नरसी और पीपा आदि अनेकों भक्तों ने श्रीहरि-भक्ति का प्रचार किया, तो दक्षिण में श्रीज्ञानेश्वर, एकनाथ, तुकाराम आदि भक्तों ने। कहना न होगा कि काश्मीर से कन्या कुमारी और सौराष्ट्र से बङ्ग तक सारा भारत प्रेमी सन्त-महात्माओं से चमत्कृत हो उठा। जबकि सब ओर भक्ति-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भाव की विजय दुन्दुभि बज रही थी, तो फिर श्रीवृन्दावन ही अपनी प्रेम-वीणा के सुतारों को क्यों न झङ्कृत करता ? जिसके लिये भगवान् वेद-व्यास के कहा है—

"धन्यं वृन्दावनं तेन भक्तिर्नृत्यति यत्र च" ।

अर्थात् "अहो ! यह बृन्दावन ही धन्य है, जहाँ भक्ति सदा नाचती रहती है !"

बृन्दावन रसिक-प्रेमियों का मीना-बाजार बन चुका था। एक ओर श्रीचैतन्य-चरण-चञ्चरीक श्रीरूप-सनातन, गोपाल-भट्ट, लोकनाथ, रघुनाथ आदि बङ्गदेशीय भक्तों की टोली थी, तो दूसरी ओर रसिकानन्य नृपति स्वामी श्रीहरिदासजी और उनके अनुयायी प्रेमियों के सहित रसिक चक्र-चूडामणि आचार्य्य श्री-हित हरिवंशचन्द्र महाप्रभु की हित (प्रम) रस-मत्त अनन्य सभा। यही श्रीहित हरिवंशचन्द्र तत्कालीन समस्त बृन्दावन के रस और रसिकों के एकमात्र प्राणाधार थे। जैसा कि श्रीव्यासजी ने कहा है—

'हुतौ रस रसिकन कौ आधार ।
बिनु हरिबंसहिं सरस रीति को कापै चलिहै भार ॥'

अस्तु; अब पाठक अपने आपको प्रेम-रस-कमण्डलु श्री-ब्रज-मण्डल में ले चलें। वह देखिये भक्ति-मधु-पूरित मधुपुरी के निकट ही बाद-ग्राम का विशाल एवं उच्च भू-भाग दृष्टिगोचर हो रहा है। बहुत ऊँचे पर एक धवल प्रसाद है। उसके आस-पास अनेकों सुन्दर-सुन्दर भवन शोभा पा रहे हैं। कहीं-कहीं शिविर भी दीख पड़ते हैं। प्रासाद के उत्तर-पूर्व कोण पर एक विशाल सरोवर अपनी उत्ताल तरङ्गों से मानो वायु के साथ प्रेम-क्रीड़ा कर रहा है। सरोवर चारों ओर सुन्दर सोपानों से सुबद्ध है। चतुष्कोणों पर चार बड़े-बड़े बुर्ज और घाटों के बीच-बीच में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri
...ग्रन्थालय, भरतनिधि, करौंदी वाराणसी-5

छतरियाँ बड़ी ही भली मालूम पड़ती हैं। सरोवर का निर्मल जल; लाल, पीले, सफेद और नीले कमलों की परछाँई और पत्रों की हरीतिमा से अनुरञ्जित होकर बहु रङ्ग-पन को धारण कर चुका है। तटवर्त्ती विस्तृत सघन विटपावली वन को श्री प्रदान कर रही है। सुहावनी वसन्त की ऋतु है।

विक्रमीय सम्वत् १५५६ माधव-मास की शुक्ल-पक्षीय एकादशी का प्रातः काल है। यद्यपि गगन-गामी चन्द्रदेव अस्ताचल को जा चुके हैं, तथापि ज्योत्सना अभी अन्तर्हित नहीं हुई है; क्योंकि इस गगन-चन्द्र से भी अत्यन्त विलक्षण प्रेम-चन्द्र—हितचन्द्र का उदय होने जा रहा है; बस; इन्हीं प्रेम-चन्द्र का यह प्रकाश है। इसलिये समीरण ने भी सेवा का सुन्दर सुयोग देखकर जाने कौनसा मादक भार लेकर मन्थर-मन्थर गति से गमन प्रारम्भ कर दिया है। सम्भव है, आज इसके भी मन में श्रीव्याजी के महल में बधाई देने की आयी है; तभी तो यह मन्द-गामिनी प्रातः काल से ही चल पड़ी है कि जन्मोत्सव के सुअवसर पर तो पहुँच ही जाऊँगी ?

आज प्रातः-काल से ही श्रीव्यासजी के महल में ब्रज-(बाद) वासियों की अपार भीड़ एकत्र है। आनन्दमय कोलाहल से सम्पूर्ण प्रासाद मुखरित हो रहा है। ब्रज वासी आनन्द में डूबे हुए एक दूसरे पर दही, हल्दी, केशर की पङ्क छिड़कते और नाचते हुए गाते जाते हैं—

'भैया हो अद्भुत मङ्गल आजु।'

एक ओर वृद्ध, बालक और युवकों का आनन्द-नृत्य, तो दूसरी ओर सुन्दरी ब्रज-बालाओं का कोकिल गान। सब के मनों में आनन्द समाता नहीं। ग्राम से व्रज-नारियाँ मनोहर-मनोहर थालों में माङ्गलिक द्रव्य सजा-सजाकर यूथ की यूथ व्यास-महल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में आती हैं और सूतिका-गृह में जाकर बालक की माता श्रीतारा-रानी को आनन्दित करती हुई कहने लगती हैं— "रानीजू ! बधाई है ! बधाई है !! "

नव-जात शिशु की गौर-मुख-कान्ति और कुन्तल केश-राशि को देखकर जकी सी, थकी सी और पगली सी हो जाती हैं। परस्पर में कहने लगती हैं— " सखि ! ऐसा अनूप रूप तो कहीं देखा ही नहीं ! " तब तक दूसरी कह उठती है— " हाँ, बीर ! देख तो सही हमारी रानी ने कैसा सुन्दर पूत जाया है ?" तीसरी बालक के रूप-सौन्दर्य्य पर मुग्ध होकर कहने लगती है— " सखि ! ऐसा मन करता है, इस बालक को उठाकर अपने घर ही क्यों न ले चलें, ताकि इस रूप के दर्शन का निरन्तर अवसर मिलता रहे ?

इस प्रकार तरह तरह के प्रेममय वाक्यों से विनोद करती हुईं वे तारा रानी को बधाई देती हैं। उनके इस विनोद का रानी के पास एक ही उत्तर है— " अरी बहिनो ! यह सब तुम्हारे दर्शन का ही तो पुण्य-प्रताप है; नहीं तो हमारी इस अन्तिम अवस्था में यह सुख कहाँ था बीर ! "

आनन्द के अन्धेर ने कितनी देर कर दी है, किसी को इसका पता तक न चला । केशर, दही, दूध, और इत्र-फुलेल की तो कीच मच गयी। व्यासजी द्रव्य, वस्त्र, आभूषण लुटाने में इतने तन्मय हो गये कि उन्हें अपने आप की भी सुधि-बुधि न रह गयी। सूर्य देव मध्य गगन में पहुँच चुके हैं।

ब्रज-वासियों के सहित श्रीव्यासजी ने स्नान किया और बालक का जात-कर्म संस्कार सम्पन्न हुआ। चारण, भाट और बन्दी-जनों ने मनमानी भेंटें पाई। पण्डित, ब्राह्मण और ज्योतिषियों के मन हरे-भरे हो गये। इसके पश्चात् जन्म के छठे दिन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

छट्ठी देवी की पूजा की गई और बालक का नाम करण किया गया। हमारे चरित्र-नायक का परम रसमय नाम हुआ—'हरिवंशचन्द्र।'

इसका संक्षिप्त परिचय आपके ही प्रिय शिष्य श्रीसेवक (दामोदर) जी अपने स्वरचित ग्रंथ में इस प्रकार देते हैं—

"मथुरा मण्डल भूमि आपनी;
तहाँ वाद प्रगटे जगधनी।
भनी अवनि वर आप मुख॥
शुभ वासर शुभ ऋक्ष विचार;
माधव मास व्यास उजियार।
नारिनु मंगल गाइयो॥
तारा जननि जनक ऋषि व्यास;
... ...
दुलरावत बोलत मृदुहास।
व्यास मिश्र कौ लाड़िलौ॥"

अस्तु; श्रीहरिवंशचन्द्र के पिता श्रीव्यासमिश्र नौ भाई थे। उनमें सबसे बड़े श्रीकेशवदासजी संन्यास ग्रहण कर चुके थे और उनके संन्यासाश्रम का नाम था—श्रीनृसिंहाश्रमजी। इन्हीं श्रीकेशवदासजी के लघु भ्राता श्रीव्यासमिश्र को श्रीहरिवंशचन्द्र के पिता होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इन सब भाइयों के बीच में केवल एक यही श्रीव्यास-कुल-दीपक थे, अतएव सब कुटुम्ब भर के लिये प्राणों से अधिक प्रिय थे और इसीलिये आपका लालन-पालन भी बड़े लाड़-चाव से हुआ। हरिवंश के सुन्दर मुख को देख देखकर तारा और व्यास अनिर्वचनीय सुख का आस्वादन करते। तप्त-काञ्चन सा गौर-वर्ण, गोल गोल मन मोहन चन्द्रमुख और उस पर चारों ओर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

फैली हुई काली केशराशि भ्रमर-माला को भी लज्जित कर देती है। विशाल भाल पर केशर की खौर और कस्तूरी का तिलक श्रीमुख की शोभा को मानों द्विगुणित कर देता है। तारा रानी ने कमल-दल सदृश विशाल लोचनों में श्याम-कज्जल आँज दिया है और ललाट में बड़ा सा बेढब बैंदा रख दिया है, बड़ी ही अनूप रूप-माधुरी है। जब आप किलकारी देकर बकैंया दौड़ते हैं, तब तो हठात् सबके चित्तों का अपहरण कर लेते हैं। जब मुसकाते हैं तब छोटे-छोटे दो दाँत लाल-लाल अधरोष्ठों के बीच से चमक उठते हैं। सुन्दर सुगठित शरीर पर पीत रँग की झँगुली, हाथों और पाँवों में सुन्दर कड़े एवं कटि-भाग में करधनी खूब ही फब रही है। इस छवि को निहारने के लिये व्यासजी के यहाँ व्रज-बालाओं की खासी भीड़ लगी रहती है। बालक को गोद में लेकर कोई कहती हैं—"हरि! लल्ला!! राधा तो कह ?' बस 'राधा' नाम सुनते ही आप जोर से किलकारी देकर हँसने लगते हैं। इस सुख का अनुभव करके तारा और व्यास अपने आपको धन्य-धन्य मानते रहते हैं। क्यों न मानें, ठीक भी तो है, जिनके घर स्वयं प्रेम रूपी वंशी बाल-क्रीड़ा कर रही है, उन माता-पिता से बढ़कर सौभाग्यशाली और कौन होगा ?

केवल छः मास की ही अवस्था में आपने पलने पर पौढ़े हुए 'श्रीराधा-सुधा-निधि'[1] स्तव का गान किया, जिसे आपके ताऊ श्रीनृसिंहाश्रम जी[2] ने लिपिबद्ध किया। इस

---

१. प्रमाण है — षाण्मासिक कृत श्रीमद्राधारस-सुधा-निधिः
—श्री हरिवंश शतनाम।

२. श्री स्वामी नृसिंहाश्रम जी बालक हरिवंश के जन्म के पूर्व ही उसके प्रभाव से परिचित हो चुके थे, अतएव जन्म होने पर दर्शन की इच्छा से आये हुए वहीं ठहरे थे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रकार के चमत्कार पूर्ण कार्य अवश्य जन-साधारण के लिये आश्चर्य्य-जनक होते हैं, तथापि महा-पुरुषों की जीवन-लीलाओं में इस प्रकार के कार्य्यों का होना स्वाभाविक है। कौन विश्वास करेगा कि श्रीचैतन्य महाप्रभु ने एक क्षण में ही आम की गुठली से आम का वृक्ष तैयार कर दिया तुरन्त ही सबके देखते-देखते उसमें फल भी लग आये, पश्चात् दूसरे क्षण पकने पर भक्तों ने उन्हें प्रसाद रूप से पाया भी। तार्किकों की बात दूसरी है, किन्तु श्रद्धालु और विश्वासी व्यक्ति के लिये यह कोई आश्चर्य्य की चीज नहीं।

ब्रज में पूरे छः मास रहकर श्रीव्यास मिश्र अपनी राजधानी देव-वन में आ गये, क्योंकि आप उस समय के बिजनौर-नरेश महाराज कीर्त्तिचन्द्र के पूज्य गुरुदेव थे और इसीलिये कीर्तिचन्द्र ने आपको देव-वन के आस-पास की पाँच-हजारी जागीर सेवा में भेंट की थी।

सबको बाल-केलि रस का आस्वादन कराते हुए जब हरिवंश की अवस्था कुछ बड़ी हुई, तब आप एक दिन अपने साथी बालकों के साथ बाग में खेलने गये। वहाँ आपने दो गौर-श्याम बालकों को श्रीराधा-मोहन के रूप में सुसज्जित किया, तरह-तरह के पुष्पों से उनका शृङ्गार किया। फिर कुछ देर पश्चात् दोनों का शृङ्गार बदल कर श्रीराधा को मोहन और मोहन को राधा रूप में सुसज्जित किया। अब इस प्रकार वेष-भूषा अदल-बदल करने का एक खेल सा करने लगे।

सवेरे का समय था। इधर श्रीव्यासजी ने अपने सेव्य श्रीराधाकान्तजी को स्नान कराके शृङ्गार कराया और मुग्ध होकर युगल-छवि का दर्शन करने लगे। उसी समय मानों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उनकी आँखों ने बड़ा भारी कोई धोखा खाया है वे आश्चर्य में भरकर फिर-फिर आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगे। अरे! यह क्या ? राधा रूप में श्रीकृष्ण और श्रीकृष्ण रूप में श्रीराधा! उन्होंने सोचा, वृद्धावस्था भी बड़ा पाप है, स्मृति का विनाश हो जाने से अब सेवा में भी भूलें हो जाया करती हैं। क्षमा-याचना पूर्वक उन्होंने फिर शृङ्गार को सुधारा। सुधारा क्या, वहाँ तो फिर भी कुछ नया कार्य हो रहा है। सुधारा हुआ शृङ्गार भी बदला जा रहा है। व्यासजी घबरा उठे। व्याकुल होकर मन्दिर के बाहर आ गये। सहसा सामने बाग में दृष्टि गई। देखा हरिवंश बालकों के साथ खेल-खेल में वही सब कर रहा है, जो मेरे श्रीठाकुरजी के स्वरूप-परिवर्त्तन सा ही है। अब उन्हें निश्चय हुआ कि यह बालक साधारण बालक ही नहीं अपितु एक महापुरुष है। उन्होंने मन ही मन उन्हें प्रणाम किया और हरिवंश को खेल से निवारण कर घर भेज दिया।

इसी प्रकार एक बार हरिवंश ने अपने बाग के दो वृक्षों को नील-पीत पुष्प-मालाओं से सुसज्जित करके युगल-किशोर की भावना में भरकर बहुत से फल-दल भोग रखे। उसी समय श्रीव्यासजी ने अपने सेव्य प्रभु को मोदक भोग रखे थे, किन्तु भोग अनवसर के अवसर में उन्होंने देखा कि मोदकों के साथ अनेकों दोने फल-दलों से भरे हुए थाल में रखे हैं। उन्हें आश्चर्य के साथ-साथ पूर्व घटना की स्मृति हो आई। खोज करने पर उनका अनुमान सत्य निकला। इस घटना से भी व्यासजी पर कम प्रभाव न पड़ा।

बचपन में ही ऐसे दिव्य चमत्कारों को देखकर समस्त नगर-वासियों को इनके महापुरुषत्व पर पूर्ण विश्वास हो गया। इस प्रकार की अनेकों लीलाओं का प्रकाश करते हुए अब

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आपकी अवस्था पाँच वर्ष की हो चुकी थी। एक दिन आप खेल खेल में ही बाग के पुराने सूखे कुए में सहसा कूद पड़े। आपके कुए में कूद जाने से मित्रों, नगर-वासियों को अपार दुःख हुआ। श्रीव्यास- तारा और कुटुम्बी-जनों का विषाद तो कुछ कहा ही नहीं जा सकता। व्यासजी तो शोकाकुल होकर उसी कूप में कूदकर प्राण-त्याग करने के लिये ही तत्पर हो गये, किन्तु लोगों ने जबरदस्ती पकड़ कर रखा।

कुछ ही क्षणों के पश्चात् लोगों ने देखा अकस्मात् कुए में एक दिव्य प्रकाश फैल गया है और हरिवंश श्रीश्यामसुन्दर के मञ्जुल विग्रह को अपने कोमल कर-कमलों में सम्हाले हुए कुए से ऊपर अपने आप उठते चले आ रहे हैं। आपके ऊपर आते ही कूप निर्मल-जल से परिपूर्ण हो गया है। लोगों एवं माता-पिता के आनन्द का पारावार न रहा। श्याम-सुन्दर की मन-मोहन छवि का लोग अतृप्त भाव से पान कर रहे थे। चमकता हुआ पीताम्बर, मन मोहक वनमाल, मञ्जुल नूपुर और क्षीण कटि में नादित मेखला बड़ी ही सुहावनी लग रही थी। वक्षस्थल पर नाना मणिमुक्ता-गुम्फित हार और बाहुओं के वलय, कङ्कणादि आभूषण हठात् मन का आकर्षण कर रहे थे। कोटि-कोटि-चन्द्र विनिन्दक मुख-कमल के चारों ओर लहराती काली-काली कुन्तल माला, भ्रमर-माला का भ्रम उत्पन्न करती थी। तोते जैसी पैनी नासिका, लाल-लाल कोमल अधर, कपोल और कर्णों की छवि निहारते ही बनती थी। ललाट-पटल पर केशर की खौर और ललित पत्रावली दर्शकों के प्राणों को विवश कर रही थी। और फिर इतने पर भी प्रेम-प्रलय-कारी लीला-पूर्ण चितवन और ललित भ्रू-भङ्ग-विलास ? आह ! कुछ कहने की बात नहीं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अस्तु; श्रीठाकुरजी राजमहल में सादर लाये गये और उनकी प्रतिष्ठा बड़े समारोह से की गई। उनका परम रसमय नाम रखा श्रीहरिवंश ने श्रीनवरङ्गीलालजी। अब हरिवंश श्रीनवरङ्गीलालजी की ही सेवा पूजा में मग्न रहने लगे।

इसके कुछ ही दिनों पीछे श्रीराधिकाजी ने आपको दर्शन देकर अपनी रस-भावना-पूर्ण सेवा-पद्धति बताई और मन्त्र-दान करके इन्हें शिष्य रूप में स्वीकार किया। इस प्रसङ्ग का वर्णन करते हुए गोस्वामीपाद श्रीजतनलालजी महाराज ने लिखा है—

"करत भजन इक दिवस लाड़िली छवि मन अटक्यौ।
रूप-सिन्धु के माँझ पर्‌यौ कहुँ जात न मटक्यौ॥
विवश होइ तब गये भये तनु प्यारी हरि कैं।
झुके अवनि पर सिथिल होइ अति सुख में भरि कैं॥
कृपा करी श्रीराधिका प्रगट होइ दर्शन दियौ।
अपने 'हित' कौं जानिकैं हित सौं मंत्र सु कहि दियौ॥"

अस्तु; इसके उपरान्त आठ वर्ष की अवस्था में उपनयन-संस्कार और विद्याध्ययन प्रारम्भ हुआ और सोलह वर्ष की अवस्था होने पर श्रीव्यास मिश्र ने आपके अनुकूल सुशीला एवं कुलीन कन्या श्रीरुक्मिणी देवी के साथ आपका विवाह किया। जिनसे समय-समय पर क्रमशः श्रीवनचन्द्र, श्रीकृष्णचन्द्र श्रीमती साहिब दें और श्रीगोपीनाथ प्रभु ने जन्म ग्रहण किया।

पिता और माता के गोलोक-वासी हो जाने पर आप पैतृक जागीर, गृह, सम्पत्ति, पुत्र, स्त्री आदि का परित्याग करके श्रीवृन्दावन के लिये विदा हुए। उस समय आपने अपने सेव्य श्रीरङ्गीलालजी की सेवा-परिचर्य्या अपने पुत्रों को प्रदान की।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो आज भी तृतीय पुत्र श्रीगोपीनाथ प्रभु के वंशजों के द्वारा देववन में हो रही है। आपके वियोग से कुटुम्बियों और भक्तों को अपार दुख हुआ।

मार्ग में चिड़थावल नामक एक ग्राम है। वहाँ आत्मदेव नामक एक भगवद्भक्त ब्राह्मण निवास करते थे। उनकी दो कन्याएँ थीं, और उस समय श्रीराधावल्लभजी इन्हीं भक्तराज से अपनी श्रीअङ्ग-सेवा ले रहे थे। रात्रि में श्रीठाकुरजी ने उन्हें स्वप्न में आदेश दिया कि 'देव वन के श्रीहित हरिवंशचन्द्र गोस्वामी श्रीवन जा रहे हैं। ये रसिक प्रेमी महात्मा हैं। तुम इन्हें अपनी दोनों कन्याएँ विवाह दो, और मेरी सेवा भी उन्हें सौंप दो। मैं अब उनके साथ श्रीवृन्दावन जाऊँगा'।

प्रातःकाल स्वप्न की आज्ञानुसार आत्मदेवजी श्रीहरिवंश महाप्रभु की बाट जोहने लगे। सवेरा होने पर प्रभु का चिड़थावल आगमन सुनकर आत्मदेव परम प्रसन्न हुए और उन्होंने अपने स्वप्न की सारी बात प्रभु से कह सुनायी। श्रीहित प्रभु ने भी श्रीस्वामिनीजी की इच्छा जानकर उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। शीघ्र ही विवाह-व्यवस्था हुई और विवाह कराके आप अश्व, रथ, गज, सेवक और प्रचुर द्रव्य के सहित श्रीवन के लिये विदा हुए। आगे-आगे ठाकुर श्रीराधावल्लभलालजी महाराज की पालकी चल रही थी और पीछे-पीछे प्रभु अपने सेवक और पत्नियों के सहित पैदल ही श्रीवन के लिये चल रहे थे। मार्ग में विश्राम करते हुए लगभग दो मास के पश्चात् आप अपने परिकर सहित श्रीवृन्दावन आ पहुँचे।

आपके श्रीवन में प्रवेश करते ही दर्शनार्थियों की अपार भीड़ एकत्र हो गई। बात की बात में कुटियों और शिविरों की व्यवस्था हो गई। यमुना-तट पर मदन-टेर नामक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थान में श्रीराधावल्लभजी ने प्रथम निवास किया। इसके पश्चात् प्रभु ने भ्रमण-पूर्वक श्रीबृन्दावन का दर्शन किया और सबको दर्शन लाभ कराते हुए, प्राचीन एवं गुप्त सेवा-कुञ्ज, रास-मण्डल, वंशीवट और मानसरोवर इन चार स्थलों का प्राकट्य किया। तब से प्रभु सेवा-कुञ्ज के ही समीप कुटियों में निवास करने लगे और श्रीराधावल्लभजी का प्रथम पाटोत्सव (प्रतिष्ठा का उत्सव) इसी स्थल पर हुआ।

दोनों पत्नियों में से प्रथम श्रीकृष्ण दासी और द्वितीय श्रीमनोहरी दासी को क्रमशः श्रीराधावल्लभजी की पुष्प-सेवा और दूसरी को सन्त-सेवा प्रदान की गयी। आप स्वयं भजन-भावना और श्रीजी की सेवा में तल्लीन रहने लगे।

आपकी रसिकता और सेवा-भावना का यशः-सौरभ शीघ्र ही सब ओर फैल गया और श्रीस्वामी हरिदासजी महाराज आपसे मिले। दोनों में अभिन्न प्रेम-सम्बन्ध स्थापित हो गया। आप श्रीस्वामीजी के लिये प्राणों से भी अधिक प्यारे हो गये और इसी प्रकार आपके लिये श्रीस्वामीजी महाराज।

आपके प्रेम-सौरभ से आकर्षित रस-लोलुप भ्रमर भक्त-गण आ-आकर एकत्र होने लगे; और आपको पाकर अपने आपको कृतार्थ मानने लगे। महात्मा श्रीनवलदासजी की कृपा से ओरछे के राज-पुरोहित एवं गुरु, श्री हरिराम-जी 'व्यास' आकर आपके शरणापन्न हुए। अपनी कृत-कृत्यता का वर्णन करते हुए उन्होंने स्वयं ही कहा है—

"उपदेश्यौ रसिकन प्रथम, तब पाये हरिवंश।
जब हरिवंश कृपा करी, मिटे व्यास के संश॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

व्यास भक्ति को फल लह्यो वृन्दावन की धूरि ।
श्रीहरिवंश प्रसाद तें पाई जीवन-मूरि ॥

और भी—

अब हम वृन्दावन धन पायौ ।
चरन-शरन दीन्हों मन राधे श्रीहरिवंश बतायौ ॥
सोयो हुतौ विषय मंदिर में हितगुरु टेरि जगायौ ।
अब तौ 'व्यास' विहार बिलोकत शुक नारद मुनि गायौ ॥

श्रीहित हरिवंशचन्द्र को गुरु-रूप में प्राप्त करके श्री व्यासजी को परम सुख और शान्ति का अनुभव हुआ। वे जिस रस के समुद्र में डूब गये; उसका ही मानो लक्ष्य कराते हुए अपने श्रद्धेय गुरु-चरण का स्वरूप वर्णन करते हैं—

"पैनी छवि कोउ कवि न बखानैं ।
जीभ कुकात प्रीति कहिबे कौं व्याकुल होत अयानैं ॥
अति अगाध रस-सिन्धु माधुरी वेई पै कहि जानै ।
ताकौ वार-पार नहिं पावत बिधि शिव शेष धरत श्रुति ध्यानै ॥
कोटि-कोटि जयदेव सारिखे कहत सुनत न अघानै ।
'व्यास' आस पुजवै को मन की श्रीहरिवंश समानै ॥"

आपके श्रीवन-आगमन के अठारह वर्ष पूर्व ही काशी-निवासी दण्डी स्वामी श्रीप्रबोधानन्दजी सरस्वती श्री-श्रीकृष्ण-चैतन्य महाप्रभु की कृपा से सम्पन्न होकर भक्त-रूप में श्रीवृन्दावन आ चुके थे। श्रीहित-प्रभु के श्रीवन आने के पश्चात् प्रभु के सुयश-सौरभ ने श्रीसरस्वती-जी को भी उन्मत्त बना दिया और वे श्रीहित महाप्रभु की रसमयी प्रीति-प्रणाली का रहस्य समझ कर अपने लोभ का संवरण न कर सके। फलतः उन्होंने प्रभु के परम

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भक्त श्रीपरमानन्ददासजी के द्वारा प्रभु से मिलने की उत्कण्ठा का सन्देश कहला भेजा। इस पर श्रीहित प्रभु ने विनम्रता-पूर्ण प्रत्युत्तर भेज दिया कि 'हम तो गृहस्थी हैं। वे त्यागी-विरागी महात्मा हैं। उनसे मिलकर सत्सङ्ग करने की हममें योग्यता ही कहाँ है?'

प्रभु के इस उत्तर से स्वामीजी समझ गये कि महाप्रभु को हमसे मिलने में किसी न किसी प्रकार का सङ्कोच अवश्य है। अब उन्होंने एक दूसरी युक्ति सोची और अपने हृदयोद्गारों का मार्मिक चित्र एक श्लोक में खींच कर प्रभु-चरणों में भेजा। उसमें लिखा था—

"मुग्धो मुञ्ज महाटवीमुपगतो भ्रान्त्या हताशोऽभ्रमन्,
लब्ध्वाध्वा निज वन्धुनैव मरुतात्वद्गन्ध सम्बन्धिना।
आयातो भवतोन्तिकं कथमपि प्रौढाशया तर्पितो,
भृङ्गः कां गतिमेति जीवन जने हन्त त्वयोपेक्षितः॥"

अर्थात् "एक भ्रमर मुञ्ज के कँटीले वन में भटकता-भटकता अत्यन्त हताश और दुःखी हो गया। सौभाग्य वशतः उसने कहीं अपने प्रियतम कमल की सुगन्ध मरुत-संयोग से प्राप्त कर ली, और सुगन्ध की डोर से लगा हुआ वह भ्रमर कमल के निकट भी आ पहुँचा। किन्तु हाय! हाय!! कमल ने देखते ही उस भ्रमर की उपेक्षा कर दी। [प्रभो! अब आप ही बतावें,] उस अत्यन्त तृषातुर, उपेक्षित भ्रमर के जीवन की गति क्या होगी? [अरे! उस भ्रमर का जीवन ही तो मेरा जीवन है।"]

पत्र को पढ़ते ही प्रभु का हृदय द्रवित हो गया और वे उसी समय स्वामीजी से मिलने के लिये भेंट-सामग्री

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लेकर कुटिया के बाहर आये। प्रभु ने गृहस्थी धर्म के अनुसार कुछ अनुनय-विनय सी की। इस पर श्रीप्रबोधानन्दजी को बड़ी लज्जा सी प्रतीत हुई। उन्होंने लजाते हुए प्रभु से कहा—'प्रभो! अब इस प्रकार आप मेरी वञ्चना न करें, मैं प्रभु क पास सम्मान-प्राप्ति की इच्छा से नहीं वरं कृपा-प्राप्ति की इच्छा से आया हूँ। मुझपर अब प्रभु-चरणों की कृपा होनी चाहिये।'

श्रीप्रबोधानन्दजी की इस प्रार्थना को सुनकर प्रभु ने उन्हें अपनी कृपा से अभिषिक्त किया और अपनी निकुञ्जोपासना का मर्म समझा कर निरन्तर श्रीवन में वास करने की आज्ञा प्रदान की। प्रभु की आज्ञानुसार प्रबोधानन्दजी आजीवन श्रीवन में ही रहकर जीवन का आनन्द लेते रहे और इसी काल में आपने 'श्रीवृन्दावन महिमामृतम्'[1] काव्य-ग्रंथ की रचना भी की। जो अपनी माधुरी और रस-विशिष्टता के लिये उसी समय प्रसिद्ध हो गया।

श्रीप्रबोधानन्दजी की श्रीहिताचार्य प्रभु पर जो निष्ठा और प्रीति थी, उसी से प्रेरित होकर उन्होंने श्रीआचार्य-चरणों में एक अष्टक भी भेंट किया था, उसका कुछ अंश इस प्रकार है—

त्वमसि हि हरिवंश श्यामचन्द्रस्य वंश,
परम रसद नादैर्मोहिताशेष विश्वः।
अनुपम गुणरत्नैर्निर्मितोऽसि द्विजेन्द्र,
मम हृदि तव गाथाऽश्चित्र लेखेव लग्नाः ॥१॥

१—'श्रीवृन्दावन-महिमामृतम्' ग्रन्थ के पूरे सौ शतक हैं। उनमें से अभी तक कुल सत्रह ही उपलब्ध हैं। सुना जाता है कि श्रीवृन्दावन में श्रीराधावल्लभीय-सम्प्रदायाचार्य्य किन्हीं गोस्वामीजी महाराज के पास पूरे सौ शतक भी हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थात् 'हे हरिवंशचन्द्र ! निश्चय ही आप श्यामचन्द्र श्रीकृष्ण की वंशी हैं। जिसने अपने परम रसद नाद से समस्त विश्व को विमोहित कर लिया था। हे द्विजेन्द्र ! आपकी अनुपम गुण-निर्मित गाथा अभी भी मेरे हृदय में चित्र की भाँति अङ्कित है।

द्विज कुमुद कदम्बे चन्द्रवन्मोदकस्त्वं,
मुहुरतिरस लुब्धालीन्द्र वृन्द प्रमत्ते।
अतुलित रसधारा वृष्टिकर्त्तासि नादै—
र्विलसतु मम बाधा मूर्द्धि नजिष्णोरिवास्त्रम्॥

अर्थात् 'प्रभो ! आप द्विज-कुमुद-समुदाय को चन्द्र के समान मोद-प्रद हैं। आप लुब्ध एवं प्रमत्त अलीन्द्र-वृन्द को बारम्बार रति-रस (श्रीयुगल किशोर के प्रेम-रस) का दान करते हैं। आप अतुलित रस-धारा-वृष्टि-कर्त्ता रूप से विराजमान् हैं। भगवन् ! आप मेरी समस्त महान-महान् बाधाओं को अर्जुन के अस्त्र की भाँति दूर करने की कृपा करें।'

अस्तु; श्रीहिताचार्य प्रभु उस समय श्रीवृन्दावन-रसिक-समाज के अग्रणी और प्राण-स्वरूप थे। आपकी चर्य्या सबके लिये आदर्श, प्रभु-सेवा मय, एकान्तिक और निष्पृहता पूर्ण-थी। कभी किसी से कुछ भी याचना न करना, आपका यह अखण्ड व्रत था। अपनी रसमयी भावना युगल-किशोर के नित्य-विहार सुख में डूबे रहना, बस यही इनके सुख की सीमा थी। राजसी-तामसी पुरुषों को तो आपका दर्शन तक नहीं हो पाता था। वैराग्य के तो मानो मूर्त्तिमान् रूप ही थे। कहते हैं किसी धनिक के मन्दिर बनवा देने की प्रार्थना करने पर आपने यह उत्तर दिया था—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'तैं भाजन कृत जटित विमल चन्दन कृत इंधन।
अमृत पूरि तेहिं मध्य करत सरसप खल रिंधन॥
अद्भुत धर पर करत कष्ट कंचन हल वाहत।
वारि करत पावारि मंद बोवन विष चाहत॥
(जै श्री) हित हरिवंश विचारि कै मनुजदेह गुरुचरण गहि।
सकहि तौ सब परपंच तजि कृष्ण कृष्ण गोबिन्द कहि॥'

आपके विशेष कृपापात्रों में श्रीहरिरामजी व्यास, स्वामी श्रीप्रबोधानन्दजी सरस्वती, श्रीस्वामी हरिदासजी, राजानरवाहनजी, प्रभृति रसिकों की गणना की जाती है। वैसे तो उस समय वृन्दावन में जो भी रसिक भक्त-गण निवास कर रहे थे, वे सभी आपकी कृपा से पालित थे।

एक बार आपका दर्शन करने के लिये आपके प्रिय शिष्य दीवान नाहरमलजी वृन्दावन आये। आश्रम में प्रभु का दर्शन न पाकर उन्होंने आश्रमवासी सेवकों से प्रभु का पता पूछा। पूछने पर सेवकों ने बताया कि प्रभु इस समय मानसरोवर गये हैं। नाहरमलजी भी प्रभु-दर्शन की इच्छा से वहीं गये। जाकर उन्होंने देखा कि प्रभु स्वयं अपने कोमल-कोमल कर-कमलों से वन की सूखी लकड़ियाँ तोड़ रहे हैं। यह देखकर नाहरमलजी को अपने आर्थिक वैभव पर घृणा का भाव उत्पन्न हो आया। दुःख और शोक से उनकी आँखें डबडबा आयीं। शोकाश्रु-विमोचन करते हुए उन्होंने प्रभु चरणों में साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम किया। प्रभु ने उन्हें प्रेम-पूर्वक हृदय से लगाया। पश्चात् अत्यन्त प्रेम और अपनेपन के शब्दों में दीवान नाहरमलजी ने ने कहा—'प्रभो! आप स्वयं लकड़ी तोड़ने का इतना बड़ा कष्ट क्यों उठाते हैं? यह कार्य्य तो कहार आदि के द्वारा भी कराया जा सकता है। इतने साधारण से काम के लिये आप स्वयं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जुट जायँ, यह तो कोई बात नहीं रही। यदि ऐसा ही है, तो फिर हम सेवकों का तो जीवन ही व्यर्थ है ?'

नाहरमल के आन्तरिक प्रेम से प्रभु का हृदय प्रसन्न हो रहा था, किन्तु उसे दबाते हुए प्रभु कठोर स्वर में बोले—'नाहरमल ! तुम जैसे राजसी पुरुषों को धन का बड़ा मद छाया रहता है। तभी तो श्रीठाकुरजी की सेवा को भी कहारों के योग्य बताते हो। श्रीठाकुरजी की प्रत्येक सेवा महान् है। उसमें छोटे-बड़े पन का कोई तारतम्य नहीं। तुम्हारी इस भेद-बुद्धि से मुझे बहुत कष्ट हुआ है। तुम्हारे जैसे प्रभु-सेवा-निष्ठा-हीन व्यक्ति का मैं मुख-दर्शन भी बुरा समझता हूँ।'

ऐसा कहते हुए प्रभु ने अपनी एकत्र की हुई लकड़ियाँ वहीं बखेर दीं और वे सीधे अपनी एकान्त कुटिया में आ घुसे। आश्रम में आकर अपने प्रिय अङ्गसेवी गोबिन्ददास को बुलाकर उन्होंने आज्ञा कर दी कि आज से मेरे समीप नाहरमल को मत आने देना। मैं उसका मुख भी नहीं देखना चाहता। इधर नाहरमलजी को अपने कृत्य पर घोर पश्चात्ताप हुआ। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि जब तक प्रभु प्रसन्न न होंगे, मैं अन्न-जल ही ग्रहण नहीं करूँगा।

नाहरमलजी के अन्न-जल परित्याग की बात प्रभु के कानों तक पहुँच गयी पर उन्होंने उस पर कोई बात तक नहीं उठायी। इस प्रकार पूरे तीन दिन रात बीत गये। इस बीच में भक्तों की प्रभु के पास अनेकों प्रार्थनाएँ हुई पर सब अस्वीकृत हो गईं। चौथे दिन प्रभु से न रहा गया। वे स्वयं अपने आप नाहरमल के पास आगये। प्रभु को आया देखकर नाहरमल से न रहा गया। वे प्रभु के चरणों में गिरकर फूट-फूट कर बालकों की भाँति रोने लगे। प्रभु ने उन्हे उठाकर हृदय से लगाया और

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बड़े प्रेम-पूर्ण वचनों में बोले—"भैया! प्रभु-सेवा का स्वरूप बड़ा ही विलक्षण है। उसमें हेय-उपादेय बुद्धि करने से ही जीव का अकल्याण हो जाता है। प्रभु-सेवा ही जीव का एकमात्र धर्म्म है। जीव का स्वरूप ही दास है, अतएव ऐसा स्वरूप-विरुद्ध भाव मन में नहीं लाना चाहिये। मैं अब तुम पर प्रसन्न हूँ। तुम अन्न-जल ग्रहण करो।' एसा कह कर प्रभु ने स्वयं ही अपने हाथों से उन्हें प्रसाद दिया और उन्हें खूब भर पेट भोजन कराया।

प्रभु की इस लीला से समस्त भक्त-समुदाय को श्रीठाकुर-सेवा का महत्व विदित हो गया। महापुरुषों की यही तो विशेषता है।

आचार्य्य श्रीहित हरिवंशचन्द्र महाप्रभु की नित्य परिचर्य्या का वर्णन महात्मा श्रीउत्तमदासजी ने अपने 'रसिक-अनन्य माल' नामक ग्रंथ में इस प्रकार किया है—

"सेवा की पद्धति विस्तारी। सात भोग रितु रितु अनुसारी ॥
पाँच आरती आठौं याम। समै समै भावना सुधाम ॥
सावधान सेवा में आप। कहहिं सुनहिं नहिं असद अलाप ॥
कर्म धर्म व्रत संजम जितनें। किंकर किये भक्ति के तितनें ॥
एकादसि द्वादासि व्रत गायो। महा प्रसाद तें तुच्छ दिखायौ ॥
कोटि एकादसि व्रत जो कियें। सो फल सीथ सीथ प्रति लियें ॥
सबनि प्रताप प्रसाद वखान्यौ। पै सवसु करि हित जू जान्यौ ॥
जनम मरन लौं संसकार दस। ते नहिं मानहिं प्रेम भक्ति बस ॥
प्रबल प्रताप भक्ति कौ भाख्यौ। जोग जग्य जप तप व्रत नाख्यौ ॥

अस्तु; आपका चरित्र एक अपार समुद्र है; उसी में से यह एक बिन्दु-मात्र है। आपके सम्बन्ध में भक्त-माल के रचियता स्वामी श्रीनाभाजी महाराज क्या कह रहे हैं। उनकी ठोस और सार-गर्भित वाणी को विज्ञजन समझें—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीराधा चरण प्रधान हृदय अति सुदृढ़ उपासी।
कुंज-केलि दम्पती तहाँ की करत खवासी॥
सर्वसु महाप्रसाद प्रसिद्ध ताके अधिकारी।
विधि निषेध नहि दासि अनन्य उत्कट व्रतधारी॥
श्रीव्यास-सुवन[1] पथ अनु सरै सोई भलैं पहिचानिहै।
हरिवंश गुसांई भजन की रीति सकृत कोउ जानि है॥

व्यास-सुवन श्रीहित हरिवंशचन्द्र के द्वारा उदित सुपथ का अनुसरण करने पर भले ही कोई उनके एकान्तिक रस-भजन को कुछ-कुछ समझ सके, अन्यथा 'श्रीहरिवंश गुसाँई भजन की रीति' का समझना वास्तव में अत्यन्त कठिन है। कोई विरला ही उसे समझ सकता है। श्रीनाभाजी का यह कथन परम सत्य है, वास्तव में पूर्ण रूपेण जैसे उस सुपथ का समझना कठिन है; उसी प्रकार उसका वर्णन भी अत्यन्त कठिन है। किन्तु यहाँ पाठकों को शाखाचन्द्र-न्याय से उसका दिग्दर्शन मात्र कराया जाने का प्रयास किया जा रहा है—

श्रीमद्भगवत श्रीकृष्ण-भक्ति का आधार-ग्रन्थ है। उसमें श्रीकृष्ण पूर्ण ब्रह्म प्रतिपादित किये गये हैं। और वहीं पर यह भी बताया गया है कि प्रत्येक जीव के लिये वही एकमात्र भजनीय हैं। इस भजनीय तत्व श्रीकृष्ण की भजन-प्रणाली को श्रीमद्भागवत में पाँच भावों में क्रमशः शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य एवं मधुर रति के नाम से विभक्त कर दिया गया है।

अन्यान्य भक्ति-मार्गीय श्रीमदाचार्य्य गणों ने इनमें से किसी एक भाव को लेकर अपने सम्प्रदाय का स्तम्भ खड़ा किया है। श्रीरामानुजाचार्य्य ने बैकुण्ठवासी भगवान् विष्णु को इष्ट मान कर दास्य-भाव से उनका कैङ्कर्य्य करना ही जीव का

१—'व्यासजी' आपके पिता का नाम है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परम-धर्म बताया है। श्रीमद्वल्लभाचार्य्य पाद श्रीकृष्णबाल-गोपाल को इष्ट बताकर वात्सल्य-भाव से उनमें रति करना ही परम कल्याण का हेतु बताते हैं। इसे ही पुष्टि-मार्ग या कृपा-मार्ग के नाम से कहा जाता है। इसी प्रकार श्रीमन्निम्बार्काचार्य्य एवं श्रीमन्मध्वाचार्य्यजी ने किशोर श्रीकृष्ण की क्रमशः स्वकीया और परकीया भाव से उपासना बताई है। वे कहते हैं, जीव का वास्तविक स्वरूप भी यही है।

किन्तु श्रीहित हरिवंश चन्द्र महाप्रभु ने अपनी उपासना का तत्व इन सबसे अत्यन्त विलक्षण बताया है वे कहते हैं, स्वकीया और परकीया ये दोनों ही भाव अपूर्ण हैं। स्वकीया में परकीयत्व का सुख नहीं और परकीया में स्वकीयत्व नहीं। स्वकीया में मिलन है पर विरह नहीं और इसी प्रकार परकीया में विरह है पर मिलन का पूर्ण सुख नहीं, अतएव प्रेम-राज्य में स्वकीया-परकीया, विरह-मिलन, ये सभी एकाङ्गी हैं। प्रेम की पूर्णता वहाँ है, जहाँ स्वकीया, परकीया दोनों का बोध नहीं और नित्य-मिलन में भी विरह का सुख (ललक) नित्य स्थित है। इस विषय को चकई और सारस के संवाद-रूप में उन्होंने स्पष्ट किया है—

चकई प्रान जु घट रहैं पिय बिछुरंत निकज्ज।
सर अन्तर अरु काल निशि तरफ तेज घन गज्ज॥
तरफ तेज घन गज्ज लज्ज तुव वदन न आवै।
जल विहून करि नैन भोर किहिं भाव बतावै॥
(जैश्री) हित हरिवंश विचारि बादि अस कौन जु बकई।
सारस यह संदेह प्रान घट रहैं जु चकई॥

विरह—प्रिय-वियोग में भी चकई का जीवित रहना, सारस की दृष्टि में प्रेम की न्यूनता है। किन्तु सारस के प्रेम में क्या न्यूनता है; उसे सुनिये—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सारस सर विछुरंत कौ जौं पलु सहै सरीर।
अगिनि अनंग जु तिय भखै तो जानै पर पीर॥
तौ जानै पर पीर धीर धरि सकहि बज्र तन।
मरत सारसहिं फूटि पुनि न परचौ जु लहत मन॥
(जैश्री) हित हरिवंश विचारि··· ·········

तात्पर्य्य यह है कि सारस अपने नित्य-मिलन में विरह-सुख का अनुभव नहीं कर सकता; अतः उसका प्रेमानुभव भी अपूर्ण है। ऐसा चकई का निर्णय है। इस पर श्रीहित हरिवंश महाप्रभु अब अपना सिद्धांत सुनाते हैं—

जैश्री हित हरिवंश विचारि 'प्रेम-विरहा' विनु वा रस।
निकट कन्त नित रहत मरम कहा जानै सारस॥

भाव यह कि 'प्रेम-विरहा' के बिना मिलन और विरह दोनों ही अपूर्ण हैं। अब स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि यह 'प्रेम-विरहा' क्या है ? उसका थोड़े में यही उत्तर है कि यद्यपि युगल-किशोर श्रीराधा-वल्लभलाल के नित्य-मिलन में कभी भी कोई वियोग की कल्पना तक नहीं है किन्तु इस मिलन में प्रेम की क्षीणता नहीं वरं प्रतिक्षण नूतनता स्वाद, चाह, चटपटी है। निरन्तर—

'·अंसनि पर भुज दियें विलोकत इन्दु बदन विवि ओर।
करत पान रस मत्त परस्पर लोचन तृषित चकोर॥'

इस प्रकार रूप, रस एवं प्रेमासव का पान अनवरत रूप से करते हुए भी दोनों में अतृप्ति रूप महान् विरह छाया रहता है। या यों कहिये—

'मिलेहि रहत मानौं कबहुँ मिले ना।'

स्वकीया-परकीया, विरह-मिलन एवं स्व-पर भेद-रहित यह नित्य-विहार-रस ही श्रीहित महाप्रभु का इष्ट तत्व है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पाठक यहाँ केवल एक सवैया में ही उसके स्वरूप का अनुमान करें—

"न आदि न अन्त विहार करैं दोऊ,
लाल प्रिया में भई न चिन्हारी :
नई नई भाँति नई नई कान्ति,
नई नवला नव नेह विहारी ॥
दिये चित आहि, रहे मुख चाहि,
रहे तन प्रान सु सर्वसु हारी ।
रहैं इक पास करैं मृदु हास,
सुनौ ध्रुव प्रेम अकत्थ कथा री ॥"

—श्रीध्रुवदासजी ।

नित्य नव किशोर श्रीराधावल्लभलाल नित्य वृन्दावन में नित्य सहचरि ललितादिकों के साथ अत्यन्त प्रेमोन्मत्त दशा में केवल इसी रस-विहार में निरत रहते हैं। सृष्टि के उत्पत्ति, पालन, प्रलय का तो वहाँ कोई प्रसङ्ग ही नहीं है। यह नित्य-विहार रस, शान्त, दास्य, सख्य एवं वात्सल्य भाव से तो श्रेष्ठ है ही, वरं मधुर रति—गोपी-भाव से भी अत्यन्त विलक्षण है। श्रीध्रुवदासजी के ही शब्दों में—

"गोपिनु के सम भक्त न आँहीं। उद्धव विधि तिनकी रज चाहीं।
तिनहूँ को मन तहाँ न परसै। जेहि ठाँ ललितादिक छवि दरसै ॥
नित्य विहार अखंडित धारा। मधुर वैस रस विवि सुकुमारा ॥
अगम निगम की कौन चलावै। महा विष्णु के मन नहिं आवै।
यह रस गायौ श्रीहरिवंश। मुक्ता कौन चुनै बिनु हंस ॥"

इस रसमयी उपासना की श्रेष्ठता का लक्ष्य कराते हुए फिर भी श्रीध्रुवदासजी कहते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"श्रीराधावल्लभलाल की विमल धुजा फहरन्त।
भगवत धर्म्महुँ जीति कैं निज प्रेमा टहरन्त॥
निज प्रेमा ठहरन्त और कछु परसत नाहीं।
अलक लड़े दोऊ लाल मुदित हँसि हँसि लपटाहीं॥
हित ध्रुव यह रस मधुर है सार कौ सार अगाधा।
आवै तबहीं हीय कृपा करैं वल्लभ-राधा॥"

—'भजन सत कुण्डलिया से'

अस्तु; आपके अनुपम दान में से एक 'श्रीराधा-सुधा-निधि' तो पाठकों के हाथ में ही है। इसके अतिरिक्त आपके श्रीसुख-निःसृत वाक्यामृतों को आपके भक्तों ने दो रूपों में संग्रह किया है। जो क्रमशः श्रीहित-चतुराशी और स्फुट-वाणी के नाम से प्रसिद्ध हैं। पाठकों के रसास्वाद के लिये यहाँ उन दोनों के कुछ पद उद्धृत किये जाते हैं—

श्रीहित चतुरासी

राग-विभास—

जोई जोई प्यारौ करै सोई मोहिं भावै,
भावै मोहिं जोई जोई सोई करैं प्यारे।
मोकौं तो भाँवती ठौर प्यारे के नैननि में,
प्यारौ भयौ चाहै मेरे नैननि के तारे॥
मेरे तन मन प्रानहूं तें प्रीतम प्रिय,
प्रीतम अपने कोटिक प्रान मोसौं हारे।
(जैश्री) हित हरिवंश हंस हंसिनी साँवल गौर,
कहौ कौन करै जल तरंगनि न्यारे॥

२

राग विभास—

—आज प्रभात लता-मंदिर में,
सुख बरसत अति हरषि जुगलवर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गौर स्याम अभिराम रंग भरि,
लटकि लटकि पगु धरत अवनि पर ॥
कुच कुंकुम रंजित मालावलि,
सुरतनाथ श्रीस्याम धाम धर ।
प्रिया प्रेम के अंक अलंकृत,
चित्रित चतुर सिरोमनि निजु कर ॥
दम्पति अति अनुराग मुदित कल,
गान करत मन हरत परस्पर ।
(जै श्री) हित हरिवंश प्रसंसि परायन,
गायन अलि सुर देत मधुरतर ॥

३

राग सारंग—

बनी श्रीराधामोहन की जोरी ।
इंद्रनील मनि स्याम मनोहर शात कुंभ तनु गोरी ॥
भाल विसाल तिलक हरि कामिनि चिकुर चन्द्र बिच रोरी ।
गजनायक प्रभु चाल गयंदिनि गति बृषभानुकिशोरी ॥
नील निचोल जुबति मोहन पट पीत अरुण सिर खोरी ।
(जैश्री) हित हरिवंस रसिक राधापति सुरत रंग में बोरी ॥

४

आजु नागरी किशोर भाँवती विचित्र जोर,
कहा कहौं अंग अंग परम माधुरी ।
करत केलि कंठ मेलि बाहु दंड गंड गंड—
परस सरस रास लास मंडली जुरी ॥
स्याम सुन्दरी बिहार बांसुरी मृदङ्ग तार,
मधुर घोष नूपुरादि किंकनी चुरी ।
(जैश्री) देखत हरिवंश आलि निर्त्तनी सुधंग चालि,
वारि फेरि देत प्रान देह सौं दुरी ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्फुट—पदावली

१

छप्पय—

ना जानौं छिन अंत कवन बुधि घटहि प्रकासित।
छुटि चेतन जु अचेत तेऊ मुनि भे विषवासित॥
पारासर सुर इन्दु कलपि कामिनि मन फन्द्या।
परिव देह दुख द्वन्द्व कौन क्रम काल निकन्द्या॥
इहि डरहिं डरपि हरिवंश हित जिनव भ्रमहिं गुन सलिल पर।
जोहि नामनु मंगल लोक तिहुँ सु हरिपद भजु न बिलम्ब कर॥

२

अरिल्ल—

मानुष कौ तनु पाइ भजौ ब्रजनाथ कौं।
दर्वी लैकैं मूढ़ जरावत हाथ कौं॥
(जैश्री) हित हरिवंश प्रपंच विषय रस मोह के।
(हरिहाँ) बिनु कंचन क्यों चलहिं पचीसा लोह के॥

३

राग धनाश्री—

मोहनलाल के रँग राची।
मेरे ख्याल परौ जिन कोऊ बात दसौं दिसि माँची॥
कंत अनंत करौ जो कोऊ बात कहौं सुनि साँची।
यह जिय जाहु भलैं सिर ऊपर हौंऽब प्रगट ह्वै नाँची॥
जागृत सयन रहत उर ऊपर मनि कंचन ज्यौं पाँची।
(जैश्री) हित हरिवंश डरौं काके उर हौं नांहिन मति काँची॥

४

राग मलार—

दोउ जन भींजत अटके बातनु।
सघन कुंज के द्वारैं ठाढ़े अंबर लपटे गातनु॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ललिता ललित रूप रस भींजी बूँद बचावत पातनु ।
(जैश्री) हित हरिवंश परसपर प्रीतम मिलवत रति-रस घातनु ॥

५

दोहा—

सबसौं हित निषकाम मत बृन्दावन विश्राम ।
(श्री) राधाबल्लभलाल कौ हृदय ध्यान मुख नाम ॥
तनहिं राखु सतसंग में मनहिं प्रेम रस भेव ।
सुख चाहत हरिवंश हित कृष्ण कलपतरु सेव ॥

× × ×

अस्तु; बृद्धि को प्राप्त हुए कलियुग के कदाचार का विनाश एवं प्रेम-रस का सरस प्रवाह प्रवाहित करते हुए आप श्रीबृन्दावन में अठारह वर्ष विराजे । और पूर्ण रूप से अढ़तालीस वर्ष तक इस धराधाम को पावन करते रहे । पश्चात् सम्बत् १६०९ विक्रम की शारदीय पूर्णिमा के दिन आपने अपनी अन्तरङ्ग-(निकुञ्ज) लीला में प्रवेश किया । आपके निकुञ्जवासी हो जाने पर समस्त बृन्दावन-वासी विरह से व्याकुल हो गये । श्रीव्यासजी तो भीषण विरह-वेदना से व्यथित होकर आमरण अन्न-जल त्याग का व्रत ही ले बैठे । वे एक तङ्ग कोठरी में जा घुसे और उन्होंने भीतर से साँकल बन्द कर ली । इस प्रकार तीन दिन व्यतीत हो गये पश्चात् भक्तों के शपथ दिलाने पर उन्होंने कपाट खोले । श्रीहरिवंशचन्द्र की विरह-व्यथा से व्याकुल होकर शोकाश्रु-विमोचन करते हुए उन्होंने जो कुछ गाया है; गाया क्या है ? रोया है; बस उसी के साथ हम भी श्रीहरिवंश-चरित का विश्राम करते हैं—

हुतौ रस रसिकन कौ आधारु ।
बिनु हरिबंसहिं सरस रीति कौ कापै चलिहै भारु ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

को राधा दुलरावै गावै बचन सुनावै चारु ।
वृन्दावन की सहज माधुरी कहिहै कौन उदारु ॥
पद-रचना अब कापै ह्वै है निरस भयौ संसारु ।
बड़ौ अभाग्य अनन्य सभा कौ उठि गयौ ठाठ सिँगारु ॥
जिन बिनु दिन छिन सत-जुग बीतत सहज रूप आगारु ।
'व्यास' एक कुल कुमुद बन्धु बिनु उडगन जूँठौ थारु ॥

इति शम्'

लेखक—

बाबा हितदास

आशा है शीघ्र ही पाठकों के समक्ष 'श्रीहरिवंश-चरितामृत' वृहद् रूप में उपस्थित होगा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीराधे

निवेदन—

'श्रीराधा-सुधा निधि' जैसे रसमय ग्रन्थ के सम्बन्ध में कुछ भी लिखना किंवा उसके अनुवाद करने की चेष्टा करना बाल-चापल्य एवं धृष्टता नहीं; तो और क्या है? मेरी इस धृष्टता को महात्मा-गण क्षमा करें। इस कार्य्य में मुझसे स्थान-स्थान पर कई भूलें एवं गल्तियाँ हुई होंगी, और कई स्थलों पर तो अर्थ का अनर्थ भी हो गया होगा। अपनी इस अज्ञता के लिये मैं सभी से पुनः पुनः क्षमा-प्रार्थी हूँ।

इस अनुवाद के लिखने में मुझे कई प्राचीन टीकाओं का आश्रय मिला है और उन्हीं के आधार पर ग्रन्थ के मूल भावों की रक्षा का यथा-शक्ति प्रयत्न किया गया है। ग्रन्थ के पाठान्तरित मूल एवं हिन्दी अनुवाद का संशोधन-कार्य्य श्रीश्री १०८ श्रीगोस्वामी-श्रीलतिताचरणजी महाराज ने अपने ऊपर लेकर मुझे अनुगृहीत किया है। मैं उनका कृतज्ञ हूँ।

इसके सिवाय बाबा श्रीहितवंशीदासजी महाराज व्यास-भवन बाद-ग्राम ने इसकी भूमिका में बड़ी गवेषणा के साथ 'श्रीराधा-सुधा-निधि' के ग्रन्थकार का निर्णय दिया है। वह अंश

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रत्येक के लिये अवश्य पठनीय है। यह भूमिका प्रकाशित ग्रन्थ की एक बहुत बड़ी कमी को दूर करती है।

इस ग्रन्थ के साथ ही ग्रन्थकार श्रीहित-हरिवंशचन्द्र महाप्रभु का संक्षिप्त जीवन-चरित भी है जो अपनी माधुरी स्वयं ही व्यक्त करता है। यह चरित्र की ही अपनी विशेषता है।

अन्त में ठाकुर श्रीरूँगूसिंहजी परिहार, विलासपुर ने ग्रन्थ-प्रकाशन में जो अर्थ व्यय किया है उसके लिये उन्हें धन्यवाद !

अस्तु; यदि इस अनुवाद से पाठकों को कुछ भी आनन्द की उपलब्धि हुई तो मैं अपने श्रम को सफल समझूँगा।

निवेदक—

अनुवादक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीहित हरिवंशचन्द्रो जयति ।
श्रीहित राधावल्लभो जयति ॥

श्रीयमुनाष्टकम्

(भावानुवाद-सहित)

१

व्रजाधिराज-नन्दनाम्बुदाभ गात्र चन्दना—
नुलेप गन्ध वाहिनीं भवाब्धि-वीज दाहिनीम् ।
जगत्त्रये यशस्विनीं लसत्सुधा पयस्विनीं,
भजे कलिन्द-नन्दिनीं दुरन्त मोह-भञ्जिनीम् ॥

जो व्रजराज-नन्दन श्रीकृष्ण के नव-जल-धर वत् कान्तिमान वपु में अनुलेपित चन्दन-गन्ध का वहन करती हैं, जो आवागमन् रूप भव सागर के बीज का दहन कर देती हैं, जिनका सुयश त्रिलोक-विख्यात् है एवं जो मानों सुधा-धारा से ही लसित हैं—शोभित हैं। उन दुरन्त मोह (जिसका अन्तिम परिणाम बड़ा कष्ट मय है) का भञ्जन (नाश) करने वाली श्रीकलिन्द-गिरि-नन्दिनि यमुना का मैं भजन करता हूँ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२

रसैकसीम राधिकां पदाब्ज-भक्ति-साधिकां
तदङ्ग-राग-पिञ्जर प्रभाति पुंज मञ्जुलाम् ।
स्वरोचिषाति शोभितां कृतां जनाधिगञ्जनां,
भजे कलिन्द-नन्दिनीं दुरन्त मोह-भञ्जिनीम् ॥

जो रस की एक मात्र अवधि श्रीराधिका-चरण-कमल-भक्ति की साधिका हैं—प्राप्ति करा देने वाली हैं और उन्ही श्रीराधिका के अङ्ग-राग का वहन करने से अत्यन्त मञ्जुल प्रभा-पुञ्ज को प्राप्त हैं । जो स्वयं स्वप्रभा से अति-शोभित हैं तथा अपने [सेवन करने वाले] जनों के पूर्व-कृत पापों का भली प्रकार अधिगञ्जन करने में जो बहुत ही कुशल हैं मैं उन कठिनतम मोह का भञ्जन करने वाली कलिन्द-गिरि नन्दिनि श्रीयमुना का भजन करता हूँ ।

३

व्रजेन्द्र-सूनु-राधिका हृदि प्रपूर्यमाणयो—
र्महा रसाब्धि पूरयोरिवाति तीव्र वेगतः ।
बहिः समुच्छ्वलन्नव प्रवाह रूपिणीमहं
भजे कलिन्द नन्दिनीं दुरन्त-मोह-भञ्जिनीम् ॥

कलिन्द-नन्दिनि का यह प्रवाह क्या है ? मानो व्रजेन्द्र-नन्दन श्रीकृष्ण और वृषभानु नन्दिनि श्रीराधिका का महारस (प्रेम) पूर्ण महासागर रूप हृदय ही बाहर उछल-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उछल कर नवीन प्रवाह-रूप में अति तीव्र वेग रूप से बह चला है। अहो! मैं ऐसी रस-प्रवाह रूपिणी कलिन्द-नन्दिनि का ही भजन करता हूँ जो दुरन्त-मोह का भी भञ्जन कर देती हैं।

४

विचित्र रत्न-बद्ध सत्तट-द्वयो श्रियोज्वलां,
विचित्र हंस-सारसाद्यनन्त पक्षि-सङ्कुलाम् ॥
विचित्र मीन-मेखलां कृतातिं दीन—पालितां,
भजे कलिन्द-नन्दिनीं दुरन्त मोह-भञ्जिनीम् ॥

जिसके दोनों तट चित्र-विचित्र रत्नों से आवद्ध हैं। उन रत्नों की उज्वल कान्ति-श्री से दिव्य प्रकाश चारों ओर विखर रहा है। साथ ही साथ दोनों तट विचित्र-विचित्र हंस सारस आदि अनन्त पक्षियों के समूह से परिपूर्ण हैं। जल में विहार करती हुई विचित्र-विचित्र मछछियाँ ही मानो आपकी मेखला (करधनी) की शोभा प्राप्त करा रही हैं। जो अधम से अधम दीन जनों का भी पालन करती हैं मैं उन दुरन्त मोह का भी भञ्जन करने वाली कलिन्द-नन्दिनि यमुना का भजन करता हूँ।

५

वहन्तिकां श्रियां हरेर्मुदा कृपा-स्वरूपिणीं,
विशुद्ध भक्तिमुज्वलां परे रसात्मिकां विदुः।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुधा श्रुतिस्त्वलौकिकीं परेश-वर्ण-रूपिणीं,
भजे कलिन्द-नन्दिनीं दुरन्त मोह-भञ्जिनीम् ॥

जो श्रीलालजी की अनिर्वचनीय कान्ति-श्री का मोद-मोद से वहन करती हैं, जो साक्षात् कृपा-स्वरूपिणी हैं। और तो क्या, इन्हें यों समझिये कि परम रसमयी उज्वल एवं विशुद्ध भक्ति यही हैं (जो जल के रूप में) अलौकिक सुधा का ही निर्झरण करती रहतीं हैं। अहा! जिनका श्याम वर्ण परम प्रभु श्रीकृष्ण के श्याम-वपु के सदृश है। मैं तो इन्हीं दुरन्त मोह-भञ्जिनि कलिन्द-सुता श्रीयमुना का भजन करता हूँ।

६

सुरेन्द्रवृन्द वन्दितां रसादधिष्ठते वने,
सदोपलब्ध माधवाद्भुतैक सद्दशोन्मदाम् ।
अतीव विह्वलामिवच्चलत्तरङ्ग दोर्लतां,
भजे कलिन्द नन्दिनीं दुरन्त मोह भञ्जिनीम् ॥

ये दुरन्त मोहभञ्जिनि कलिन्द-तनया सुरेन्द्र-वृन्द-वन्दिता हैं और सदा रसाधिष्ठान् श्रीवृन्दावन में शोभित रहतीं—विराजती हैं। इस रस-अधिष्ठान् श्रीवृन्दावन में सर्व-शिरोमणि श्रीमाधव ने किसी अत्यद्भुत रस की उपलब्धि की है और वे उसी रस से सदा उन्मद रहे आते हैं; बस, उन्हीं माधव के सदृश ये यमुना भीं रसोन्मदा हैं। इनकी चञ्चल तरङ्गें क्या हैं? मानो ये अति विह्वल-भाव से अपनी दोनों भुज-लताओं को उठा-उठाकर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आनन्दोल्लास प्रकट कर रही हैं। मैं इन्हीं कलिन्द-नन्दिनि का भजन करता हूँ।

७

प्रफुल्ल पङ्कजाननां लसन्नवोत्पलेक्षणां
रथाङ्गनां युग्मकस्तनीमुदार हंसिकाम्।
नितम्ब चारु रोधसां हरेः प्रिया रसोज्वलां
भजे कलिन्द-नन्दिनीं दुरन्त मोह-भञ्जिनीम्॥

आप (श्रीयमुना) के अन्तरवर्त्ती प्रफुल्लित पङ्कज हीं मानो आपका मुख-कमल है और शोभाशाली नील उत्पल ही सुन्दर नयन हैं। जल में विहार करते हुए युगल-चक्र-वाक-दम्पति ही मानो आपके युगल स्तन-मण्डल हैं और हंसों की उदार गति ही आपका मनहरण गमन। इसी प्रकार आपके दोनों तट ही युगल नितम्ब-मण्डल हैं। अहा! ये दुरन्त मोह-भञ्जिनि कलिन्द-सुता श्रीहरि और उनकी प्रियतमा श्रीराधिका के रस से परमोज्वला हो रही हैं। मैं इन्हीं का भजन करता हूँ।

८

समस्त वेद-मस्तकैरगम्य-वैभवां सदा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महामुनीन्द्र नारदादिभिःसदैव भावितास् ।
अतुल्य पामरैरपिश्रितां पुमर्थ शारदां
भजे कलिन्द-नन्दिनीं दुरन्त मोह-भञ्जिनीम् ॥

जो समस्त वेद-शिरोभाग—उपनिषदों के लिये भी सदा अगम्य हैं । जो महामुनीन्द्र नारदादिकों से सदा भावित हैं (अर्थात् वे भी जिनकी भावना करते हैं) एवं अपना आश्रय लेने वाले अतुल्य (सर्व-श्रेष्ट) पामरों को भी जो परम-पुरुषार्थ रूप परम कल्याण (मोक्ष अथवा प्रेम) प्रदान करती हैं । मैं उन्हीं दुरन्त-मोह-भञ्जिनि कलिन्द-नन्दिनी का भजन करता हूँ ।

९

य एतदष्टकं बुधस्त्रिकालमादृतः पठेत्
कलिन्द-नन्दिनी हृदा विचिन्त्य विश्व-वन्दिताम् ।
इहैव राधिकापतेः पदाब्ज-भक्तिमुत्तमा—
मवाप्य स ध्रुवं भवेत्परत्र तत्प्रियानुगः ॥

जो विवेकी जन विश्व-वन्दिता कलिन्द-नन्दिनी का अपने हृदय में चिन्तन करते हुए इस अष्टक का तीनों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(प्रातः मध्याह्न और सायं-) काल आदर-पूर्वक पाठ करेंगे, निश्चय ही वे श्रीराधिका-पति श्रीकृष्ण की उत्तमा (प्रेम-लक्षणा) भक्ति को यहीं (इसी पृथ्वीतल में) प्राप्त कर लेंगे और अन्त में निश्चय-पूर्वक परम धाम श्रीवृन्दावन को प्राप्त करके श्रीकृष्ण-प्रिया श्रीराधिकाजी के अनुगत (सहचरि) भाव को प्राप्त होंगे।

इति श्रीवृन्दावनेश्वरी-चरण-कृपाव-
लम्ब-जृम्भित श्रीहित—
हरिवंश महाप्रभु विरचितं
यमुनाष्टकं —
सम्पूर्णम्।

इस प्रकार श्रीवृन्दावन की स्वामिनी श्रीराधिका
के चरणाश्रय से आनन्द-कल्लोलमान्
श्रीहित हरिवंश महाप्रभु द्वारा
रचित यमुनाष्टक
सम्पूर्ण हुआ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीहित राधावल्लभो जयति,
श्रीहित हरिवंशचन्द्रो जयति।

श्रीराधा-सुधा-निधि

(भावानुवाद-सहित)

१

सङ्केत—निखिल निगमागम अगोचर रस-रीति-प्रकाशक, सकल रसिक-जन वन्दित चरण, हितावतार, वंशी-स्वरूप श्रीमदाचार्य्य व्यास-नन्दन श्रीहित हरिवंशचन्द्र महाप्रभु अपने ग्रन्थ के प्रारम्भ में स्वेष्ट-प्रभाव वर्णनात्मक मङ्गलाचरण करते हैं—

मूल—यस्याः कदापि वसनाञ्चल खेलनोत्थ,
धन्यातिधन्य पवनेन कृतार्थमानी।
योगीन्द्र दुर्गमगतिर्मधुसूदनोऽपि
तस्या नमोस्तु वृषभानुभुवो दिशेऽपि ॥

भावार्थ—किसी समय जिनके नीलाञ्चल के हिलने से उठे हुए धन्यातिधन्य पवन को स्पर्श करके योगीन्द्रों के लिये

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अति दुर्गम गति मधुसूदन ने भी अपने आपको कृतकृत्य माना, मैं उन्हीं श्रीवृषभानुनन्दिनी की दिशा को प्रणाम करती हूँ।

२

प्रथम जिनकी दिशा को नमस्कार कर चुके हैं; अब उन्हीं की महिमा को नमस्कार करते हैं—

ब्रह्मेश्वरादि सुदुरूह पदारविन्द
श्रीमत्पराग परमाद्भुत वैभवायाः।
सर्वार्थसार रस वर्षिकृपार्द्रदृष्टे—
स्तस्या नमोस्तु वृषभानु-भुवो महिम्ने॥

जिनके चरण-कमल ब्रह्मा, शङ्कर आदि के लिये भी अत्यन्त दुरूह हैं, जिन चरण-कमलों का शोभामय पराग परम अद्भुत वैभवशाली है, एवं जिनकी कृपा-रस-भीनी दृष्टि समस्त अर्थों के भी सार रस (प्रेम) का वर्षण करती है; मैं उन्हीं श्रीवृषभानुनन्दिनी की महिमा को नमन करती हूँ।

३

महिमा को नमस्कार करके श्रीप्रियाजी के प्रति आपने उनसे अपनेपन का भाव प्राप्त किया है; अतएव अब कुछ समीपता से उनके श्रीचरण-रेणु का स्मरण करते हैं—

यो ब्रह्मरुद्र शुक नारद भीष्म मुख्यै—
रालक्षितो न सहसा पुरुषस्य तस्य।

२]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सद्योवशीकरण चूर्णमनन्तशक्ति
तं राधिकाचरणरेणुमनुस्मरामि ॥

जो परम पुरुष श्रीकृष्ण; ब्रह्मा, शङ्कर, शुकदेव, नारद और भीष्म जैसे प्रमुख (भागवतों) को भी सहसा आलक्षित नहीं होते, उन्हीं श्रीकृष्ण को तत्काल वश में करने वाले अनन्त-शक्ति चूर्ण श्रीराधिका-चरण-रेणु का मैं अनुस्मरण करती हूँ।

४

पुनः उसी चरण-रेणु की महिमा का गान करते हैं—

आधायमूर्द्धनियदापुरुदार गोप्यः
काम्यं पदं प्रियगुणैरपि पिच्छमौलेः ।
भावोत्सवेन भजतां रस कामधेनुं
तं राधिका चरण रेणुमहं स्मरामि ॥

जिस चरणरेणु को उदार गोपियों ने अपने अपने मस्तक पर धारण करके मयूर-पिच्छधारी श्यामसुन्दर के मधुर गुणों सहित अपना मनोवाञ्छित पद प्राप्त किया तथा जो चरणरेणु भाव समुत्साह पूर्वक सेवन करने वाले (भावुक भक्तों) के लिये रसदाता कामधेनु ही है; मैं उसी श्रीराधिका-चरण-रेणु का स्मरण करती हूँ।

५

श्रीचरण-रेणु-स्मरण के अनन्तर जिनकी चरण-रेणु का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इतना अद्भुत प्रभाव है, उन्हीं श्रीस्वामिनीजी का जय-जयकार मनाते हैं—

दिव्यप्रमोद रस सार निजाङ्गसङ्ग
पीयूषवीचि निचयैरभिषेचयन्ती ।
कन्दर्प कोटि शर मूर्च्छित नन्दसूनु—
सञ्जीवनी जयति कापि निकुञ्जदेवी ॥

जो सदा अपने अङ्ग-सङ्ग रूप अलौकिक आनन्द-रस-सार अमृत की लहरी-समूहों का अभिसिञ्चन कर-करके कोटि-कोटि कन्दर्प-शरों से मूर्च्छित नन्दनन्दन श्रीलालजी को जीवन-दान करती रहती हैं, उन नन्दसूनु-सञ्जीवनी किन्हीं (अनिर्वचनीय) निकुञ्जदेवी की जय हो, जय हो ।

६

श्रीचरण-रेणु-स्मरण और जयजयकार की भावना से उल्लसित होकर अब रससिन्धु-सार श्रीराधानन-कमल के दर्शन की आकांक्षा करते हैं—

तन्नः प्रतिक्षण चमत्कृत चारुलीला-
लावण्य मोहन महामधुराङ्गभङ्गि ।
राधाननं हि मधुराङ्ग कलानिधान—
माविर्भविष्यति कदा रससिन्धु सारम् ॥

जिस आनन-कमल से प्रतिक्षण महामोहन माधुर्य्य के (विविध अङ्गों[१] की भङ्गिमा युक्त) सुन्दर-सुन्दर लीलाओं का

१—विविध अङ्ग = हाव-भाव इत्यादि ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लावण्य चमत्कृत होता रहता है और जो माधुर्य्य के अङ्गों की चातुरी' का उत्पत्ति स्थान है, वही समस्त रस-सार-सिन्धु श्रीराधानन हमारे सम्मुख कब आविर्भूत होगा ?

७

श्रीराधा-मुख-कमल-दर्शन वैसे तो दुर्लभ है किन्तु यदि कृपा-पूर्वक उनकी सन्निकटवर्त्ती सेवा प्राप्त हो जाय; तो अवश्य ही प्राप्त हो सकता है, अतएव कुञ्ज (केलि-भवन)-प्राङ्गण की मार्जनी होने की अभिलाषा करते हैं—

यत्किङ्करीषु बहुशः खलु काकुवाणी
नित्यं परस्य पुरुषस्य शिखण्ड मौलेः ।
तस्याः कदा रस निधेर्वृषभानुजाया—
स्तत्केलिकुञ्ज भवनाङ्गण मार्जनीस्याम् ॥

निश्चय ही; जिनकी दासियों से परम-पुरुष शिखण्ड-मौलि श्रीश्यामसुन्दर नित्य-निरन्तर कातर-वाणी द्वारा भूरि-भूरि प्रार्थना करते रहते हैं, क्या मैं कभी उन रसनिधि श्रीवृषभानुजा के केलि-कुञ्ज-भवन के प्राङ्गण की सोहनी देनेवाली हो सकूँगी ? (जिसमें प्रवेश करने के लिये श्रीलालजी को भी सखियों से प्रार्थना करनी पड़ती है ।)

८

केलि-भवनाङ्गण-मार्जन सेवा कैसे प्राप्त होगी । इसका एक उपाय दिखाते हुए अपने मनको प्रोत्साहित करते हैं—

१—चातुरी = कला ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बृन्दानि सर्वं महतामपहाय दूराद्—
बृन्दाटवीमनुसर प्रणयेन चेतः।
सत्तारणीकृत सुभाव सुधारसौघं
राधाभिधानमिह दिव्य निधानमस्ति ॥

हे मेरे मन ! तू समस्त महच्चेष्टाओं (महत् वृन्दों) को दूर से ही छोड़कर प्रीति-पूर्वक श्रीबृन्दाटवी का अनुसरण कर। जहाँ 'श्रीराधा' नामक एक दिव्य निधि विराजमान है। जो सज्जनों को भव से उद्धार करने वाले भाव रूप सुधा-रस का प्रवाह है।

९

श्रीवृन्दावन में अपने चित्त का प्रवेश कराके अब निकुञ्ज-केलि-सुधा के आस्वादन करने की अभिलाषा करते हैं—

केनापि नागरवरेण पदे निपत्य
संप्रार्थितैक परिरम्भ रसोत्सवायाः।
सभ्रू - विभङ्गमतिरङ्गनिधेः कदा ते
श्रीराधिके नहिनहीति गिरः शृणोमि ॥

श्री राधिके ! कोई चतुर-शिरोमणि किशोर आपके श्रीचरणों में वारम्बार गिरकर आपसे परिरम्भण सुखोत्सव की याचना कर रहे हों और आप अपनी भ्रूलताओं को विभङ्गित कर-करके परम रसमय वचन 'नहीं नहीं' ऐसा कह रही हों। हे अति कौतुक-निधि ! मैं आपके इन शब्दों को कब सुनूँगी ?

६]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१०

अब रस-सागर-सार-मूर्त्ति अपनी स्वामिनीजी से कृपा की याचना करते हैं—

यत्पादपद्म नखचन्द्र मणिच्छटाया
विस्फूर्जितं किमपि गोपवधूष्वदर्शि ।
पूर्णानुराग रससागरसार मूर्त्तिः
सा राधिका मयि कदापि कृपां करोतु ॥

जिनके पाद-पद्म-नख रूप चन्द्रमणि की किसी अनिर्वचनीय छटा का प्रकाश गोप-वधुओं में देखा जाता है, वही परिपूर्ण अनुराग-रस-समुद्र की भी सार-मूर्त्ति श्रीराधिका कभी मुझ पर भी कृपा करेंगी ?

११

पुनः वही अभिलाषा करते हैं—

उज्जृम्भमाण रसवारिनिधेस्तरङ्ग—
रङ्गैरिव प्रणय लोल विलोचनायाः ।
तस्या कदा नु भविता मयि पुण्यदृष्टि—
र्वृन्दाटवी नव-निकुञ्ज गृहाधिदेव्याः ॥

जिनके नेत्र प्रणय-रस से चञ्चल हो रहे हैं और जिनके अङ्ग उत्फुल्लमान् रस-सागर की तरङ्गों के समान हैं, उन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीवृन्दाटवी नव-निकुञ्ज भवन की अधिष्ठात्री देवी की पवित्र दृष्टि मुझ पर कब होगी ?

१२

मैं जिनकी कृपा-दृष्टि चाहता हूँ उनके सिवाय मेरी कोई अन्य गति ही नहीं है। मुझे तो केवल वही श्रीस्वामिनी-चरणारविन्द ही शान्ति प्रदान कर सकते हैं, इस भाव को प्रदर्शित करते हैं—

बृन्दावनेश्वरि तवैव पदारविन्दं
प्रेमामृतैक मकरन्द रसौघपूर्णम् ।
हृद्यर्पितं मधुपतेः स्मरतापमुग्रं
निर्वापयत्परम शीतलमाश्रयामि ॥

हे श्रीबृन्दावनेश्वरि ! आपके चरण-कमल एकमात्र प्रेमामृत-मकरन्द रस-राशि से परिपूर्ण हैं, जिन्हें हृदय में धारण करते ही मधुपति श्रीलालजी का तीक्ष्ण स्मरताप (काम-ताप) निर्वारित हो जाता है। मैं आपके उन्हीं परम शीतल चरणारविन्दों का आश्रय ग्रहण करती हूँ, मेरे लिये उनके सिवाय और कोई गति नहीं है।

१३

अपने परमाश्रय श्रीचरण जहाँ विराजते हैं, उस स्थल की ओर सङ्केत करते हुए अपने मन से कहते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राधाकरावचित पल्लव वल्लरीके
राधापदाङ्क विलसन्मधुरस्थलीके ।
राधायशो मुखरमत्तखगावलीके
राधा-विहारविपिने रमतां मनो मे ॥

हे मेरे मन! तू श्री राधा-करों से स्पर्श की हुई पल्लव-वल्लरी से मण्डित, श्रीराधा पदाङ्कों से शोभित, मनोहर स्थल-युक्त एवं श्रीराधा यशोगान से मुखरित मत्त खगावली-सेवित श्री राधा कुञ्ज-केलि कानन श्रीवृन्दावन में रमण कर!

१४

दिशा-नमस्कार, महिमा-नमस्कार, चरण-रज-स्मरण; श्री प्रिया परत्व, मार्जनी टहल की अभिलाषा, श्रीवृन्दावन-प्राप्ति की अभिलाषा आदि करते हुए अब अत्यन्त निकटवर्त्ती ऐश्वर्य-रहित महा मधुर सहचरि भाव-पूर्वक हास-परिहास का वर्णन करते हैं—

कृष्णामृतं चलु विगाढुमितोरिताहं
तावत्सहस्व रजनी सखि यावदेति ।
इत्थं विहस्य वृषभानुसुतेह लप्स्ये
मानं कदा रसदकेलि कदम्ब जातम् ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जब वे मुझसे कहेंगी—"अरी सखि! श्रीकृष्णामृत' अवगाहन करने के लिए चल"। तब मैं हँसकर कह दूँगी—"हे प्रिये! तब तक धैर्य्य रखो जब तक रात्रि नहीं आ जाती।" (क्योंकि कृष्णामृत-अवगाहन तो रात्रि में ही ठीक बन सकता है?) उस समय मेरे हास-मय वचनों से रसदायक केलि-समूह का एक अनुपम आनन्द उत्पन्न होगा। मैं कब श्रीवृषभानु नन्दिनीजू से इस रसमय सम्मान की अधिकारिणी होऊँगी?

१५

अब सलज्ज गतिमान् श्रीप्रियाजी की शोभा का दर्शन करने की अभिलाषा करते हैं—

पादाङ्गुली निहित दृष्टिमपत्रपिष्णुं
दूरादुदीक्ष्य रसिकेन्द्र मुखेन्दु बिम्बम्।
वीक्षे चलत्पदगतिं चरिताभिरामां
झङ्कारनूपुरवतीं बत कर्हि राधाम्॥

अपने प्रियतम रसिक-पुरन्दर श्रीलालजी के मुखचन्द्र मण्डल को दूर से ही देखकर जिन्होंने लज्जा से भरकर अपनी दृष्टि को अपने ही चरणों की अँगुलियों में निहित कर दिया है

१—श्रीकृष्णामृत शब्द यहाँ श्लिष्ट है। 'कृष्णा' यमुना का एक नाम है। श्रीप्रियाजी ने सखी से यमुना-स्नान की ही बात कही थी; किन्तु सखी ने परिहास से आनन्द-वृद्धि के लिए कृष्णामृत पद का अर्थ किया 'श्रीकृष्ण का एकान्त मिलन-रस'। जिसकी प्राप्ति रात्रि को ही सम्भव बताई, यही हास विशेष है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और फिर जो मन्थर गति से (निकुञ्ज-भवन की ओर) चल पड़ी हैं, जिससे चरण-नूपुर झंकृत हो उठे हैं। हाय! वे अभिराम-चरिता श्रीराधा क्या कभी मुझे दर्शन देंगी ?

१६

रात्रिकालीन शय्या-विहार के उपरान्त प्रातःकाल मज्जानादि कराके कुछ मधुर-मधुर भोजन अर्पित करने और तत्पश्चात् पाद सम्वाहनादि की अभिलाषा करते हैं—

उज्जागरं रसिक नागर सङ्ग रङ्गैं
कुंजोदरे कृतवती नु मुदा रजन्याम् ।
सुस्नापिता हि मधुनैव सुभोजिता त्वं
राधे कदा स्वपिषि मत्कर लालिताङ्घ्रिः ॥

हे श्रीराधे! तुमने अपने प्रियतम रसिक नागर श्रीलालजी के साथ कुञ्ज-भवन में आनन्द-विहार करते हुए मोद में ही सारी रात्रि जागकर व्यतीत कर दी हो तब प्रातःकाल में तुम्हें अच्छी तरह से स्नान कराके मधुर-मधुर भोजन कराऊँ और सुखद शय्या पर पौढ़ाकर अपने कोमल करों से तुम्हारे ललित चरणों का संवाहन करूँ। मेरा ऐसा सौभाग्य कब होगा ?

१७

अब श्रीप्रियाजी के परम रसमय स्वरूप का वर्णन करते हुए उसे अपने हृदय में स्फुरित देखना चाहते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वैदग्ध्यसिन्धुरनुराग रसैक सिन्धु-
वत्सिल्य सिन्धुरतिसान्द्रकृपैक सिन्धुः ।
लावण्य सिन्धुरमृतच्छविरूप सिन्धुः
श्रीराधिका स्फुरतु मे हृदि केलि सिन्धुः ॥

जो विदग्धता की सिन्धु, अनुराग रस की एकमात्र सिन्धु, वात्सल्य-भाव की सिन्धु, अत्यन्त घनीभूत कृपा की एकमात्र सिन्धु, लावण्य की सिन्धु और छबि रूप अमृत की अपार सिन्धु हैं। वे केलि-सिन्धु श्रीराधा मेरे हृदय में स्फुरित हों।

१८

अब श्रीहितअलिजी अपनी स्वामिनीजी का प्रेमालिङ्गन प्राप्त करने की अभिलाषा करती हैं—

दृष्टैव चम्पकलतेव चमत्कृताङ्गी
वेणुध्वनिं क्व च निशम्य च विह्वलाङ्गी ।
सा श्यामसुन्दर गुणैरनुगीयमानैः
प्रीता परिष्वजतु मां वृषभानुपुत्री ॥

जो अपने प्रियतम श्रीलालजी को देखते ही चम्पकलता के समान अङ्ग-अङ्ग से चमत्कृत हो उठती हैं, और कभी मन्द-मन्द वेणु-ध्वनि को सुनकर जिनके समस्त अङ्ग विह्वल हो उठते हैं। अहो! वे श्रीवृषभानुनन्दिनी मेरे द्वारा गाये हुए अपने प्रियतम श्यामसुन्दर के गुणों को श्रवणकर क्या कभी मुझे प्रीतिपूर्वक आलिङ्गन करेंगी?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१६

अब श्रीस्वामिनीजी के एकान्त विलास-रस की छटा का अभिसिञ्चन प्राप्त करने की प्रार्थना करते हैं—

श्रीराधिके सुरतरङ्गि नितम्ब भागे
काञ्चीकलाप कल हंस कलानुलापैः ।
मञ्जीरसिञ्जित मधुव्रत गुंजिताङ्घ्रि
पङ्करुहैः शिशिरयस्व रसच्छटाभिः ॥

हे राधिके ! हे सुरत-केलि-रञ्जित नितम्ब-भागे ! अहा ! आपका यह काञ्ची-कलाप क्या है मानो कल हंसों का कल-कल अनुलाप है। और, चरण-कमलों के नूपुरों की मन्द-मन्द झनकार ही मानों मतवाले भ्रमरों का गुञ्जन है। स्वामिनि ! आप अपने इसी मधुर-रस की छटा से मुझे शीतल कर दीजिए।

२०

अब अद्भुत प्रेम-प्रवाह रूपा श्री प्रियाजी का सान्निध्य प्राप्त करने की याचना करते हैं—

श्रीराधिके सुरतरङ्गिणि दिव्यकेलि
कल्लोल मालिनी लसद्वदनारविन्दे ।
श्यामामृताम्बुनिधि सङ्गमतीव्रवेगि-
न्यावर्त्तनाभि रुचिरे मम सन्निधेहि ॥

हे दिव्यकेलि-तरङ्गमाले ! हे शोभमान् वदनारविन्दे ! हे श्रीश्यामसुन्दर-सुधा-सागर-सङ्गमार्थ तीव्र वेगवती ! हे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रुचिर नाभिरूप गम्भीर भँवर से शोभायमान् सुरत-सलिले! (मन्दाकिनि रूपे !) हे श्रीराधिके ! आप मुझे अपना सामीप्य प्रदान कीजिए ।

२१

श्री प्रियाजी के सुकुमार चरण-कमलों को अपने सिर पर धारण करने की अभिलाषा करते हैं—

सत्प्रेम सिन्धु मकरन्द रसौघधारा
सारानजस्रमभितः स्रवदाश्रितेषु ।
श्रीराधिके तव कदा चरणारविन्दं
गोविन्द जीवनधनं शिरसा वहामि

जो अपने आश्रित-जनों पर सत्प्रेम (महाप्रेम) समुद्र के मधुर मकरन्द-रस की प्रबल धारा अनवरत रूप से चारों ओर से बरसाते रहते हैं तथा जो गोविन्द के जीवन-धन हैं, श्रीराधिके ! आपके उन चरण-कमलों को मैं कब अपने सिर पर धारण करूँगी ?

२२

अब सङ्केत-कुञ्ज-गमन के समय की परिचर्य्या प्राप्त करने की वाञ्छा करते हैं—

सङ्केत कुञ्जमनुकुञ्जर मन्द गामि—
न्यादाय दिव्य मृदुचन्दन गन्ध माल्यम् ।
त्वां कामकेलि रभसेन कदा चलन्तीं
राधेनुयामि पदवीमुपदर्शयन्ती ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे राधे ! आप काम-केलि की उत्कण्ठा से भरकर सङ्केत-कुञ्ज में पधार रही हों और मैं शीतलचन्दन, गन्ध, परिमल, पुष्पमाला, आदि दिव्य और मृदु सामग्री लेकर आपको सङ्केत कुञ्ज का लक्ष्य कराती हुई मन्द-मन्द कुञ्जर-गति से आपका अनुगमन करूँ। कब ऐसी कृपा करोगी ?

२३

अब यह सुखद मनोरथ करते हैं कि यमुना में स्नान करती हुई श्रीप्रियाजी को रसिक शेखर श्रीलालजी किसी कदम्ब वृक्ष पर चढ़कर सतृष्ण नेत्रों से देख रहे हों और मैं इस दृश्य को देखूँ—

गत्वा कलिन्दतनया विजनावतार—
मुद्वर्त्तयन्त्यमृतमङ्गमनङ्गजीवम् ।
श्रीराधिके तव कदा नवनागरेन्द्रं
पश्यामि मग्न नयनं स्थितमुच्चनीपे ॥

हे श्रीराधिके ! आप स्नान करने के लिए कलिन्द-तनया यमुना के किसी निर्जन घाट पर पधारें और मैं आपके अनङ्ग-जीवनदाता श्री अङ्गों का उद्वर्त्तन (उबटन) करूँ। उस समय (तट के) उच्च कदम्ब पर स्थित नवनागर शिरोमणि श्रीलालजी को आपकी ओर निरखते हुए मैं कब देखूँगी ?

२४

श्रीराधिका-मुख-कमल-दर्शन की अभिलाषा करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सत्प्रेम राशि सरसो विकसत्सरोजं
स्वानन्द सीधु रससिन्धु विवर्द्धनेन्दुम् ।
तच्छ्रीमुखं कुटिल कुन्तलभृङ्गजुष्टं
श्रीराधिके तव कदा नु विलोकयिष्ये ॥

हे श्रीराधिके! आपका यह श्रीमुख पवित्र प्रेम-राशि-सरोवर का विकसित सरोज है अथवा आपके अपने जनों को आनन्द देनेवाला अमृत है किंवा रससिंधु का विवर्द्धन करनेवाला पूर्णचन्द्र ? अहा ! जिस मुख-कमल के आसपास काली-काली घुँघराली अलकावली मतवाले भृङ्ग-समूहों के समान लटक रही है। मैं कब आपके इस मनोहर मुख-कमल का दर्शन करूँगी ?

२५

अब अखिल सार वस्तु का लक्ष्य कराते हैं—

लावण्य सार रस सार सुखैक सारे
कारुण्य सार मधुरच्छविरूप सारे ।
वैदग्ध्य सार रति केलि विलास सारे
राधाभिधे मम मनोखिल सार सारे ॥

एक सर्व सारातिसार स्वरूप है, जो लावण्य का सार, रस का सार और समस्त सुखों का एक मात्र सार है; वही दयालुता के सार से युक्त मधुर छवि के रूप का भी सार है। जो चातुर्य्य का सार होने के कारण रति-केलि-विलास का भी सार है वही श्रीराधा नामक स्वरूप सम्पूर्ण सारों का सार इसीमें मेरा मन सदा रमा करे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२६

वह सारातिसार स्वरूप कैसा है ? इसे बतलाते हैं—

चिन्तामणिः प्रणमतां व्रजनागरीणां
चूड़ामणिः कुलमणिर्वृषभानुनाम्नः ।
सा श्याम काम वर शान्ति मणिर्निकुञ्ज
भूषामणिर्हृदय-सम्पुट सन्मणिर्नः ॥

जो आश्रित जनों के लिए समस्त फल-दाता चिन्तामणि हैं, जो व्रज-नव-तरुणियों की चूड़ामणि और वृषभानु की कुल-मणि हैं वही श्रीश्यामसुन्दर के काम को शान्त करनेवाली श्रेष्ठ मणि हैं। निकुञ्ज-भवन की भूषण-रूपा मणि तथा मेरे हृदय-सम्पुट की भी दिव्य मणि वही (श्रीराधा) हैं।

२७

इस चिन्तामणि का आश्रय लेने के लिए अपने मन को प्रोत्साहित करते हैं—

मञ्जु स्वभावमधि कल्पलता निकुञ्ज
व्यञ्जन्तमद्भुत कृपा रसपुञ्जमेव ।
प्रेमामृताम्बुधिमगाधमबाधमेतं
राधाभिधं द्रुतमुपाश्रय साधु चेतः ॥

जिनका स्वभाव बड़ा ही कोमल है और जो संकल्पाधिक काम-पूरक कल्पलता के निभृत-निकुञ्ज में विराजती हुई अद्भुत

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कृपा-रस-पुञ्ज का ही प्रकाशन करती रहती हैं। हे मेरे साधु मन! तू उसी राधा नामक प्रेमामृत के अगाध और अबाध (अमर्यादित) अम्बुधि का शीघ्र आश्रय कर ?

२८

जिन रसिक भक्तों ने प्रसिद्ध श्रीस्वामिनीजी का आश्रय लिया है उन्हें धन्यवाद देते हैं—

श्रीराधिकां निज विटेन सहालपन्तीं
शोणाधर प्रसमरच्छवि-मञ्जरीकाम् ।
सिन्दूर सम्वलित मौक्तिक पंक्ति शोभां
यो भावयेद्दशन कुन्दवतीं स धन्यः ॥

श्रीप्रियाजी अपने प्रियतम श्रीलालजी के साथ कुछ मधुर-मधुर बातें कर रही हैं, जिससे उनके लाल-लाल ओठों से सौन्दर्य-राशि निकल-निकलकर चारों ओर फैल रही है। अहा ! जिनके विशाल भाल पर सिन्दूर-रञ्जित मोतियों की पंक्ति शोभायमान है और दन्त पंक्ति कुन्द-कलियों को भी लज्जित कर रही है। वही धन्य हैं जो ऐसी श्रीप्रियाजी के भावना-परायण हैं।

२९

अब कहते हैं कि अखिल रसिक-जन आराधित उन श्रीराधा को मैं अपने मन में धारण करता हूँ —

पीतारुणच्छविमनन्ततडिल्लताभां
प्रौढानुराग मदविह्वल चारुमूर्त्तिम् ।
प्रेमास्पदां व्रजमहीपति तन्महिष्यो—
र्गोविन्दवन्मनसि तां निदधामिराधाम् ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिनकी छवि पीत और अरुणिमा-मिश्रित स्वर्ण के समान है, आभा अनन्त विद्युन्माला की दीप्ति के समान है। जिनकी सुन्दर मूर्त्ति प्रौढ़ अनुराग से विह्वल है और जो व्रजराज एवं व्रजरानी के लिए गोविन्द के समान प्रेमपात्र हैं; उन श्रीराधा को मैं अपने मन में धारण करती हूँ।

३०

अब श्रीस्वामिनीजी का दास्य प्राप्त करने की प्रार्थना करते हैं—

निर्माय चारुमुकुटं नव चन्द्रकेण
गुञ्जाभिरारचित हारमुपाहरन्ती।
वृन्दाटवी नवनिकुञ्ज गृहाधिदेव्याः
श्रीराधिके तव कदा भवितास्मि दासी॥

स्वामिनी! मैं नवीन-नवीन मयूर-चन्द्रिकाओं से निर्मित सुन्दर मुकुट एवं गुञ्जा-रचित हार आपके निकट पहुँचाऊँ। वृदावन नव-निकुञ्ज-गृह की अधिदेवी हे श्रीराधे! मैं आपकी ऐसी दासी कब होऊँगी?

३१

श्रीस्वामिनीजी के कृपा-कटाक्ष-प्राप्ति की प्रार्थना करते हैं—

सङ्केत कुञ्जमनुपल्लवमास्तरीतुं
तत्तत्प्रसादमभितः खलु संवरीतुम्।
त्वां श्यामचन्द्रमभिसारयितुं धृताशे
श्रीराधिके मयि विधेहि कृपा कटाक्षम्॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वामिनि! मैंने केवल यही आशा धारण कर रखी है कि उन-उन संकेतकुञ्जों में नवीन-नवीन पल्लवों की सुन्दर शय्या बिछाऊँ और वहाँ पर श्यामचन्द्र (श्रीलालजी) से मिलन कराने के लिए तुम्हें छिपाकर ले जाऊँ। तब आप मेरी इस सेवा से प्रसन्न हो उठें। हे श्रीराधिके! आप तो मुझपर अपने इतने ही कृपा-कटाक्ष का विधान कीजिए।

३२

अब श्रीराधिका-चरण-रेणु का स्मरण करते हैं--

दूरादपास्य स्वजनान्सुखमर्थ कोटिं
सर्वेषु साधनवरेषु चिरं निराशः।
वर्षन्तमेव सहजाद्भुत सौख्य धारां
श्रीराधिका चरणरेणुमहं स्मरामि ॥

मैंने अपने स्वजन-सम्बन्धी वर्ग और कोटि-कोटि सम्पत्तियों के सुख को दूर से ही त्याग दिया है तथा (परमार्थ-सम्बन्धी) समस्त श्रेष्ठ साधनों में भी मेरी चिर निराशा हो चुकी है। अब तो मैं स्वभावतया अद्भुत सुख की धारा का ही वर्षण करनेवाले श्रीराधिका-चरण-रेणु का स्मरण करती हूँ।

३३

श्रीहितअलिजी अब तीन श्लोकों में श्रीस्वामिनीजी के रसोल्लास रूप कनक-कुच-कुम्भों का स्मरण करती हैं।

वृन्दाटवी प्रकट मन्मथ कोटि मूर्त्तेः
कस्यापि गोकुलकिशोर निशाकरस्य।
सर्वस्व सम्पुटमिव स्तनशातकुम्भ
कुम्भ द्वयं स्मर मनो वृषभानुपुत्र्याः॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे मेरे मन ! तू श्रीवृषभानुनन्दिनी के स्वर्ण-कलशों के समान युगल स्तनों का स्मरण कर। जो वृन्दावन में प्रकट रूप से विराजमान् कोटि कन्दर्प्य-मूर्त्ति किन्हीं गोकुल-किशोरचन्द्र के सर्वस्व-सम्पुट के समान हैं।

३४

शृङ्गार-रस समस्त रसों का शिरोमणि है और उसकी साक्षात् मूर्त्ति हैं श्रीकृष्ण। किन्तु वे भी किसी अनिर्वचनीय महामधुर-शृङ्गारोत्तर रस में डूबे रहते हैं। वह क्या वस्तु है? श्रीमन्महाप्रभु उसका किञ्चित् आभास करा रहे हैं।

सान्द्रानुराग रससार सरः सरोजं
किं वा द्विधा मुकुलितं मुखचन्द्र भासा।
तन्नूतन स्तन युगं वृषभानुजायाः
स्वानन्द सीधु मकरन्द घनं स्मरामि॥

घनीभूत प्रेम-रस-सार-सरोवर का एक सरोज मानो मुखचन्द्र का प्रकाश पाकर दो रूपों में मुकुलित हो गया है और जो स्वानन्द-अमृत के मकरन्द का सघन स्वरूप है मैं श्रीवृषभानुनन्दिनी के उस नवीन स्तन-युग्म का स्मरण करती हूँ।

३५

फिर भी उपरोक्त विषय का ही वर्णन करते हैं--

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रीडासरः कनक पङ्कज कुड्मलाय
स्वानन्दपूर्ण रसकल्पतरोः फलाय ।
तस्मै नमो भुवनमोहन मोहनाय,
श्रीराधिके तव नवस्तन मण्डलाय ॥

श्रीराधिके ! केलि-सरोवर की कनक-पङ्कज-कली के समान अथवा आपके अपने ही आनन्द से परिपूर्ण रसकल्पतरु के फल के समान त्रिभुवन-मोहन श्रीमोहनलाल का भी मोहन करनेवाले आपके नवीन स्तन-मण्डल को नमस्कार है ।

३६

अब श्रीस्वामिनी कृपावलोकन की याचना करते हैं--

पत्रावलीं रचयितुं कुचयोः कपोले
बद्धुं विचित्र कबरी नव मल्लिकाभिः ।
अङ्गं च भूषयितुमाभरणैर्धृताशे
श्रीराधिके मयि विधेहि कृपावलोकम् ॥

हे श्रीराधिके ! मैंने तो केवल यही आशा धारण कर रखी है और आप भी मुझपर अपनी कृपा-दृष्टि का ऐसा ही विधान करें कि मैं आपके युगल-कुच-मण्डल और कपोलों पर (चित्र-विचित्र) पत्रावली-रचना करूँ । मल्लिका के नवीन-नवीन पुष्पों को गूँथकर विचित्र रीति से आपका कबरी-बन्धन करूँ और आपके सुन्दर सुकोमल अङ्गों में तदनुरूप आभरण आभूषित करूँ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३७

प्रेम-वैचित्य की दशा में श्रीलालजी के विरह का भ्रम प्राप्त होने पर श्रीप्रियाजी विलाप करती हुई आकुल नयनों से अपने प्रियतम को खोज रही हैं। ऐसी श्रीप्रियाजी की प्रसन्नता की आकाङ्क्षा करते हैं—

श्यामेति सुन्दरवरेति मनोहरेति
कन्दर्प-कोटि-ललितेति सुनागरेति।
सोत्कण्ठमह्नि गृणती मुहुराकुलाक्षी
सा राधिका मयि कदा नु भवेत्प्रसन्ना॥

जो दिवस-काल में "हे श्याम! हा सुन्दर वर! हा मनोहर! हे कन्दर्प-कोटि-ललित! अहो चतुर शिरोमणि!" ऐसे उत्कण्ठा-युक्त शब्दों से बारम्बार गान करती हैं। वे आकुल-नयनी श्रीराधिका मुझपर कब प्रसन्न होंगी?

३८

श्रीलालजी का विमोहन करनेवाली श्रीप्रियाजी की परिचर्य्या (सेवा) करने की आकाङ्क्षा करते हैं—

वेणुः करान्निपतितः स्खलितं शिखण्डं
भ्रष्टं च पीतवसनं व्रजराज सूनोः।
यस्याः कटाक्ष शरपात विमूर्च्छितस्य
तां राधिकां परिचरामि कदा रसेन॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिनके नयन-बाणों की चोट से श्रीव्रजराजकुमार की मुरली हाथ से छूट गिरती है। सिर का मोर-मुकुट खिसक चलता है और पीताम्बर भी स्थान-च्युत हो जाता है; यहाँ तक कि वे मूर्च्छित होकर गिर पड़ते हैं। अहा ! क्या मैं कभी ऐसी श्रीराधिका की प्रेम-पूर्वक परिचर्य्या करूँगी ?

३६

श्रीस्वामिनीजी की परिचर्य्या ही मुझे जन्म-जन्म मिलती रहे अब यह अभिलाषा करते हैं—

तस्या अपार रस-सार विलास-मूर्त्ते—
रानन्द-कन्द परमाद्भुत सौम्य लक्ष्म्याः।
ब्रह्मादि दुर्गमगतेर्वृषभानुजायाः
कैङ्कर्य्यमेव ममजन्मनि-जन्मनि स्यात् ॥

जो अपार रस-सार की विलास-मूर्त्ति, आनन्द की मूल एवं परमाद्भुत सुख की सम्पत्ति हैं एवं जिनकी गति ब्रह्मादि को भी दुर्गम है। उन श्रीवृषभानुनन्दिनी जू का कैङ्कर्य्य ही मुझे जन्म-जन्मान्तरों में प्राप्त होता रहे।

४०

फिर भी उपरोक्तानुसार ही—

पूर्णानुराग रसमूर्त्ति तडिल्लताभं
ज्योतिः परं भगवतो रतिमद्रहस्यम्।
यत्प्रादुरस्ति कृपया वृषभानु गेहे
स्यात्किङ्करी भवितुमेव ममाभिलाषः ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक रहस्यमयी परम ज्योति है। जो परात्पर परमपुरुष भगवान् श्रीकृष्ण को भी अपने आप में रमा लेती है। जिसकी कान्ति विद्युल्लता के समान देदीप्यमान् है और जो पूर्णतम अनुराग-रस की मूर्ति है। अहो! कृपापूर्वक ही वह श्रीवृषभानु-भवन में प्रादुर्भूत हुई है। मेरी तो यही अभिलाषा है कि उसी की दासी हो रहूँ।

४१

जिनकी किङ्करी होने की अभिलाषा है, अब उन्हीं का चन्द्र-वदन स्मरण करते हैं।

प्रेमोल्लसद्रस विलास विकास कन्दं
गोविन्द लोचन वितृप्त चकोर पेयम्।
सिञ्चन्तमद्भुत रसामृत चन्द्रकौघैः
श्रीराधिकावदन चन्द्रमहं स्मरामि॥

जो प्रेम से उल्लसित रस-विलास का विकास बीज है एवं गोविन्द के अतृप्त लोचन-चकोरों के लिये पेय स्वरूप है, उसी अद्भुत रसामृत-चन्द्रिका-धारा-सिञ्चन-कारी श्रीराधिका-मुख-चन्द्र का मैं स्मरण करती हूँ।

४२

अब सहचरी-भाव की अत्यन्त धृष्टतावश सुरतोत्सव भावना-भावित हृदय से श्रीप्रियाजी को रहस्य-निकुञ्ज में पहुँचाने की अभिलाषा करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सङ्केत कुन्ज निलये मृदुपल्लवेन
क्लृप्ते कदापि नव सङ्ग भयत्रपाढ्याम् ।
अत्याग्रहेण करवारिरुहे गृहीत्वा
नेष्ये विटेन्द्र-शयने वृषभानुपुत्रीम् ॥

मैं, रहस्य निकुञ्ज गृह में कोमल-पल्लव-रचित रसिकेन्द्र-शय्या पर नवीन सङ्गम के भय एवं लज्जा से भरी हुई श्री-वृषभानु-किशोरी को कर-कमल पकड़कर अत्यन्त आग्रह के साथ शयन-गृह में कभी ले जाऊँगी ?

४३

सङ्केत-कुञ्ज में पहुँचाने के समय वहाँ सेवा-सम्बन्धी कुछ सामग्री (पुष्प, चन्दन, माला आदि) भी पहुँचानी होगी, अतएव उस कैङ्कर्य्य की अभिलाषा करते हैं—

सद्गन्ध माल्य नवचन्द्र लवङ्ग सङ्ग
ताम्बूल सम्पुटमधीश्वरि मां वहन्तीम् ।
श्यामं तमुन्मद-रसादभि-संसरन्ती
श्रीराधिके करुणयानुचरीं विधेहि ॥

हे अधीश्वरि ! जब आप रस से उन्मद होकर श्रीलालजी के समीप पधारने लगें, उस समय मैं सुन्दर सुगन्धित मालाएँ और नव-कर्पूर लवङ्ग-युक्त ताम्बूल-सम्पुट (डवा) लेकर चलूँ। हे श्रीराधिके ! कृपा करके आप मुझे अपनी ऐसी ही अनुचरी बनाइये ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

४४

उपरोक्त अभिसरण किस अवस्था में होता है, उसका लक्ष्य कराते हैं—

श्रीराधिके तव नवोद्गम चारुवृत्त
वक्षोजमेव मुकुलद्वय लोभनीयम् ।
श्रोणीं दधद्रस गुणैरुपचीयमानं
कैशोरकं जयति मोहन-चित्त-चोरम् ॥

हे श्रीराधिके ! चारु, वर्त्तुल, मुकुलित स्तन-द्वय द्वारा लोभनीय, नितम्ब विशिष्ट युक्त रस-स्वरूप श्रीकृष्ण के नित्य सेवनादि गुणों द्वारा वर्द्धमान् एवं मोहन के भी चित्त का हरण करने वाला आपका कैशोर जययुक्त हो रहा है ।

४५

उस कैशोर-रस की पुष्टि के लिए एकान्त-केलि कालीन रस-मय शब्दों के श्रवण की अभिलाषा करते हैं—

संलापमुच्छलदनङ्ग तरङ्गमाला
संक्षोभितेन वपुषा व्रजनागरेण ।
प्रत्यक्षरं क्षरदपार रसामृताब्धि
श्रीराधिके तव कदा नु शृणोम्यदूरात् ॥

अनेकों अनङ्गों की तरङ्गमाला उच्छलित हो-होकर जिनके श्रीवपु को आन्दोलित कर रही है, ऐसे व्रजनागर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीलालजी के साथ आप संलाप करती हों। जिस संलाप के अक्षर-अक्षर में अपार रसामृत-सिन्धु झरता रहता है। हे स्वामिनि! मैं समीप ही स्थित होकर आपके उस महामधुर संलाप को कब सुनूँगी?

४६

प्रेम-वैचित्य की दशा है। श्रीप्रियाजी अपने प्रियतम की गोद में विराजमान हैं, फिर भी उनके विरह के भ्रम से 'हाय! हाय!!' कर उठती हैं। श्रीहिताचार्य्य महाप्रभु ऐसी प्रेम-विह्वल अपनी स्वामिनीजी की जय-जयकार करते हैं—

अङ्कस्थितेऽपि दयिते किमपि प्रलापं
हा मोहनेति मधुरं विदधत्यकस्मात्।
श्यामानुराग मदविह्वल मोहनाङ्गी
श्याममणिर्जयति कापि निकुञ्ज सीम्नि॥

यद्यपि अपने प्रियतम की गोद में स्थित हैं, फिर भी अकस्मात् 'हा मोहन!' ऐसा मधुर प्रलाप कर उठती हैं; ऐसी श्याम-सुन्दर के अनुराग-मद से विह्वल मोहनाङ्गी कोई श्यामामणि निकुञ्ज-प्रान्त में जययुक्त विराजमान् हैं।

४७

अब श्रीप्रिया-प्रियतम के रसोत्सव-सुख में मग्न होने की अभिलाषा करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुञ्जान्तरे किमपि जात-रसोत्सवायाः
श्रुत्वा तदालपित सिञ्जित मिश्रितानि ।
श्रीराधिके तव रहः परिचारिकाहं
द्वारस्थिता रस-ह्रदे पतिता कदा स्याम् ॥

हे श्रीराधिके ! किसी अभ्यन्तर कुञ्ज-भवन में आप अपने प्रियतम के साथ किसी अनिर्वचनीय रसोत्सव में संलग्न हों, जिससे भूषण-ध्वनि मिश्रित आपके मधुर आलाप का स्वर सुनाई दे रहा हो और मैं आपकी एकान्त परिचारिका होकर कुञ्जद्वार में स्थित होकर उसे सुनूँ। और उसे सुनते ही प्रेम-विह्वल होकर रस के सरोवर में डूब जाऊँ । हे स्वामिनि ! ऐसा कब होगा ?

४८

शृंगार रस के दो प्रकार हैं—संयोगात्मक और वियोगात्मक। दोनों में से प्रथम-संयोग में भावी-विरह की कल्पना निवास करती है और दूसरे वियोग में सङ्गम की इच्छा है। इस तरह दोनों में प्रीति की अपूर्णता है। इन दोनों से विलक्षण एक और स्थिति है, वह है—'मिलन में ही विरह'। इसे श्रीहिताचार्य्यपाद ने 'प्रेम-विरहा' शब्द से वर्णन किया है। अन्यत्र अपनी वाणी में अपने इस सिद्धान्त का निरूपण आपने दो कुण्डलियों में किया है। जिनका भाव यह है कि चकई अपने प्रियतम से रात्रिकाल में बिछुड़कर भी प्रातःकाल फिर मिलती है अर्थात् प्रियतम के वियोग में भी जीवित रहा आती है। चकई की इस प्रीति को सारस (लक्ष्मणा) तुच्छ समझती है क्योंकि (सारस) लक्ष्मणा अपने प्रियतम से बिछुड़ते ही प्राण त्याग देती है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किन्तु श्रीहिताचार्य्य महाप्रभु कहते हैं कि चकई का प्रेम तो अपूर्ण है ही क्योंकि वह नित्य मिलन के सुख से अपरिचित है और इसी प्रकार लक्ष्मणा (सारस) का भी प्रेम पूर्ण नहीं, न्यून है क्योंकि उसे विरह-सुख का अनुभव नहीं है।

इस प्रकार चकई और लक्ष्मणा दोनों का प्रेम अपूर्ण है। किन्तु आप प्रेम का तीसरा स्वरूप यह बताते हैं कि नित्य-मिलन में विरह की सी अतृप्ति रही आवे। प्रिया-प्रियतम एक दूसरे से नयनाञ्चल ओट भी न हों और प्रतिक्षण प्रेम की वृद्धि होती रहे। ऐसा ज्ञात हो, मानों इसी क्षण मिले हैं। रूप-दर्शन करते तृप्ति न हो। रूप की प्यास प्रतिक्षण बढ़ती ही जाय"। इसी अनिर्वचनीय प्रेम का नाम है—'प्रेम विरहा'।*इस प्रेम की प्रतिक्षण वर्द्धमान् दशा को श्रीध्रुवदासजी ने यों प्रकट किया है—

न आदि न अन्त विहार करैं दोऊ लाल प्रिया में भई न चिन्हारी।
नई नई भाँति नई छबि काँति नई नवला नव नेह बिहारी॥
रहे मुख चाहि दिएँ चित आहि परे रस प्रीति सु सर्वसु हारी।
रहैं इक पास करैं मृदु हास सुनौ 'ध्रुव' प्रेम अकत्थ कथा री॥

अब इस श्लोक में श्रीप्रियाज़ी के प्रेम-विरहा स्वरूप का वर्णन करते हैं—

वीणां करे मधुमतीं मधुर-स्वरां ता—
माधाय नागर-शिरोमणि भाव-लीलाम्।
गायन्त्यहो दिनमपार मिवाश्रु-वर्षै—
र्दुःखान्नयन्त्यहह साहृदि मेऽस्तु राधा॥

---

* इस विषय का विशद वर्णन अन्य वाणी-ग्रंथ श्रीसेवक-वाणी बयालीस-लीला आदि में है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अहो ! जो स्वर-लहरी भरी अपनी मधुमती नाम्नी वीणा को उठाकर कर-कमलों में धारण करके अपने प्रियतम नागर-शिरोमणि श्रीलालजी की भाव-लीलाओं को गाती रहती हैं और बड़ी कठिनता से अपार सा दिन अश्रुओं की वर्षा द्वारा व्यतीत करती हैं। अहह ! ऐसी प्रेम-विह्वला श्रीराधा मेरे हृदय में निवास करें।

४६

अब युगल-किशोर के मिलन-रस को अपने हृदय में देखने की भावना करते हैं—

अन्योन्यहास परिहास विलास केली
वैचित्र्य जृम्भित महारस-वैभवेन ।
वृन्दावने विलसतापहृतं विदग्ध—
द्वन्द्वेन केनाचिदहो हृदयं मदीयम् ॥

अहो ! पारस्परिक हास-परिहास युक्त विविध-विलास-केलि की विचित्रता से उच्छलित महा रस-विभव के द्वारा श्रीवृन्दावन में विलास करने वाले किन्हीं विदग्ध युगल ने मेरे हृदय का अपहरण कर लिया।

५०

अब श्रीप्रिया-स्वरूप का किञ्चित् लक्ष्य कराते हैं—

महाप्रेमोन्मीलन्नव रस सुधा सिन्धु लहरी
परीवाहैर्विश्वं स्नपयदिव नेत्रान्त नटनैः ।
तडिन्माला गौरं किमपि नव कैशोरं मधुरं
पुरन्ध्रीणां चूडाभरण नवरत्नं विजयते ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिनके चपल नेत्रों का नर्त्तन ही महान्तम प्रेम के विकाश का नूतन-रस से परिपूर्ण सुधासिन्धु है। जिसकी लहरियों के प्रवाह से मानों विश्व को स्नान करा रही हैं। जो विद्युत-पंक्ति के समान गौर और समस्त ब्रज-नव तरुणियों की नव-रत्न हैं—शिरोमणि-भूषण हैं, वे कोई नव मधुर किशोरी सर्वोपरिता को प्राप्त हैं।

५१

पहले जिन मधुर-किशोरी का वर्णन किया है, अब उनका नाम प्रकट करते हैं—

अमन्द प्रेमाङ्कश्लथ सकल निर्बन्धहृदयं
दयापारं दिव्यच्छवि मधुर लावण्य ललितम्।
अलक्ष्यं राधाख्यं निखिलनिगमैरप्यतितरां
रसाम्भोधेः सारं किमपि सुकुमारं विजयते॥

तीव्र प्रेम के कारण जिनके हृदय के समस्त बन्धन (आग्रह) शिथिल हो चुके हैं, जो दया की सीमा हैं। एवं जिनकी दिव्य-छवि लावण्य-माधुर्य्य से अति-ललित हो रही है, वे निखिल-निगमों को भी अत्यन्त अलक्षित, रस-समुद्र की सार-स्वरूपा कोई एक अनिर्वचनीय सुकुमारी हैं। उन श्रीराधा की जय हो, विजय हो।

५२

इस श्लोक में निखिल आगम-निगम अलक्षित श्रीस्वामिनीजी की दासी होने की इच्छा करते हुए सङ्केत रूप से साधकों को अपने दिव्य (साधक) स्वरूप की भावना का आदेश करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दुकूलं बिभ्राणामथ कुच तटे कंचुक पटं
प्रसादं स्वामिन्याः स्वकरतल दत्तं प्रणयतः ।
स्थितां नित्यं पार्श्वे विविध परिचर्य्यैक चतुरां
किशोरीमात्मानं किमिह सुकुमारीं नु कलये ॥

अहो ! मैं अपनी स्वामिनीजी के निज कर-कमलों के स्नेह-पूर्वक दिए हुए प्रसाद रूप दुकूल और कञ्चुकि-पट को अपनी कुच-तटी में धारण करूँगी और सदा अपनी स्वामिनी के पार्श्व में स्थित रहकर विविध परिचर्य्याओं में चतुर सुकुमारी किशोरी के रूप में अपने आपको क्या यहाँ देखूँगी।

५३

विविध परिचर्य्या-चातुरी का स्वरूप दिखाते हुए पुनः उसी भाव की प्राप्ति की प्रार्थना करते हैं—

विचिन्वन्ती केशान् क्वचन करजैः कंचुक पटं
क्व चाप्यामुञ्चन्ती कुच कनक दीव्यत्कलशयोः ।
सुगुल्फे न्यस्यन्ती क्वचन मणि मञ्जीर युगलं
कदा स्यां श्रीराधे तव सुरिचारिण्यहमहो ॥

अहो श्रीराधे ! मैं आपकी ऐसी सुपरिचारिका कब बनूँगी ? जो कभी अपने कर-नखों से आपके केशों को सुलझाऊँ ? कभी आपके कनक-कलशों के समान गोल-गोल देदीप्यमान कुच-कलशों पर कञ्चुकि-पट धारण कराऊँ ? तो कभी आपके दोनों सुहावने गुल्फों में मणि के मञ्जीर युगल (नूपुर) पहनाऊँ ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पूर्व दो श्लोकों में अपने किङ्करीस्वरूप की याचना (भावना) और तदनुसार परिचर्य्या की भी प्रार्थना कर चुके हैं। अब इस श्लोक में अपनी स्वामिनीजी के चरणारविन्दों को मनमें बसाने की भावना करते हैं जिनकी कृपा से ही किङ्करी-भाव और तदनुसार सेवा प्राप्त होगी –

अतिस्नेहादुच्चैरपि च हरिनामानि गृणत —
स्तथा सौगन्धाद्यैर्बहुभिरुपचारैश्च यजतः।
परानन्दं बृन्दावनमनुचरन्तं च दधतो
मनो मे राधायाः पद मृदुल पद्मे निवसतु ॥

मैं अत्यन्त स्नेह-पूर्वक उच्च स्वर से श्रीहरि के नामों का गान करती रहूँ; सुगन्ध आदि अनेक उपचारों से उनका पूजन करती रहूँ तथा श्रीवृन्दावन में अनुचरण करती हुई परमानन्द को धारण करती रहूँ, इसके साथ साथ मेरा मन निरन्तर श्रीराधिका के मृदुल पाद-पद्मों में ही बसा रहे।

५५

पुनः उपरोक्त भाँति से श्रीराधिका-पाद-कमलों की अनन्यता का भाव प्रकट करते हैं—

निज प्राणेश्वर्य्या यदपि दयनीयेयमिति मां
मुहुश्चुम्बत्यालिङ्गति सुरत माध्व्या मदयति।
विचित्रां स्नेहर्द्धिं रचयति तथाप्यद्भुत गते—
स्तवैव श्रीराधे पद रस विलासे मम मनः॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'मेरी प्राणेश्वरी की यह दृथा पात्र है,' ऐसा जानकर अद्भुत गतिशील प्रियतम मेरा बार-बार चुम्बन करते हैं, और सुरत-मदिरा से मुझे उन्मद बना देते हैं। यद्यपि वे इस प्रकार विचित्र स्नेह-वैभव की रचना करते हैं; तथापि हे श्रीराधे ! मेरा मन तो आपके ही श्रीचरणों के रस-विलास में रहता है।

५६

युगल की शैशव-केलि से ही उनके विवाहोत्सव की रचना मानों उनके नित्य कैशोर सुख और प्रेम का मूर्त्त-रूप है। यही विवाह समस्त सहचरि-समाज की आभ्यन्तरिक वाञ्छा है। अतएव अब एक श्लोक द्वारा किशोर-किशोरी के विवाहोत्सव का वर्णन करते हैं—

प्रीतिं कामपि नाम मात्र जनित प्रोद्दाम रोमोद्गमां
राधा माधवयोः सदैव भजतोः कौमार एवोज्वलाम्।
वृन्दारण्य नव-प्रसून निचयानानीय कुञ्जान्तरे
गूढं शैशव खेलनैर्बत कदा कार्य्यो विवाहोत्सवः॥

श्रीराधा-माधव किसी अनिर्वचनीय उज्ज्वल प्रीति-पूर्ण कौमार अवस्था का ही सेवन करते रहते हैं, जिसमें परस्पर के नामोच्चारण-मात्र से ही प्रफुल्लता-पूर्वक समस्त रोम पुलकित हो उठते हैं। अहो ! क्या कभी ऐसा होगा कि मैं श्रीवृन्दावन से नवीन-नवीन पुष्प चयन करके लाऊँ, तथा शैशवावस्था के खेल ही खेल में किसी गूढ़ कुञ्ज के भीतर हर्ष के साथ दोनों का विवाहोत्सव करूँ ?

५७

अब यमुना के सुभग तट पर श्रीप्रिया-प्रियतम की वाद्य-गान-मुग्ध छवि के दर्शन की भावना करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विपञ्चित सुपञ्चमं रुचिर वेणुना गायता
  प्रियेण सहवीणया मधुरगान विद्या निधिः ।
करीन्द्र वनसम्मिलन्मद करिण्युदारक्रमा
  कदा नु वृषभानुजा मिलतु भानुजा रोधसि ॥

जैसे मदमाती करिणी बन में गजराज से मिलन प्राप्त करने के लिये उदार गति से आती हो, ऐसे ही जो मद-गज-माती गति से पाद-विन्यास करती हुईं श्रीयमुना के पुलिन पर आ पधारी हैं। तथा अपनी वीणा में सुमधुर गान करती हैं, क्योंकि इस कला की आप निधि हैं। अहा! आपकी वीणा के पञ्चम स्वर से मिलाकर श्रीलालजी ने भी अपने वेणु की तान छेड़ दी है। ऐसी श्रीवृषभानु-नन्दिनी अपने प्रियतम के साथ मुझे यमुना-तट पर कब मिलेंगी?

५८

अब रास-विलासोन्मत्त छवि-दर्शन की भावना करते हैं—

सहासवर मोहनाद्भुत विलास रासोत्सवे
  विचित्रवर ताण्डव श्रमजलार्द्र गण्डस्थलौ ।
कदा नु वरनागरी रसिक शेखरौ तौ मुदा
  भजामि पद लालनाल्ललित जीवनं कुर्वती ॥

परम मनोहर हास-युक्त अद्भुत विलास-रासोत्सव में विचित्र और उत्तमोत्तम नृत्य की गतियों के लेने से जिनके युगल गण्डस्थल श्रम-जल (प्रस्वेद) से गीले हो रहे हैं। उन नागरी-मणि श्रीप्रियाजी और रसिक-शेखर श्रीलालजी के पद-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कमलों के लालन से जीवन को सुन्दर बनाती हुई, कब आनन्द-पूर्वक उनका भजन करूँगी ?

५६

उपरोक्त रीति से पुनः यमुना-स्नान का मनोरथ करते हैं—

वृन्दारण्य निकुञ्ज मञ्जुल गृहेष्वात्मेश्वरीं मार्गयन्
हा राधे सविदग्ध दर्शित पथं किं यासिनेत्यालपन् ।
कालिन्दी सलिले च तत्कुच तटी कस्तूरिका पङ्किले
स्नायं स्नायमहो कुदेहजमलं जह्यां कदा निर्मलः ॥

"हा राधे ! मैंने चतुर-सङ्केत द्वारा जो पथ आपको दिखलाया है, उस पर न चलोगी क्या ?" मैं इस प्रकार विलाप करती और श्रीवृन्दावन के मञ्जुल निकुञ्ज-गृहों में आपको खोजती हुई फिरूँ तथा आपकी कुच-तटी-चर्चित कस्तूरी से पङ्किल कालिन्दी-सलिल में बारम्बार स्नान करके अपने कुदेह-जनित मल को त्यागकर कब निर्मल होऊँगी ?

६०

अब एकान्त परिचर्य्या करनेवाली दासी होने की अभिलाषा करते हैं—

पादस्पर्श रसोत्सवं प्रणतिभिर्गोविन्दमिन्दीवर
श्यामं प्रार्थयितुं सुमञ्जुल रहः कुञ्जाश्च संमार्जितुम् ।
माला चन्दन गन्ध पूर रसवत्ताम्बूल सत्पानका-
न्यादातुं च रसैक, दायिनि तव प्रेष्या कदा स्यामहम् ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रस की एकमात्र दाता मेरी स्वामिनि ! प्रणति के द्वारा आपके चरणों का स्पर्श ही जिनके लिये रसोत्सव रूप है, ऐसे इन्दीवर श्याम को आपके प्रति प्रार्थित करूँ। सुन्दर सुमञ्जुल एकान्त निकुञ्ज-भवन का मार्जन करूँ, तथा पुष्प-माल, चन्दन, इत्रदान (परिमल पात्र), रस युक्त ताम्बूल और अनेक प्रकार के सुस्वादु पेय पदार्थ आपके कुञ्ज-भवन में पहुँचाऊँ। भला, कभी ऐसी टहल करने वाली दासी रूप में आप मुझे स्वीकार करेंगी ?

६१

श्रीस्वामिनी-चरणारविन्द की रसमयी सेवा प्राप्त हो जाने पर सभी साध्य साधन कथाएँ व्यर्थ हो जाती हैं, इस पर कहते हैं—

लावण्यामृत वार्त्तया जगदिदं संप्लावयन्ती शर-
द्राका चन्द्रमनन्तमेव वदनं ज्योत्स्नाभिरातन्वती।
श्रीवृन्दावन कुंज मंजु गृहिणी काप्यस्ति तुच्छामहो
कुर्वाणाखिल साध्य साधन कथां दत्वा स्वदास्योत्सवम्॥

जो इस जगत् को अपनी सौन्दर्य्य-सुधा-वाणी से संप्लावित करती हैं तथा जो अपने श्रीमुख की ज्योत्स्ना से मानो शरत्कालीन अनन्त चन्द्रमाओं का प्रकाश विस्तार करती हैं। अहो ! आश्चर्य है कि श्रीवृन्दावन के मञ्जुल-निकुञ्ज-भवन की अनिर्वचनीय उन्हीं स्वामिनीने अपनी सेवा का आनन्द देकर समस्त साध्य-साधन कथाओं को मेरे लिये तुच्छ कर दिया।

६२

अब श्री प्रिया-प्रियतम के संकेत-मिलन की भावना करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दृष्ट्या यत्र क्वचन विहिता ग्रेडने नन्दसूनोः
प्रत्याख्यानच्छलत उदितोदार संकेत-देशा।
धूर्त्तेन्द्र त्वद्भयमुपगता सा रहो नीपवाट्यां
नैका गच्छेत्कितव कृतमित्या दिशेत्कर्हि राधा॥

हे कितव! हे धूर्त्तशिरोमणि! आपके दो-तीन-बार प्रार्थना करने पर (उसके उत्तर रूप में) जिन्होंने अपनी दृष्टि के द्वारा उदार सङ्केत स्थान का निर्देश कर दिया है ऐसी श्रीराधा तुम्हारे वचनों की आशङ्कावश (भय-वश) तुमसे मिलने न जा सकेंगी; तब अनुचरी रूप में सङ्ग चलने के लिये मुझे कब आदेश करेंगी?

६३

श्रीस्वामिनीजी में अत्यन्त चातुरी है, उसमें से प्रधान प्रधान केवल छः स्थानों की चातुरी का निर्देश करते हैं—

सा भ्रूनर्त्तन चातुरी निरुपमा सा चारुनेत्राञ्चले
लीला खेलन चातुरी वरतनोस्तादृग्वचस्चातुरी।
संकेतागम चातुरी नव नव क्रीडाकला चातुरी
राधाया जयतात्सखीजन परीहासोत्सवे चातुरी॥

अहा! श्रीराधा की निरुपम भृकुटियों की वह नर्त्तन चातुरी! सुन्दर-सुन्दर नयन-कोरों का वह लीला-पूर्ण कटाक्ष! एवं वर-वदनी श्रीस्वामिनी की मनोहर वचन-चातुरी! एकान्त में आगमन-निगमन की चातुरी के साथ-साथ नवीन केलि-कलाओं की विदग्धता और सखिजनों के साथ हास-परिहास आनन्द की चातुरी! सभी एक से एक बढ़कर हैं—सभी उत्कृष्ट हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब श्रीप्रिया प्रियतम की कुमार अवस्था में ही अनङ्ग-केलि अवलोकन और उसकी शिक्षा-दीक्षा सम्बन्धी अभिलाषा करते हैं—

उन्मीलन मिथुनानुराग गरिमोदार स्फुरन्माधुरी
धारा-सार धुरीण दिव्य ललितानङ्गोत्सवैः खेलतोः।
राधा-माधवयोः परं भवतु नः चित्ते चिरार्त्तिस्पृशो
कौमारे नव-केलि शिल्प लहरी शिक्षादि दीक्षा रसः॥

श्रीराधा-माधव की कौमार-कालीन नवीन-केलि चातुरी-तरङ्गों की परस्पर उपदेश-रूप शिक्षा-दीक्षा का रस परावधि रूप से मेरे चित्त में उदित हो। अहा! कितने मधुर हैं, ये श्रीराधा माधव? दोनों के हृदयों में महानतम उदार अनुराग का विकाश हो रहा है, जिससे माधुर्य्य-धारा की सार-धुरीण का स्फुरण हो रहा है। वह धुरीण क्या है? दोनों की दिव्यतम ललित अनङ्ग-उत्सव की क्रीड़ा। जो कुमार अवस्था में ही चित्त में बड़ी भारी आर्त्ति को उत्पन्न कर रही है; जिससे दोनों परस्पर एक दूसरे के श्रीअङ्गों का बारम्बार स्पर्श कर रहे हैं।

६५

व्रज-नगर की गलियों में खेलते समय ही कुमार से कैशोर अवस्था में दोनों के आ जाने और उस अवस्था के रस से सखीजनों को सुख देने का वर्णन करते हुए उसके दर्शन की आकांक्षा करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कदा वा खेलन्तौ व्रजनगर वीथीषु हृदयं
हरन्तौ श्रीराधा व्रजपति कुमारौ सुकृतिनः।
अकस्मात् कौमारे प्रकट नव कैशोर-विभवौ
प्रपश्यन्पूर्णः स्यां रहसि परिहासादि निरतौ ॥

क्या कभी मैं श्रीराधा और श्रीव्रजपति-कुमार का दर्शन करके पूर्णता को प्राप्त होऊँगी ? जो किसी समय व्रज-नगर की वीथियों में खेलते-फिरते एकान्त पाकर अकस्मात् कौमारावस्था को त्याग कर नव किशोरता के वैभव को प्रकट करके दिव्य हास-परिहास में संलग्न हो गये हैं एवं जो अपनी ऐसी प्रेम-केलि से सुकृती-जनों के हृदय का अपहरण कर रहे हैं।

६६

अकस्मात् प्रकट हुई किशोर अवस्था-सम्पन्न श्रीस्वामिनीजी का स्वरूप वर्णन करते हैं—

धम्मिल्लं ते नव परिमलैरुल्लसत्फुल्ल मल्ली—
मालं भालस्थलमपि लसत्सान्द्र सिन्दूर-विन्दुम्।
दीर्घापाङ्गच्छविमनुपमां चारु चन्द्रांशु हासं
प्रेमोल्लासं तव तु कुचयोर्द्वन्द्वमन्तः स्मरामि ॥

हे श्रीराधे ! सौरभ-उल्लसित-नूतन फुल्लमल्ली-माल-गुम्फित आपकी वेणी, ललाट-पटल पर शोभित अत्यन्त लाल सिन्दूर विन्दु, बड़े-बड़े नयनों की अनुपम कटाक्षच्छवि, प्रेमोल्लास-पूर्ण चाँदनी के समान मनोहर हास और आपके युगल वक्षोज की रहस्यता का मैं स्मरण करती हूँ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

६७

जिनका प्रथम शृङ्गार-मय स्वरूप वर्णित है, अब उन्हीं का परम तत्वमय रूप वर्णन करते हैं —

लक्ष्मी कोटि विलक्ष्य लक्षण लसल्लीला किशोरीशतै—
राराध्यं व्रजमण्डलेति मधुरं राधाभिधानं परम्।
ज्योतिः किञ्चन सिञ्चदुज्वलरस प्राग्भावमाविर्भव—
द्राधे चेतसि भूरि भाग्य विभवैः कस्याप्यहो जृम्भते॥

जिन व्रज-सुन्दरियों की लीलाओं में कोटि-कोटि लक्ष्मी-समूहों के विशेष लक्षणीय लक्षण शोभा पाते हैं, उन्हीं शत-शत किशोरियों का जो आराध्य है, एवं उज्वल रस के प्रारम्भिक भाव का सिञ्चन करता हुआ देदीप्यमान (ज्योति-स्वरूप) अति मधुर, श्रेष्ठ, श्रीराधा नामक तत्व है। वह [श्रीराधा तत्व] व्रजमण्डल-स्थित किसी भाग्यवान् (महापुरुष) के ध्यान-विभावित चित्त में महाभाग्य वैभव से ही विस्तार को प्राप्त होता है।

६८

अब उपरोक्त ज्योति का जय-जयकार करते हैं —

तज्जीयान्नव यौवनोदय महालावण्य लीलामयं
सान्द्रानन्द घनानुराग घटित श्रीमूर्त्ति सम्मोहनम्।
वृन्दारण्य निकुंज-केलि ललितं काश्मीर गौरच्छवि
श्रीगोविन्द इव व्रजेन्द्र गृहिणी प्रेमैक पात्रं महः॥

जो अपने नवीन यौवन के उदय-काल में महान्‌तम सौन्दर्य्य-लीला से युक्त है तथा जो घनीभूत आनन्द एवं घनानुराग-रचित मूर्ति श्रीलालजी का सम्मोहन कर लेता है,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिसकी गौर छबि नवीन केशर के समान है, जो श्रीवृन्दावन-निकुञ्ज-केलि में अति ललित है और जो व्रजेन्द्र-गृहिणी यशोदा किंवा कीर्तिदा के लिये श्रीगोविन्द के समान प्रेम का एक ही पात्र है, वह कोई अनिर्वचनीय तेज जय-जयकार को प्राप्त हो रहा है।

६९

श्रीवृन्दावन-कुञ्ज-केलि-परायणा श्रीस्वामिनीजी का स्वरूप बताते हैं :—

प्रेमानन्द-रसैक-वारिधि महा कल्लोलमालाकुला
व्यालोलारुण लोचनाञ्चल चमत्कारेण संचिन्वती।
किञ्चित् केलिकला महोत्सवमहो वृन्दाटवी मन्दिरे
नन्दत्यद्भुत काम वैभवमयी राधा जगन्मोहिनी॥

अहो! प्रेमानन्द-रस के महान् समुद्र की तरङ्ग-मालाओं से आकुल एवं अपने अरुण और चञ्चल नेत्राञ्चलों के चमत्कार (कटाक्ष) से केलि-कला-महोत्सव का सिञ्चन करती हुई अद्भुत प्रेम-वैभवमयी जगन्मोहिनी कोई (अनिर्वचनीय) श्रीराधा वृन्दावन के निकुञ्ज मन्दिर में आनन्द-विहार करती हैं।

७०

पुनः उक्त बात को दूसरे रूप से प्रकट करते हैं —

वृन्दारण्य निकुञ्ज सीमनि नव प्रेमानुभाव भ्रम-
द्भ्रूभङ्गी लव मोहित व्रज मणिर्भक्तैक चिन्तामणिः।
सान्द्रानन्द रसामृत स्रवमणिः प्रोद्दाम विद्युल्लता
कोटि-ज्योतिरुदेति कापि रमणी चूडामणिर्मोहिनी॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिन्होंने नवीन प्रेमानुभाव-प्रकाशन-पूर्ण चञ्चल भ्रू-भङ्गी के लेश-मात्र से ही व्रज-मणि श्रीलालजी को मोहित कर लिया, जो भक्तों के मनोरथों को पूर्ण करने के लिये एक ही चिन्ता-मणि हैं, जो घनीभूत आनन्द रसामृत की निर्झरिणी-रूपा मणि हैं और जिनकी अङ्ग-ज्योति अत्यत प्रकाशमान् कोटि-कोटि विद्युल्लताओं के समान है, वे कोई अनिर्वचनीया महा-मोहनी रमणी-चूड़ामणि बृन्दावन की निकुञ्ज-सीमा में उदित हो रही हैं।

७१

अद्भुत काम-वैभव-मयी श्रीराधा का स्वरूप वर्णन करते हैं—

लीलापाङ्ग तरङ्गतैरुदभवन्नेकैकशः कोटिशः
कन्दर्पाः पुरदर्पटङ्कृत महाकोदण्ड विस्फारिणः।
तारुण्य प्रथम प्रवेश समये यस्या महा माधुरी—
धारानन्त चमत्कृता भवतु नः श्रीराधिका स्वामिनी॥

जिनके तरुणावस्था के प्रथम प्रवेश-काल में ही हाव-भाव पूर्वक किये गये एक-एक अपाङ्ग-नर्त्तन से अत्यन्त दर्प-पूर्ण महा कोदण्ड की टङ्कार को शनैः-शनैः विस्फारित करने वाले कोटि-कोटि कन्दर्प उत्पन्न होते हैं, ऐसी महामाधुरी की अनन्त धाराओं से चमत्कृत श्रीराधिका ही मेरी स्वामिनी हैं।

७२

ऐसी अनन्त ऐश्वर्य्य, माधुर्य्य-सम्पन्न श्रीस्वामिनीजी को साधारण सी वस्तु समझ लेना विधि-विडम्बना नहीं तो क्या है? इस पर कहते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यत्पादाम्बुरुहैक रेणु-कणिकां मूर्ध्ना निधातुं न हि
प्रापुर्ब्रह्म शिवादयोप्यधिकृतिं गोप्यैक भावाश्रयाः।
सापि प्रेमसुधा रसाम्बुधिनिधि राधापि साधारणी—
भूता कालगतिक्रमेण वलिना हे दैव तुभ्यं नमः ॥

ओ दैव ! तुझे नमस्कार है ! धन्य है तेरी महिमा ! जिससे प्रेरित होकर काल-क्रम के प्रभाव-वश प्रेमामृत-रस-समुद्र श्रीलालजी की भी निधि श्रीराधिका साधारण (सुलभ) हो गई हैं ! अहो ! जो गोपियों के भावों की एक मात्र आश्रय हैं और जिनकी चरण-कमलों की रेणु के कण-मात्र को ब्रह्मा, शिव आदि भी अपने सिर पर धारण करने की इच्छा रखते हुए भी प्राप्त नहीं कर पाते ।

७३

परम गोप्य (निगूढ़) कुञ्ज-भवन में विराजमान् श्रीस्वामिनीजी की काञ्ची-ध्वनि सुनने की अभिलाषा करते हैं। जो स्वामिनी श्रीलालजी के सुहृद-वर्ग, व्रजपति नन्द एवं माता यशोदा के लिये भी अगम्य हैं —

दूरे स्निग्ध परम्परा विजयतां दूरे सुहृन्मण्डली
भृत्याः सन्तु विदूरतो व्रजपतेरन्य प्रसंगः कुतः।
यत्र श्रीवृषभानुजा कृत रतिः कुञ्जोदरे कामिना,
द्वारस्था प्रिय किङ्करी परमहं श्रोष्यामि काञ्ची ध्वनिम् ॥

जहाँ कुञ्ज-भवन के अभ्यन्तर भाग में परम-प्रेमी श्रीलालजी एवं श्रीवृषभानुनन्दिनीजू की रति-केलि होती रहती है,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

व्रजपति श्रीलालजी के स्नेही-जनों की परम्परा दूर वहाँ से ही विराजे। एवं उनके सखा-गण भी दूर ही विराजमान् रहें। भृत्य-वर्ग के लोग तो और भी दूर रहें। (इन लोगों के अतिरिक्त) अन्य-जनों का तो वहाँ प्रसङ्ग ही उपस्थित नहीं होता! यहाँ तो केवल उनकी परम-प्रिय किङ्करी ही द्वार पर स्थित रहकर विहारावसर कणित काञ्ची-ध्वनि श्रवण करती है या मैं श्रवण करती हूँ।

७४

अब श्रीस्वामिनीजी के अङ्ग-प्रत्यङ्गों की सुन्दरता का वर्णन करते हुए उस छबि को अपने ध्यान-पथ में देखने की अभिलाषा करते हैं —

गौराङ्गे म्रदिमा स्मिते मधुरिमा नेत्राञ्चले द्राघिमा
वक्षोजे गरिमा तथैव तनिमा मध्ये गतौ मन्दिमा।
श्रोण्यां च प्रथिमा भ्रुवोः कुटिलिमा बिम्बाधरे शोणिमा
श्रीराधे हृदि ते रसेन जडिमा ध्यानेऽस्तु मे गोचरः॥

हे श्रीराधे! आपके गौर-अङ्गों की मृदुलता, मन्द-मुस्कान की माधुरी, नेत्राञ्चलों की दीर्घता, उरोजों की पीनता, कटि-प्रान्त की क्षीणता, पाद-न्यास की धीरता, नितम्ब-देश की स्थूलता, भ्रूलताओं की कुटिलता अधर-बिम्बों की रक्तिमा (ललाई) एवं आपके हृदय की रसावेश-जन्य जड़ता मेरे ध्यान में प्रकट हो।

७५

रात्रि-कालीन रति-विहार में श्रीप्रियाजी के समस्त वस्त्रा-भूषण अस्त-व्यस्त हो चुके हैं। एक दूसरे के शृंगार भी बदल गये हैं। अब उन सबकी पुनः उचित साज-सम्हाल करने की अभिलाषा करते हैं —

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रातः पीतपटं कदा व्यपनयाम्यन्यांशु कस्यार्पणात्
कुञ्जे विस्मृत कञ्चुकी मपि समानेतुं प्रधावामि वा।
वध्नीयां कबरीं युनज्मि गलितां मुक्तावली मञ्जये
नेत्रे नागरि रङ्ककैश्चापि दधाम्यङ्गं व्रणं वा कदा॥

हे नागरि! किसी समय प्रातःकाल आपने किसी का पीत-पट भ्रम में बदलकर पहिन लिया होगा, तब मैं उसे बदलकर नीलाम्बर धारण कराऊँगी। इसी प्रकार निकुञ्ज-भवन में आप अपनी कञ्चुकि भूल आई होंगी, मैं दौड़कर उसे शीघ्रता पूर्वक लाऊँगी। विहार में आपकी कबरी शिथिल हो गई होगी, उसे मैं पुनः बाँधकर सँवार दूँगी। आपकी मुक्तामाल टूट गई होगी, उसे पिरो दूँगी और आपके नेत्रों में फिर से अञ्जन लगाकर, कस्तूरी, कुङ्कुम, मलय आदि के द्वारा अङ्गों के नख-क्षतों को लेपित कर दूँगी। स्वामिनि! क्या कभी ऐसा होगा?

७६

अब श्रीस्वामिनीजी के दर्शन की तीव्र लालसा प्रकट करते हैं —

यद्वृन्दावन-मात्र गोचरमहो यन्नश्रुतीकं शिरो-
प्यारोढुं क्षमते न यच्छिव शुकादीनां तु यद्ध्यानगम्।
यत्प्रेमामृत-माधुरी रसमयं यन्नित्य कैशोरकं
तद्रूपं परिवेष्टुमेव नयनं लोलायमानं मम॥

अहो! जो केवल श्रीवृन्दावन में ही दृष्टिगोचर होता है, अन्यत्र नहीं। जिसका वर्णन करने में श्रुति-शिरोभाग उपनिषद्

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भी समर्थ नहीं हैं। जो शिव और शुक आदि के भी ध्यान में नहीं आता, जो प्रेमामृत-माधुरी से परिपूर्ण है और जो नित्य किशोर है। उस रूप को देखने के लिये मेरे नेत्र खोजते फिरते हैं—चञ्चल हो रहे हैं।

७७

श्रीस्वामिनीजी के कैङ्कर्य्य के आगे समस्त साधन-साध्य यहाँ तक कि मोक्ष भी तुच्छ है। इसे अपनी स्थिति पर से लक्षित कराते हैं —

धर्माद्यर्थ चतुष्टयं विजयतां किं तद्वृथा वार्त्तया
सैकान्तेश्वर-भक्तियोग पदवी त्वारोपिता मूर्द्धनि।
यो वृन्दावन सीम्नि कश्चन घनाश्चर्य्यः किशोरीमणि-
स्तत्कैङ्कर्य्य रसामृतादिह परं चित्ते न मे रोचते॥

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये उत्तम चार फल यदि विश्व में उत्कृष्टता को प्राप्त हैं तो भले ही रहें, हमें इनकी व्यर्थ चर्चा से क्या? और ईश्वर की उस एकान्त भक्ति-योग-पदवी को भी हम सिर-माथे चढ़ाते हैं, अर्थात् भक्ति-योग का आदर तो करते हैं पर उससे भी क्या लेना-देना है? हमारे चित्त को तो श्रीवृन्दावन की सीमा में विराजमान् किसी घनीभूत आश्चर्य्यरूपा किशोरी-मणि के कैङ्कर्य्य रसामृत के अतिरिक्त और कुछ भी अच्छा नहीं लगता।

७८

उक्त विषय की ही दृढ़ता स्थापित करते हुए परम-तत्व-रूपा सर्वेश्वरी स्वामिनी श्रीराधिका-परत्व का वर्णन करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रेम्णः सन्मधुरोज्वलस्य हृदयं शृंगारलीलाकला
वैचित्री परमावधिर्भगवतः पूज्यैव कापीशता।
ईशानी च शची महासुख तनुः शक्तिः स्वतन्त्रा परा
श्रीवृन्दावन नाथ पट्टमहिषी राधैव सेव्या मम॥

जो मधुर और उज्वल प्रेम की प्राण-स्वरूपा, शृङ्गार-लीला की विचित्र कलाओं की परम अवधि, भगवान् श्रीकृष्ण की आराधनीया कोई अनिर्वचनीयां शासन-कर्त्री हैं। जो ईश्वर-रूप श्रीकृष्ण की शची हैं तथा परम सुखमय वपु-धारिणी परा और स्वतंत्रा शक्ति हैं। वे श्रीवृन्दावन-नाथ—श्रीलालजी की पट्टरानी श्रीराधा ही मेरी सेव्या—आराधनीया हैं।

७९

प्रसङ्ग प्राप्त श्रीप्रियाजी का महत्व और अधिक स्पष्ट करते हैं—

राधा दास्यमपास्य यः प्रयतते गोविन्द सङ्गाशया
सोयं पूर्ण सुधारुचेः परिचयं राकां विना कांक्षति।
किञ्च श्याम रति-प्रवाह[1] लहरी बीजं न ये तां विदु—
स्ते प्राप्यापि महामृताम्बुधिमहो बिन्दुं परं प्राप्नुयुः॥

जो लोग श्रीराधा के चरणों का सेवन छोड़कर गोविन्द के सङ्ग-लाभ की चेष्टा करते हैं, वे तो मानों पूर्णिमा-तिथि के विना ही पूर्ण सुधाकर का परिचय प्राप्त करना चाहते हैं। वे अज्ञ यह नहीं जानते कि श्याम-सुन्दर के रति-प्रवाह की लहरियों

---

१ पाठान्तर—श्याम प्रवाह वारि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का बीज यही श्रीराधा हैं। आश्चर्य्य है कि ऐसा न जानने से ही वे अमृत का महान् समुद्र पाकर भी उसमें से केवल एक बूंद मात्र ही ग्रहण कर पाते हैं!

८०

श्रीराधिका-चरण-रेणु के अनन्य उपासक रसिक-जनों का स्वरूप बताते और उनके प्रति नमन करते हैं—

कैशोराद्भुत माधुरी-भर धुरीणाङ्गच्छविं राधिकां
प्रेमोल्लास भराधिकां निरवधि ध्यायन्ति ये तद्धियः।
त्यक्ताः कर्मभिरात्मनैव भगवद्धर्मेप्यहो निर्ममाः
सर्वाश्चर्य्य गतिं गता रसमयीं तेभ्यो महद्भ्यो नमः॥

किशोरावस्था के अद्भुत माधुरी-प्रवाह से जिनके अङ्ग-अङ्ग की छवि सर्वाग्रगण्य हो रही है, तथा जो प्रेमोल्लास-प्रवाह के द्वारा सर्व-श्रेष्ठता को प्राप्त हैं, ऐसी श्रीराधिका का जो महा पुरुष तद्गत-चित्त से निरन्तर ध्यान करते हैं। उन्होंने कर्मों को नहीं छोड़ा, वरन् कर्मों ने ही उन्हें छोड़ दिया है और वे परम श्रेष्ठ भगवद्धर्म की ममता से भी मुक्त होकर सर्वाश्चर्य्य पूर्ण परम रस-मयी गति को प्राप्त हो चुके हैं। उन महान् पुरुषों के लिये बारम्बार नमस्कार है।

८१

पुनः रसिक स्वरूप का वर्णन करते हैं—

लिखन्ति भुजमूलतो न खलु शंख-चक्रादिकं
विचित्र हरिमन्दिरं न रचयन्ति भालस्थले।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लसत्तुलसि मालिकां दधति कण्ठपीठे न वा
गुरोर्भजन विक्रमात्म क इहते महाबुद्धयः ॥

श्रीगुरु के भजन रूप पराक्रम-युक्त वे कोई महाबुद्धिमान् पुरुष-गण इस पृथ्वी पर विरले ही हैं, जो न तो अपने वाहु-मूल में कभी शङ्ख-चक्रादि (वैष्णव-चिह्न) धारण करते और न कभी ललाट-पटल पर विचित्र हरि-मन्दिर (तिलक) ही रचते हैं और न उनके कण्ठ-भाग में सुहावनी तुलसी की मालिका ही धारण होती है। (उन्हें तो इन सब वाह्य लक्षणों की सुधि ही नहीं, वे किसी अन्तरङ्ग रस में डूब रहे हैं।)

८२

ऊपर दो श्लोकों में जिन रसिकों के स्वरूप का वर्णन किया गया है, उनके लिये लौकिक-वैदिक किसी प्रकार के कर्त्तव्य शेष नहीं रह जाते। इस श्लोक में यही बात प्रकट की जा रही है —

कर्माणि श्रुति-बोधितानि नितरां कुर्वन्तु कुर्वन्तु मा
गूढाश्चर्य्य रसाः स्रगादि विषयान्गृहणन्तु मुञ्चन्तु वा।
कैर्वा भाव-रहस्य पारग-मतिः श्रीराधिका प्रेयसः
किञ्चिज्ज्ञैरनुयुज्यतां वहिरहो भ्राम्यद्भिरन्यैरपि ॥

गूढ़ाश्चर्य्य रूप उज्वल रसाश्रित रसिक-गण वेदोक्त कर्मकाण्ड का अनुष्ठान करें या न करें, माला, चन्दन आदि विषय-समूह अर्थात् भोग-विलास के उपकरण गृहण करें या न करें। इससे उनको न कोई हानि है और न लाभ ही। अहो! श्रीराधाकान्त के भाव में पारङ्गत-मति ऐसे रसिक क्या कभी अल्पज्ञ, वहिर्मुख अथवा अन्य सकाम पुरुषों में से किसी के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

साथ मिल भी सकते हैं ? क्या कभी इस प्रकार से लोगों के साथ उनका मेल खा सकता है ? नहीं।

८३

उन रसिकों की सामान्य स्थिति कैसी होती इसका दिग्दर्शन कराते हैं —

अलं विषय वार्त्तया नरक कोटि वीभत्सया
वृथा श्रुति कथाश्रमो बत विभेमि कैवल्यतः।
परेश-भजनोन्मदा यदि शुकादयः किं ततः
परं तु मम राधिका पदरसे मनो मज्जतु ॥

विषय-चर्चा बहुत हो चुकी, इसे बन्द करो; क्योंकि यह कोटि-कोटि नरकों के समान घृणित है। श्रुति-कथा भी व्यर्थ श्रम ही है। अहो! हमें तो कैवल्य से भय प्रतीत होता है (क्योंकि वह नाम-रूप रहित है)। परम पुरुष भगवान् के भजन में उन्मत्त यदि कोई शुक आदि हैं, तो रहने दो; हमें उनसे क्या प्रयोजन? हमारा मन तो केवल श्रीराधा के पद-रस में ही डूबा रहे (यह अभिलाषा है।)

८४

श्रीराधिका-पद-रस के अनुभव ने मन में जिस अविस्मरणीय-स्वरूप को अङ्कित कर दिया है, अब उसका विशद परिचय देते हैं—

तत्सौन्दर्य्यं सच नववयो यौवनश्री प्रवेशः
सा दृग्भङ्गी सच रसघनाश्चर्य्य वक्षोज कुम्भः।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सोयं विम्बाधर मधुरिमा तत्स्मितं साच वाणी
सेयं लीला गतिरपि न विस्मर्यते राधिकायाः ॥

अहा! स्वामिनी श्रीराधिका का वह सौन्दर्य्य! वह नवीन वय में यौवन-श्री का प्रवेश! वह नेत्रों की भङ्गिमा! घनीभूत रस और आश्चर्य्य से परिपूर्ण वे युगल स्तन-कलश! इसी प्रकार लाल विम्बाफलों के समान अधरों की वह मधुरिमा। साथ ही मन्द-मन्द मुसकान और रसमयी वाणी! एवं वह लीला-पूर्ण पाद-न्यास (मन्द-मन्द चलना) तो भूलता ही नहीं!!

८५

ऐसी परम सौन्दर्य्य-राशि श्रीस्वामिनीजी के दास्य की अभिलाषा करते हैं—

यल्लक्ष्मी शुक नारदादि परमाश्चर्य्यानुरागोत्सवैः
प्राप्तं त्वत्कृपयैव हि व्रजभृतां तत्तत्किशोरी-गणैः।
तत्कैङ्कर्य्यमनुक्षणाद्भुत रसं प्राप्तुं धृताशे मयि
श्रीराधे नवकुञ्ज नागरि कृपा-दृष्टिं कदा दास्यसि ॥

हे नव-कुञ्ज नागरि! मैं आपके उस कैङ्कर्य्य-प्राप्ति की आशा को धारण किये हुए हूँ। जिससे क्षण-क्षण में अद्भुत रस की प्राप्ति होती है और जिसे उन अनुराग-उत्सव मयी व्रज-किशोरी गणों ने प्राप्त किया था, जिन गोपी-जनों के अनुराग-उत्सव की लालसा लक्ष्मी, शुक, नारद आदि को भी रहती है। हे श्रीराधे! मेरे लिये आप अपनी उस कृपा-दृष्टि का दान क्या कभी करोगी?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

८६

उपरोक्त आशा की पूर्ति कैसे होगी ? इसका उपाय प्रदर्शित करते हुए प्रार्थना करते हैं —

लब्ध्वादास्यं तदति कृपया मोहन स्वादितेन
सौन्दर्य्यश्री पदकमलयोर्लालनैः स्वापितायाः।
श्रीराधाया मधुर-मधुरोच्छिष्ट पीयूष सारं
भोजं-भोजं नव-नव रसानन्द मग्नः कदा स्याम्॥

श्रीस्वामिनीजी के युग-पद-कमल सौन्दर्य्यश्री की राशि हैं। उन चरणों को अच्छी तरह से पलोट कर प्यारे ने आपको शयन करा दिया है और श्रीलालजी ने आपके मधुर-मधुर अमृत-सार रूप उच्छिष्ट प्रसाद को आपकी अत्यन्त कृपा से प्राप्त करके स्वाद लिया है। मैं उसी प्रसाद को प्राप्त करूँ। इस प्रकार मैं आपका दास्य प्राप्त करके कब नव-नव रसानन्द में मग्न होऊँगी ?

८७

श्रीलालजी से मिलते हुए भी अपनी निष्ठा का स्वरूप बताते हैं —

यदि स्नेहाद्राधे दिशसि रति-लाम्पट्य पदवीं
गतं ते स्वप्रेष्ठं तदपि मम निष्ठं शृणु यथा।
कटाक्षैरालोके स्मित सहचरैर्जात पुलकं
समाश्लिष्याम्युच्चैरथच रसये त्वत्पद रसम्॥

हे राधे ! रति-लाम्पट्य-पदवी-प्राप्त अपने प्रियतम के प्रति जब आप स्नेहवश मुझे सौंप देंगी तब भी मेरी निष्ठा क्या होगी, उसे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुनिये-"मैं मन्द-मन्द मुसकान के साथ तिरछे नेत्रों से प्यारे की ओर देखूँगी बस इतने मात्र से ही उनका शरीर रोमाञ्चित् हो जायगा। पश्चात् मैं उन्हें पुनः एक गाढ़-आलिङ्गन भी करूंगी, जिससे और भी वे प्रेम-विह्वल हो जावेंगे किन्तु इतना सब होते हुए भी मुझे आपके रस-मय चरण-कमलों का ही रसानुभव होगा"।

८८

श्रीकृष्ण-नाम, रूप, सम्बन्ध की प्रियता श्रीप्रियाजी के हृदय में सदा रहती है, इसे प्रकट करते हैं—

कृष्णः पक्षो नवकुवलयं कृष्ण सारस्तमालो,
नीलाम्भोदस्तव रुचिपदं नाम रूपैश्च कृष्णा।
कृष्णो कस्मात्तव विमुखता मोहन-श्याम मूर्त्ता,
वित्युक्त्वा त्वां प्रहसित मुखीं किन्नु पश्यामि राधे॥

"हे श्रीराधे! कृष्ण-पक्ष अथवा श्रीकृष्ण के पक्ष वाले, नवीन नील-कमल, कृष्ण-सार मृग, श्याम-तमाल, नील सजल मेघ एवं कृष्णा नाम रूप वाली कृष्णा (यमुना) ये सब के सब आप को प्रिय हैं, फिर क्या कारण है कि आपने श्याम-मूर्ति मनमोहन श्रीकृष्ण से ही विमुखता धारण कर रखी है"?

स्वामिनि! इस प्रकार कहने के पश्चात् क्या मैं आपको प्रहसित-मुखी (विगत-माना) न देख सकूँगी?

८९

श्रीस्वामिनीजी का अनुगमन करने वाली सहचरियों की भावना करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लीलापाङ्गतरङ्गितैरिव दिशो नीलोत्पल श्यामला,
दोलायत्कनकाद्रि मण्डलमिव व्योम स्तनैस्तन्वतीम्।
उत्फुल्लस्थल पङ्कजामिव भुवं रासे पदन्यासतः
श्रीराधामनुधावतीं व्रज-किशोरीणां घटां भावये॥

जिनके लीला-पूर्ण कटाक्षों की तरङ्गे मानों समस्त दिशाओं को नील-कमल की श्यामलता प्रदान करती हैं एवं जिनके स्तन-मण्डल आकाश में दोलायमान् कनक-गिरि का विस्तार करते हैं। जिनके द्वारा रास-मण्डल में किया गया पाद-विन्यास पृथ्वी को प्रफुल्लित स्थल-कमल (गुलाब) की तरह सुशोभित करता है। श्रीराधा की अनुगामिनि उन व्रज-किशोरी-गणों की मैं भावना करती हूँ।

९०

श्रीस्वामिनीजी के स्वरूप का वर्णन करते हुए उनसे कृपा तरङ्ग की याचना करते हैं—

दृशौ त्वयि रसाम्बुधौ मधुर मीनवद्भ्राम्यतः
स्तनौ त्वयि सुधा-सरस्यहह चक्रवाकाविव।
मुखं सुरतरङ्गिणि त्वयि विकसि हेमाम्बुजं,
मिलन्तु मयि राधिके तव कृपा तरङ्गच्छटाम्॥

अहो राधिके! आपका सम्पूर्ण श्रीवपु ही मानो एक विशाल रस-समुद्र है। उस रस-सागर में आपके युगल-नयन ही मानों मीन की तरह भ्रमण करते फिरते हैं। एवं सुधा-सरिता में विहार करने वाले युगल चक्रवाक आपके ये स्तन-द्वय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ही हैं। हे सुरतरङ्गिणि! आपका यह गौर-मुख ही मानों विकसित स्वर्ण-कमल है। स्वामिनि! मुझे आपके कृपा-तरङ्ग की छटा प्राप्त हो।

९१

पुनः उपरोक्त भावानुसार प्रार्थना करते हैं—

कान्ताढ्याश्चर्य्य कान्ता कुलमणि कमला कोटि काम्यैक पादा-
म्भोजभ्राजन्नखेन्दुच्छवि लव विभवा काप्यगम्या किशोरी।
उन्मर्याद प्रवृद्ध प्रणय-रस महाम्भोधि गम्भीर-लीला,
माधुर्य्योज्जृम्भिताङ्गी मयि किमपि कृपा-रङ्गमङ्गी करोतु॥

जो अपने कान्त-धन से धनी हैं, जो आश्चर्य्यमयी कान्ताओं की कुलमणि हैं। जिनके पद-कमल-शोभी नख-चन्द्र का कान्ति-कण कोटि-कोटि कमलाओं का एक-मात्र इच्छित वैभव है, एवं जिनका श्रीअङ्ग अमर्य्यादित प्रवृद्धमान प्रणय-रस रूप महासिन्धु के गम्भीर लीला-माधुर्य्य से उल्लसित है। वे कोई सबसे अगम किशोरी अपने कृपा-रस से रञ्जित करके क्या मुझे अङ्गीकार करेंगी?

९२

पुनः उक्त प्रकार से ही प्रार्थना करते हैं—

कलिन्द–गिरि–नन्दिनी-पुलिन मालती–मंदिरे
प्रविष्ट वनमालिनाललित-केलि लोली-कृते।
प्रतिक्षण चमत्कृताद्भुतरसैक–लीलानिधे,
विधेहि मयि राधिके तव कृपा-तरङ्गच्छटाम्॥

कलिन्द-गिरि-नन्दिनी यमुना के पुलिनवर्त्ती मालती-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मन्दिर में प्रवेश करके वनमाली श्रीलालजी ने अपनी ललित-केलि से जिनको चञ्चल कर दिया है, तथा प्रतिक्षण जिनसे अद्भुत लीला-रस का समुद्र चमत्कृत होता रहता है, ऐसी हे राधिके! आप अपनी कृपा-तरङ्ग-छटा का मुझ पर विस्तार कीजिये।

६३

अब श्रीस्वामिनीजी का स्वरूप वर्णन करते हुए उन्हें प्रणाम करते हैं—

यस्यास्ते बत किङ्करीषु बहुशश्चाटूनि वृन्दाटवी,
कन्दर्पः कुरुते तवैव किमपि प्रेप्सुः प्रसादोत्सवम्।
सान्द्रानन्द घनानुराग-लहरी निस्यंदि पादाम्बुज,
द्वन्द्वे श्रीवृषभानु-नन्दिनि सदा वन्दे तव श्रीपदम्॥

वृन्दाटवी-कन्दर्प श्रीलालजी आपके प्रसादोत्सव की वाञ्छा से आपकी किङ्करियों की अत्यन्त हर्ष-पूर्वक अधिकाधिक चाटुकारी करते हैं तथा आपके जिन युगल चरण-कमलों से सदा ही घनीभूत आनन्द एवं अनुराग की लहरी प्रवाहित होती रहती है; हे वृषभानुनन्दिनि! मैं आपके उन्हीं श्रीचरणों की सदा बन्दना करती हूँ।

६४

अब श्रीप्रियाजी के नाम की महिमा का गान करते हैं—

यज्जापः सकृदेव गोकुलपतेराकर्षकस्तत्क्षणा-
द्यत्रं प्रेमवतां समस्त पुरुषार्थेषु स्फुरेत्तुच्छता।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यन्नामाङ्कित मन्त्र जापनपरः प्रीत्या स्वयं माधवः
श्रीकृष्णोऽपि तदद्भुतं स्फुरतु मे राधेति वर्णद्वयम् ॥

जिसका एक-बार मात्र उच्चारण, गोकुल-पति श्रीकृष्ण को तत्क्षण आकर्षित करने वाला है, जिससे प्रेमियों के लिये अर्थ, धर्मादि समस्त पुरुषार्थों में तुच्छता का स्फुरण होने लगता है, एवं जिस नाम से अङ्कित मन्त्रराज (द्वादशाक्षर-मन्त्र) के जपने में माधव श्रीकृष्ण भी सदा-सर्वदा प्रीति-पूर्वक संलग्न रहते हैं। वही अत्यद्भुत दो वर्ण 'राधा' मेरे हृदय में स्फुरित हों।

९५

पुनः नाम-महिमा ही कहते हैं—

कालिन्दी-तट कुञ्ज-मंदिरगतो योगीन्द्र वद्यत्पद-
ज्योतिर्ध्यान परः सदा जपति यां प्रेमाश्रुपूर्णो हरिः।
केनाप्यद्भुतमुल्लसद्रतिरसानन्देन सम्मोहिता
सा राधेति सदा स्फुरतु मे विद्यापरा द्वयक्षरा ॥

योगीन्द्रों के समान जिनकी चरण-ज्योति के ध्यान-परायण होकर प्रेमाश्रु-पूर्ण नेत्र तथा गद्-गद् वाणी से कालिन्दी-तट के किसी निकुञ्ज-मंदिर में विराजमान् श्रीहरि भी स्वयं जिस नाम का जप करते हैं। वही अनिर्वचनीय अद्भुत उल्लासमय एवं रति-रसानन्द से सम्मोहित 'राधा' इन दो अक्षरों की पराविद्या मेरे हृदय में सदा स्फुरित रहे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

९६

अब पुनः 'श्रीराधा' नाम की महिमा सूचित करते हुए अपनी अवस्था का परिचय कराते हैं—

देवानामथ भक्त मुक्त सुहृदामत्यन्त दूरं च यत्
प्रेमानन्द रसं महा सुखकरं चोच्चारितं प्रेमतः।
प्रेम्णाकर्णयते जपत्यथ मुदा गायत्यथालिष्वयं
जल्पत्यश्रुमुखो हरिस्तदमृतं राधेति मे जीवनम् ॥

जो देवताओं, भक्तों, मुक्तों और स्वयं श्रीलालजी के सुहृद्-वर्गों से भी अत्यन्त दूर है, जो प्रेमानन्द-रस स्वरूप है, जो प्रेम-पूर्वक उच्चरित होने पर महा सुखकर है। श्रीलालजी स्वयं जिसको श्रवण करते एवं जप करते हैं अथवा सखी-गणों के मध्य में प्रीति-पूर्वक गान भी करते हैं और कभी प्रेमाश्रु-पूर्ण मुख से जिसका बारम्बार उच्चारण करते हैं, वही 'श्रीराधा' नामामृत मेरा जीवन है।

९७

पुनः उसी का वर्णन करते हुए प्रार्थना करते हैं—

या वाराधयति प्रियं व्रजमणिं प्रौढानुरागोत्सवैः
संसिद्ध्यन्ति यदाश्रयेण हि परं गोविन्द सख्युत्सुकाः।
यत्सिद्धिः परमापदैक रसावत्याराधनात्ते नु सा
श्रीराधा श्रुतिमौलि-शेखर-लता नाम्नी मम प्रीयताम् ॥

जिस प्रकार व्रजमणि प्रियतम उनका आराधन करते हैं, उसी प्रकार वे भी प्रकृष्ट अनुराग के उल्लास से परिपूर्ण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होकर अपने प्रियतम का आराधन करती हैं। गोविंद के साथ सख्य-भाव-प्राप्ति के लिये उत्सुक-जन भी जिनके आश्रय से परम-सिद्धि को प्राप्त होते हैं, जिनके आराधन से परम पद रूपा कोई रसवती सिद्धि प्राप्त होती है, वही श्रीराधा नाम्नी श्रुति-मौलि-शेखर-लता मुझ पर प्रसन्न हों।

९८

श्रीप्रियाजी का स्वरूप वर्णन करते हुए उनके प्रति नमस्कार करते हैं—

गात्रे कोटि तडिच्छवि प्रविततानन्दच्छवि श्रीमुखे
विम्बोष्ठे नव विद्रुमच्छवि करे सत्पल्लवैकच्छवि।
हेमाम्भोरुह कुड्मलच्छवि कुच-द्वन्द्वेऽरविन्देक्षणां
वन्दे तन्नव कुञ्ज-केलि-मधुरं राधाभिधानं महः॥

जिसके गात्र में कोटि-कोटि दामिनियों की छवि है, जिसके मुख से मानो आनन्द-रूप छवि का ही विस्तार हो रहा है। विम्बोष्ठ में नव-विद्रुम की छवि तथा करों में सुन्दर नवीन पल्लवों की छवि जगमगा रही है। जिसके युगल कुचों में स्वर्ण-कमल की कलियों की छवि है, उसी अरविन्द-नेत्रा, नव-कुञ्ज-केलि-मधुरा राधा-नामक ज्योति की मैं बन्दना करती हूँ।

९९

अब आशीर्वाद की वांछा करते हैं—

मुक्ता-पंक्ति प्रतिमदशना चारुविम्बाधरोष्ठी
मध्येक्षामा नव-नव रसावर्त गम्भीर नाभिः।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पीन-श्रोणिस्तरुणिमसमुन्मेष लावण्यसिन्धु-
वैंदग्धीनां किमपि हृदयं नागरी पातु राधा ॥

जिनकी मनोहर दन्तावली मुक्तापंक्ति के तुल्य है, चारु अधरोष्ठ बिम्बा-फल के समान हैं; कटि अत्यन्त क्षीण है और गम्भीर नाभि में नव-नव रसों की भँवरें पड़ रही हैं। जिनका नितम्ब-देश विशेष पीन (पृथुल) है, तथा नव-यौवन के विकाश के कारण जो लावण्य की सिन्धु बन रही हैं। किन्हीं परम विदग्धाओं (चतुराओं) में भी कोई अनिर्वचनीय मणि रूपा नागरी श्रीराधा मेरी रक्षा करें।

१००

अब ऐसी परम सुन्दरी श्रीस्वामिनीजी के प्रत्यक्ष-दर्शन की अभिलाषा करते हैं :—

स्निग्धा कुञ्चित नील केशि विदलद्बिम्बोष्ठि चन्द्रानने
खेलत्खञ्जन गञ्जनाक्षि रुचिमन्नासाग्र मुक्ताफले।
पीन-श्रोणि तनूदरि स्तनस्तटी वृत्तच्छटात्यद्भुते
राधे श्रीभुजवल्लि चारु वलये स्वं रूपमाविष्कुरु ॥

हे सचिक्कन नील-कुञ्चित केशिनि! हे पक्क-विम्बाधरे! हे चन्द्रानने! हे चञ्चल खञ्जन-मान-मर्दन नयने! हे रुचिर नासाग्र-भाग-शोभित-मुक्ताफले! हे पृथु-नितम्बे! हे कृशोदरि! स्तन-तटी स्थित अद्भुत वर्त्तुल छटा युक्त हे श्रीराधे! हे भुजवल्लि चारु बलये !! आप अपने (इस) रूप का (मेरे लिये) प्रकाश कीजिये——प्रत्यक्ष कीजिये।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१०१

अब श्रीअङ्गों की एक अत्यद्भुत झाँकी कराते हैं :—

लज्जान्तः पटमारचय्य रचितस्माय प्रसूनाञ्जलौ,
राधाङ्गे नवरङ्ग धाम्नि ललित प्रस्तावने यौवने।
श्रोणी-हेम-वरासने स्मरनृपेणाध्यासिते मोहने,
लीलापाङ्ग विचित्र ताण्डव-कला पाण्डित्यमुन्मीलति॥

लज्जा-यवनिका डालकर मुसकान पुष्पाञ्जलि की रचना द्वारा ललित यौवन की प्रस्तावना की गई है। जहाँ कन्दर्प-नृपति द्वारा अधिष्ठित श्रोणी ही स्वर्ण-सिंहासन है। उस नव-रङ्ग-भूमि रूप श्रीराधाङ्ग में लीला-पूर्ण कटाक्षों का विचित्र ताण्डव-कला-पाण्डित्य का प्रकाशन हो रहा है।

१०२

इस श्लोक में स्नेह के निर्बाध और अपवाद-रहित रूप का वर्णन करते हुए आशीर्वाद की योजना करते हैं—

सा लावण्य चमत्कृतिर्नव वयो रूपं च तन्मोहनं,
तत्तत्केलि कला-विलास-लहरी-चातुर्य्यमाश्चर्य्य भूः।
नो किञ्चित् कृतमेव यत्र न नुतिर्नागो न वा सम्भ्रमो,
राधा-माधवयोः स कोपि सहजः प्रेमोत्सवः पातु वः॥

अहा! जिसमें लावण्य का वह चमत्कार! वह नवीन वय और महा मोहन रूप! वह केलि-कला-विलास की तरङ्गों की चातुरी विद्यमान हैं; जिस सर्वाश्चर्य्य की भूमि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में। जहाँ किञ्चित् मात्र सोद्देश्य कर्म भी नहीं है। जहाँ न तो स्तुति है, न अपराध और न सम्भ्रम ही। श्रीराधा-माधव का ऐसा कोई अनिर्वचनीय और स्वाभाविक प्रमोत्सव तुम्हारी (रसिक जनों की) रक्षा करे।

१०३

अब श्रीवृन्दावनेश्‍वरीजू के रस-मय श्रीचरण-कमलों के दर्शन की अभिलाषा करते हैं—

येषां प्रेक्षां वितरति नवोदार गाढानुरागान्
मेघश्यामो मधुर-मधुरानन्द मूर्तिर्मुकन्दः।
वृन्दाटव्यां सुमहिम चमत्कार कारीण्यहो किं
तानि प्रेक्षेद्भुत रस निधानानि राधा पदानि॥

जिन चरणारविन्दों की महिमा श्रीवृन्दा कानन में चमत्कृत हो रही है। जो रस के अद्भुत निधान हैं एवं नवीन और उदार अनुराग-पूर्ण मधुर-मधुरानन्द-मूर्ति घनश्याम मुकुन्द भी जिनके दर्शन की अभिलाषा का विस्तार करते रहते हैं; वे श्रीराधा-पद-कमल क्या मेरे नयन-गोचर होंगे ?

१०४

अब श्रीहित-सजनी तत्सुख-सुखी-भाव से श्रीस्वामिनिजी के रस-मय केलि-दर्शन की अभिलाषा करती हैं—

बलान्नीत्वा तल्पं किमपि परिरभ्याधर-सुधां
निपीय प्रोल्लिख्य प्रखर-नखरेण स्तनभरम्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ततो नीवीं न्यस्ते रसिक-मणिना त्वत्कर-धृते
कदा कुञ्जच्छिद्रे भवतु मम राधेनुनयनम् ॥

राधे ! रसिक-शिरोमणि प्रियतम ने आपको आग्रह-पूर्वक केलि-शय्या पर ले जाकर किसी अनिर्वचनीय प्रकार से परिरम्भण करके अधर-सुधा का पान किया हो और उन्होंने अपने प्रखर नखों से आपके स्तन-मण्डल को रेखाङ्कित किया हो, तत्पश्चात् आपके दोनों कर-कमलों को पकड़ कर नीवी-बन्धन का मोचन कर दिया हो; मैं निकुञ्ज भवन के रन्ध्र से लगी यह सब कब देखूँगी ?

१०५

अब श्रीस्वामिनीजी के श्रीअङ्गों के शृंगार करने की अभिलाषा करते हैं—

करं ते पत्रालिं किमपि कुचयोः कर्त्तुमुचितं
पदं ते कुञ्जेषुप्रियमभिसरन्त्या अभिसृतौ ।
दृशौ कुञ्जच्छिद्रैस्तव निभृत-केलिं कलयितुं
यदा वीक्षे राधे तदपि भविता किं शुभ-दिनम् ॥

हे श्रीराधे ! मेरा ऐसा शुभ-दिन कब होगा, जब मैं आपके कुच-तटों पर अनिर्वचनीय पत्र-रचना करने के योग्य अपने हाथों को, कुञ्जों में प्रियतम के प्रति अभिसरण करती हुई आपका अनुगमन करने योग्य अपने पदों को, एवं कुञ्ज-छिद्रों से आपकी रहस्य-केलि दर्शन-योग्य अपने दोनों नयनों को देखूँगी ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१०६

पुनः उक्त-कथित भावानुसार ही—

रहोगोष्ठी श्रोतुं तव निज विटेन्द्रेण ललितां
करे धृत्वा त्वां वा नव-रमण-तल्पे घटयितुम् ।
रतामर्दस्रस्तं कचभरमथो संयमयितुं
विदध्याः श्रीराधे मम किमधिकारोत्सव-रसम् ॥

हे श्रीराधे ! आपके अति लम्पट प्रियतम के साथ आपका अपना मधुर रहस्यालाप श्रवण करने का, अथवा हाथ पकड़कर आपको नव-रमण शय्या तक पहुँचाने का, एवं केलि-सम्मर्द-विगलित आपके केश-पाश को संयत करने का अधिकारोत्सव-रस, क्या आप मुझे प्रदान करेंगी ?

१०७

निकुञ्ज-केलि की विशदता की सूचना करते हैं—

वृन्दाटव्यां नव-नव रसानन्द पुञ्जे निकुञ्जे
गुञ्जद्भृङ्गी-कुल मुखरिते मञ्जु-मञ्जु प्रहासैः ।
अन्योन्य क्षेपण निचयन प्राप्त सङ्गोपनाद्यैः
क्रीडन्तीयीद्रसिक मिथुनं क्लृप्त केली-कदम्बम् ॥

श्रीवृन्दावन-स्थित नव-नव रसानन्द-पुञ्ज-निकुञ्ज जो गुञ्जन-शील भृङ्गी-कुल द्वारा मुखरित है, वहाँ मधुर-मधुर परिहास-पूर्वक परस्पर (गेंद) फेंकने, संग्रह करने और

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्राप्त करके छुपा लेने, इत्यादि क्रीड़ाओं में रत और केलि-समूह-सुसज्जित रसिक-मिथुन जय को प्राप्त हो रहे हैं।

१०८

अब श्रीस्वामिनीजी के परम सुन्दर रूप की दर्शनाभिलाषा करते हैं—

रूपं शारद-चन्द्र-कोटि-वदने धम्मिल्लमल्लीस्रजा—
मामोदैर्विकली कृतालि-पटले राधे कदा तेऽद्भुतम् ।
ग्रैवेयोज्वल कम्बु-कण्ठि मृदुदोर्वल्ली चलत्कङ्कणे,
वीक्षे पट्ट-दुकूल-वासिनि रणन्मञ्जीर पादाम्बुजे ॥

हे शरत्कालीन कोटि चन्द्रवदने ! हे केश-पाश-गुम्फित-मल्लीमाल-आमोद-द्वारा भ्रमरावलि-विकल-कारिणे ! हे उज्वल कण्ठाभरण-युक्त कम्बु-ग्रीवे ! हे मृदुल-वाहुवल्लरि-संचलत्कङ्कणे ! हे कौशेय दुकूल-धारिणि ! हे शब्दित नूपुर पादाम्बुजे ! हे श्रीराधे ! क्या मैं कभी आपके इस अद्भुत रूप को देखूँगी ?

१०९

दर्शनोपरान्त पुनः कुछ और अद्भुत एवं मनोहर मनोरथ करते हैं—

इतोभयमितस्त्रपा कुलमितो यशः श्रीरितो—
हिनस्त्यखिल शृंङ्खलामपि सखीनिवासस्त्वया ।
सगद्गदमुदीरित सुबहु मोहना काङ्क्षया,
कथं कथमयीश्वरि प्रहसितैः कदा म्रेडयसे ॥

"अयि स्वामिनि ! सखी-निवास श्रीलालजी ने आपकी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुवहुल मोहन आकाङ्क्षा से एक ओर भय, दूसरी ओर लज्जा, इधर कुल तो उधर यश और श्री इत्यादि अखिल शृंखलाओं को तुम्हारे लिये ही नष्ट कर दिया है" । मेरी इस सगद्गद् वचनावली को सुनकर आप 'क्या-क्या' कहकर हँसती हुई पूँछेंगी, ऐसा कब होगा ?

११०

पुनः उक्त-कथित भावानुसार ही दूसरा मनोरथ करते हैं--

श्यामेचाटुरुतानि कुर्वति सहालापान्प्रणेत्री मया
गृह्णानेच दुकूल पल्लवमहो हुङ्कृत्य मां द्रक्ष्यसि ।
बिभ्राणे भुजवल्लिमुल्लसितया रोमस्रजालङ्कृतां,
दृष्ट्वा त्वां रसलीन मूर्तिमथ किं पश्यामि हास्यं ततः ॥

हे प्रणयिनि ! श्याम-सुन्दर तो आपकी चाटुकारी कर रहे हों किन्तु आप मुझसे वार्त्तालाप कर रही हों और जब श्याम-सुन्दर आपके दुकूल-पल्लव को पकड़ लें तब भी आप हुङ्कार-पूर्वक मेरी ओर ही (किञ्चित् रोष-युक्त) दृष्टि से देखें । जब प्रियतम् आपकी भुजलता को पकड़ लें, तब आप उल्लसित होकर रोमावली से अलङ्कृत हो उठें । क्या आपकी ऐसी रस-लीन मूर्ति को देखकर पश्चात आपके हास्य को देखूँगी ?

१११

अब श्रीलालजी से अभिलाषा करते हैं कि मुझे अपनी प्राण-प्रिया के चरणों में स्थान दीजिये—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अहो रसिक शेखरः स्फुरति कोपि वृन्दावने
निकुञ्ज-नव-नागरी कुच-किशोर-केलि-प्रियः ।
करोतु स कृपां सखी प्रकट पूर्ण नत्युत्सवो,
निज प्रियतमा-पदे रसमये ददातु ास्थितिम् ।।

अहो ! नव-निकुञ्ज में नव-नागरी के कुचों के साथ किशोर-केलि जिन्हें प्रिय है एवं जो सखियों के प्रति निःसंङ्कोच एवं पूर्ण विनय में ही हर्ष प्राप्त करते हैं वे कोई रसिक-शेखर श्री वृन्दावन में स्फुरित हो रहे हैं । ये मुझपर कृपा करें और अपनी प्रियतमा के रसमय पद-कमलों में मुझे अविचल स्थान दें ।

१ १ २

अब रासोत्सव में प्रवेश करने की अभिलाषा करते हुए प्रार्थना करते हैं—

विचित्र वर भूषणोज्वल-दुकूल-सत्कञ्चुकैः
सखीभिरतिभूषिता तिलक-गन्ध-माल्यैरपि ।
स्वयं च सकला-कलासु कुशली कृता नः कदा,
सुरास-मधुरोत्सवे किमपि वेशयेत्स्वामिनी ।।

जो सखि-गणों के द्वारा विचित्र एवं श्रेष्ठ आभूषण, उज्वल दुकूल, उत्कृष्ट कञ्चकि, तिलक और गन्ध माल्यादि से विभूषित की गई हैं, एवं जिन्होंने समस्त विद्याओं एवं कलाओं में स्वयं ही हमें सुशिक्षित किया है वे स्वामिनी श्रीराधा सुरास-मधुरोत्सव में हमें कब प्रविष्ट करेंगी ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

११३

अपने अतिशय स्वसुख से भी अधिक श्रीप्रिया-चरण-चिह्न-दर्शन का सुख है। इस मनोह्लाद को सामूहिक-वर्णन के साथ प्रकट करते हैं—

कदा सुमणि किङ्किणी वलय नूपुर प्रोल्लसन्
महामधुर मण्डलाद्भुत-विलास-रासोत्सवे ।
अपि प्रणयिनो बृहद्भुज गृहीत कण्ठ्यो वयं,
परं निज रसेश्वरी-चरण-लक्ष्म वीक्षामहे ॥

उत्कृष्ट मणिमय किङ्कणि, वलय, नूपुर-शोभित महामधुर मण्डल के अद्भुत विलास-रासोत्सव में प्रियतम श्रीलालजी के द्वारा गृहीत-कण्ठ होने पर भी हम कब केवल निज रसेश्वरी श्रीराधा के चरण-चिह्नों का ही दर्शन करेंगी ?

११४

समस्त कर्म, धर्म, भक्ति, ज्ञान, सन्त-सेवा, आदि का एक ही लक्ष्य है, श्रीस्वामिनीजी की तुष्टि । इसी भाव को प्रकट करते हैं—

यद्गोविन्द-कथा-सुधा-रस-ह्रदे चेतो मया जृम्भितं
यद्वा तद्गुण कीर्त्तनार्चन विभूषाद्यैर्दिनं प्रापितम् ।
यद्यत्प्रीतिरकारि तत्प्रिय-जनेष्वात्यन्तिकी तेन मे,
गोपेन्द्रात्मज-जीवन-प्रणयिनी श्रीराधिका तुष्यतु ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो कुछ भी मैंने गोविन्द के कथा-सुधा-रस-सरोवर में अपने चित्त को डुबाया है अथवा उनके गुण-कीर्त्तन, चरणार्चन, विभूषणादि-विभूषित करने में दिन लगाये हैं किंवा उनके प्रिय-जनों के प्रति जिस-जिस आत्यंतिकी प्रीति का विधान किया है [या मेरे द्वारा हुआ है,] उस सबके द्वारा (फल स्वरूप) गोपेन्द्र-नन्दन श्रीकृष्ण की जीवन-प्रणयिनी श्रीराधिका मुझ पर प्रसन्न हों ।

११५

श्रीस्वामिनीजी की प्रसन्नता प्राप्त हो जाने पर धर्म-कर्मादि फल ब्रह्मा, शिव आदि देवगण; और तो और श्रीलालजी का भी महत्व नहीं रह जाता । इसी भाव को प्रकट करते हैं—

रहो दास्यं तस्याः किमपि वृषभानोर्व्रजवरी—
यसः पुत्र्याः पूर्ण प्रणय-रस मूर्त्तेर्यदि लभे ।
तदा नः किं धर्मैः किमु सुरगणैः किंच विधिना,
किमीशेन श्याम प्रियमिलन-यत्नैरपि च किम् ॥

यदि व्रज-वरीयान् वृषभानुराय की पूर्ण-प्रेम-रस-मूर्ति पुत्री (दुलारी) का हमें एकांत दास्य-लाभ हो जाय, तो फिर हमें धर्म से, देवता-गणों से, ब्रह्मा और शङ्कर से, और अरे ! श्याम-सुन्दर के प्रिय-मिलन-यत्न से भी क्या प्रयोजन है ?

११६

सम्बोधन-धारा-व्याज से श्रीस्वामिनीजी का स्वरूप-वर्णन करते हैं एवं उसी स्वरूप के आराधन की आकाङ्क्षा करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चन्द्रास्ये हरिणाक्षि देवि सुनसे शोणाधरे सुस्मिते
चिल्लक्ष्मी भुजवल्लि कम्बु रुचिर ग्रीवे गिरीन्द्र-स्तनि ।
भञ्जन्मध्य वृहन्नितम्ब कदली खण्डोरु पादाम्बुजे,
प्रोन्मीलन्नख-चन्द्र-मण्डलि कदा राधे मयाराध्यसे ॥

हे चन्द्रवदनि ! हे मृग लोचनि ! हे देवि ! हे सुनासिके ! हे अरुण अधरे ! हे सुस्मिते ! हे सजीव शोभाशाली भुजवल्लि-युक्ते ! हे रुचिर शङ्खग्रीवे ! हे कनक-गिरि स्तन-मण्डले ! हे क्षीण-मध्ये ! हे पृथु नितम्बे ! हे कदली-खण्डोपम जानु-शालिनी ! हे चरण-कमलोद्भासित नख-चन्द्र-मण्डल-भूषिते ! हे श्रीराधे ! मैं आपकी आराधना कब करूँगो ?

११७

प्रियतम श्रीलाल जी के प्रेम की अधिकता श्रीप्रिया-चरणानुराग से ही प्राप्त होती है । इसका वर्णन वांछा रूप से करते हैं—

राधा-पाद-सरोजभक्तिमचलामुद्वीक्ष्य निष्कैतवां
प्रीतः स्वं भजतोपि निर्भर महा प्रेम्णाधिकं सर्वशः ।
आलिङ्गत्यथ चुम्बति स्ववदनात्ताम्बूलमास्येर्पयेत्,
कण्ठे स्वां वनमालिकामपि मम न्यस्येत्कदा मोहनः ॥

श्रीराधा-चरण-कमलों में मेरी निष्कपट एवं अचला प्रीति (भक्ति) देखकर श्री प्रियाजी के अद्वितीय भक्त (प्रेमी) श्री मोहनलाल महाप्रेमाधिक्यपूरित निर्भर प्रीति-पूर्वक मेरा आलिङ्गन करके चुम्बन-दान करेंगे एवं अपना चर्वित-ताम्बूल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मेरे मुख में देकर अपनी बनमाला भी मेरे कण्ठ में पहना देगें। ऐसा कब होगा ?

११८

श्रीस्वामिनीजी की विशेषताओं का अद्भुत रूप से वर्णन करते हैं—

लावण्य परमाद्भुतं रति-कला-चातुर्य्यमत्यद्भुतं,
कान्तिः कापि महाद्भुता वरतनोर्लीलागतिश्चाद्भुता।
दृग्भङ्गी पुनरद्भुताद्भुततमा यस्याः स्मितं चाद्भुतं,
सा राधाद्भुत मूर्त्तिरद्भुत रसं दास्यं कदा दास्यति॥

जिनका लावण्य परमाद्भुत है, जिनकी रति-कला-चातुरी अति अद्भुत है, जिन श्रेष्ठ-वपु की कोई अवर्णनीय कान्ति भी महा अद्भुत है, एवं जिनकी लीला-पूर्ण गति भी अति अद्भुत है। अहा ! जिनकी नेत्र-भङ्गिमा अद्भुत से भी अद्भुततम है और जिनकी मन्द मुस्कान भी अद्भुत है, वे अद्भुत-मूर्त्ति श्रीराधा अपना अद्भुत रस-स्वरूप-दास्य मुझे कब प्रदान करेंगी ?

११६

श्रीप्रिया-मुख की शोभा का वर्णन करते हुए उसका स्मरण करते हैं—

अमद्भृकुटि सुन्दरं स्फुरित चारु बिम्बाधरं,
गृहे मधुर हुङ्कृतं प्रणय-केलि-कोपाकुलम्।
महारसिक मौलिना सभय कौतुकं वीक्षितं,
स्मरामि तव राधिके रतिकला सुखं श्रीमुखम्॥

हे श्रीराधिके ! मैं आपके रति-कला-सुख-पूर्ण श्रीमुख का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्मरण करती हूं। अहा! जिसमें भृकुटियों का सुन्दर नर्त्तन हो रहा है, चारु विम्बाधर कुछ-कुछ फड़क रहे हैं। प्रियतम श्यामसुन्दर के द्वारा भुज-लता के पकड़े जानेसे मधुर हुङ्कार-स्वर निकल रहा है एवं जिसे महा-रसिक-मौलि श्रीलालजी अत्यन्त भय एवं कौतुक-मय दृष्टि से देखते ही रहते हैं।

१२०

श्रीप्रियाजी के समस्त श्रीअङ्गों का शृँगार वर्णन करते हुए उसी का भजन करने के लिये अपने मन को सचेत करते हैं—

उन्मीलन्मुकुटच्छटा परिलसदिक्चक्रवालं स्फुरत्-
केयूराङ्गदहार-कङ्कणघटा निर्धूत रत्नच्छवि।
श्रोणी-मण्डल किङ्कणी कलरवं मञ्जीर-मञ्जुध्वनिं,
श्रीमत्पादसरोरुहं भज मनो राधाभिधानं महः॥

हे मेरे मन! तू तो श्रीराधा नामक ज्योति का ही भजन कर! जिनके देदीप्यमान् मुकुट की छटा से दिशा-मण्डल विलसित हो रहा है। जो केयूर, अङ्गद, हार और कङ्कणों की घटा से रत्नों की शोभा को परास्त कर रही है। जिसमें नितम्ब-मण्डल की किङ्किणियों का कलरव हो रहा है एवं चरण-कमलों के नूपुरों की मधुर ध्वनि शब्दित हो रही है।

१२१

श्रीस्वामिनीजी से अपनी रक्षा की याचना करते हुए प्रार्थना करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्यामा-मण्डल-मौलि-मण्डन-मणिः श्यामानुरागस्फुर—
द्रोमोद्भेद विभाविता कृतिरहो काश्मीर गौरच्छविः।
सातीवोन्मद कामकेलि तरला मां पातु मन्दस्मिता,
मन्दार-द्रुम-कुंज-मन्दिर-गता गोविन्द-पट्टेश्वरी ॥

अहो ! जो समस्त नव-तरुणि-मौलि ललितादि सहचरियों की भी भूषण-मणि रूपा हैं, जिनकी आकृति श्यामानुराग-जन्य देदीप्यमान् रोमोद्गम से चिन्हित है, जिनकी गौर छबि केशर-तुल्य है एवं जो अतीव उन्मद काम-केलि से तरल (चञ्चल) हो रही हैं; वे कोई मन्दस्मिता, मन्दार-द्रुम-कुञ्ज-मन्दिर-स्थिता, गोविन्द-पट्टेश्वरी मेरी रक्षा करें।

१२२

पुनः उपरोक्त भावानुसार ही—

उपास्य चरणाम्बुजे व्रज-भृतां किशोरीगणै—
र्महद्भिरपि पूरुषैरपरिभाव्य भावोत्सवे ।
अगाध रस धामनि स्वपद-पद्म सेवा विधौ,
विधेहि मधुरोज्वलामिव-कृतिं ममाधीश्वरि ॥

हे व्रज-श्रेष्ठ किशोरी-गणाराध्य चरणाम्बुजे ! हे नारदादि महत्पुरुषों से भी अचिन्त्य भावोत्सवे। हे स्वामिनि ! आप अगाध रस-धाम अपने चरण-कमलों की सेवा-विधि में मेरे लिये मधुर एवं उज्वल कर्त्तव्य का ही विधान कीजिये ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१२३

अब किञ्चित् अद्भुत-भाव-पूर्वक श्रीअङ्ग-दर्शन की अभिलाषा करते हैं—

आनम्राननचन्द्रमीरित दृगापाङ्गच्छटा मन्थरं
किञ्चिद्दर्शिशिरोवगुण्ठनपटं लीला-विलासावधिम् ।
उन्नीयालक-मंजरी कररुहैरालक्ष्य सन्नागर—
स्याङ्गेङ्गं तव राधिके सचकितालोकं कदा लोकये ॥

हे श्रीराधिके ! क्या मैं कभी आपके लीला-विलास-अवधि सचकित अवलोकन का विलोकन करूँगी ? कब ? जब नागर-शिरोमणि श्रीलालजी के अङ्गों से आपके अङ्ग परस्पर आलिङ्गन-बद्ध होंगे, मैं अपने नखों से आपकी अलक-मञ्जरी को ऊपर उठाकर देखूँगी कि आप अपने आनम्र मुख-चन्द्र से कटाक्षों की छटा का प्रसरण कर रही हैं—वक्र अवलोकन कर रहीं हैं, और उस छटा का दर्शन शिरोवगुण्ठन-पट से किञ्चित्-किञ्चित ही हो रहा होगा।

१२४

उक्त श्लोक में श्रीप्रियाजी के मुख को चन्द्रमा की उपमा दी गईहै किन्तु वास्तव में चन्द्रमा इस योग्य है ही नहीं; क्योंकि वह अनेकों दोषों से युक्त है और श्रीप्रिया-मुख सर्वथा निर्दोष है। अतः उपरोक्त उपमा का निवारण करते हुए श्रीप्रियाजी की प्रसन्नता की याचना करते हैं—

राकाचन्द्रो वराको यदनुपम रसानन्द कन्दाननेन्दो—
स्तत्तादृक चद्रिकाया अपि किमपि कलामात्र कस्याणुतोपि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यस्याः शोणाधर श्रीविधृत नव-सुधा-माधुरी-सार-सिन्धुः
सा राधा काम-बाधा विधुर मधुपति-प्राणदा प्रीयतां नः ।।

जिनके अनुपम रसानन्द-कन्द मुख-चन्द्र की चन्द्रिका की कला के अणु से भी पूर्णिमा का चन्द्रमा तुच्छ है और जिनके गुलाबी अधरों ने सौन्दर्य-श्री की नव-सुधा-माधुरी के सार-रूप सिन्धु को धारण कर रखा है, वे काम-बाधा-दुखित (विधुर) मधुपति श्रीलालजी की जीवन-दायिनि श्रीराधा हम पर प्रसन्न हों।

१२५

अब श्रीमुख-चन्द्र का वर्णन अभूतोपमा के द्वारा स्पष्ट करते हैं—

राकानेक विचित्र चन्द्र उदितः प्रेमामृत-ज्योतिषां
वीचीभिः परिपूरयेदगणित ब्रह्माण्ड कोटिं यदि ।
वृन्दारण्य-निकुंज-सीमनि तदाभासः परं लक्ष्यसे*,
भावेनैव यदा तदैव तुलये राधे तव श्रीमुखम् ।।

यदि अनेक-अनेक विचित्र राका-शशि उदित होकर अपनी प्रेमामृत-ज्योतिमयी तरङ्गों से अगणित कोटि ब्रह्माण्डों को आपूरित कर दें; तत्पश्चात् श्रीवृन्दावन की निकुञ्ज-सीमा में (स्थित) आप उसके आभास को भाव-पूर्ण दृष्टि से देखें, तभी हे श्रीराधे ! मैं उस चन्द्र के साथ आपके श्रीमुख की तुलना किसी प्रकार कर सकती हूँ ।

* पाठान्तर-लक्ष्यते ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१२६

अब श्रीस्वामिनीजी के ऐश्वर्य का स्पष्टी-करण करते हुए कहते हैं —

कालिन्दी-कूल-कल्प-द्रुम-तल निलय प्रोल्लसत्केलिकन्दा
वृन्दाटव्यां सदैव प्रकटतररहो वल्लवी भाव भव्या।
भक्तानां हृत्सरोजे मधुर रस-सुधा-स्यन्दि-पादारविन्दा
सान्द्रानन्दाकृतिर्नः स्फुरतु नव-नव-प्रेमलक्ष्मीरमन्दा॥

जो कालिन्दी-कूल-वर्त्ती कल्पद्रुम-तल-स्थित भवन में उल्लसित केलि-विलास की मूल स्वरूपा हैं, जो श्रीवृन्दावन में सदा-सर्वदा प्रकटतर रूप से विराजमान्, एकान्त सहचरी ललितादिकों के भावों से भव्य (सुन्दर) हैं अर्थात् परम सुन्दरी हैं एवं जो भक्तों के हृदय-कमल में अपने चरणारविन्दों का स्थापन करके मधुर-रस-सुधा का निर्झरण करती हैं; वे घनीभूत आनन्द-मूर्ति नित्य अभिनव-पूर्ण प्रेमलक्ष्मी (श्रीराधा) मेरे हृदय में स्फुरित हों।

१२७

अब श्रीस्वामिनीजी की सेवा याचना करते हैं—

शुद्ध प्रेमैकलीलानिधिरहह महातङ्कमङ्कस्थिते च,
प्रेष्ठे बिभ्रत्पदभ्रस्फुरतदुल कृपा स्नेह माधुर्य्य मूर्त्तिः।
प्राणाली कोटि नीराजित पद सुषमा माधुरी माधवेन,
श्रीराधा मामगाधामृतरस भरिते कर्हि दास्येभिषिञ्चेत्॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो पवित्र-प्रेम-लीला की एक मात्र उत्पत्ति स्थान हैं; कैसा आश्चर्य्य है कि अपने प्रियतम की गोद में रहते हुए भी जो (विच्छेद) भय को धारण किये हुए हैं तथा जिनकी चरण-सुषमा-माधुरी का नीराजन माधव श्रीकृष्ण ने अपनी कोटि-कोटि प्राण-पंक्तियों से किया है; वे अत्यधिक देदीप्यमान् अतुल कृपा-स्नेह-माधुर्य्य-मूर्ति श्रीराधा क्या कभी अपने अगाध अमृत-भरित दास्य-रस से मुझे अभिषिञ्चित करेंगी ?

१२८

पुनः उपरोक्त भावानुसार ही—

वृन्दारण्य निकुञ्जसीमसु सदा स्वानङ्ग रङ्गोत्सवै—
र्माद्यत्यद्भुत माधवाधर-सुधा माध्वीक संस्वादनैः ।
गोविन्द-प्रिय-वर्ग-दुर्गम सखी-वृन्दैरनालक्षिता,
दास्यं दास्यति मे कदा नु कृपया वृन्दावनाधीश्वरी ॥

जो सर्वदा श्रीवृन्दावन निकुञ्ज-सीमा में अपने अनङ्ग-रङ्गोत्सव के द्वारा अत्यद्भुत अधर-सुधा का आस्वादन करके उन्मत्त हो रही हैं तथा जो गोविन्द के प्रियजनों को भी दुर्गम, सखी-समुदाय के लिये अलक्षित हैं, वे श्रीवृन्दावनाधीश्वरी कभी मुझे कृपा-पूर्वक अपना दास्य प्रदान करेंगी ?

१२९

श्रीस्वामिनीजी की कृपा से जो सिद्धि प्राप्त हुई है, उसी का स्पष्टीकरण करते हुए अपने साफल्य की सूचना करते हैं—

मल्लीदाम निबद्ध चारु कबरं सिन्दूर रेखोल्लस—
त्सीमन्तं नवरत्न चित्र तिलकं गण्डोल्लसत्कुण्डलम् ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निष्कग्रीवमुदार हारमरुणं बिभ्रद्दुकूलं नवं,
विद्युत्कोटिनिभं स्मरोत्सवमयं राधाख्यमीक्षेमहः ॥

जिसकी सुन्दर कबरी नवीन-मल्लिका-दाम से निबद्ध है। सीमन्त सिन्दूर-रेखा से शोभित है। (विशाल भाल) नव-रत्नों के द्वारा विचित्र तिलक से युक्त है। गण्ड-मण्डल कुण्डलों से उल्लसित हैं। ग्रीवा में हेम-जटित पदिक है और उदार हार (हृदय देश में) शोभित हो रहा है। जिसने अरुण-वर्ण का नव-दुकूल धारण कर रखा है, और कोटि दामनियों के समान जिसकी प्रभा है; ऐसे नित्य स्मर-उत्सव-मय श्रीराधा नामक तेज का मैं दर्शन करती हूँ।

१३०

अब आठ प्रकार की सीमा के रूपान्तर द्वारा श्रीराधा-सर्वोत्कृष्टता की सूचना करते हुए जय-जयकार करते हैं—

प्रेमोल्लासैकसीमा परम रसचमत्कार वैचित्र्य सीमा,
सौन्दर्य्यस्यैक-सीमा किमपि नव-वयो-रूप-लावण्य सीमा।
लीला-माधुर्य्य सीमा निजजन परमोदार वात्सल्य सीमा,
सा राधा सौख्य-सीमा जयति रतिकला-केलि-माधुर्य्य-सीमा ॥

प्रेमोल्लास की चरम सीमा, परम रस (प्रेम) चमत्कार विचित्रता की सीमा, सौन्दर्य्य की अंतिम सीमा, अनिर्वचनीय नवीन वय, रूप एवं लावण्य की सीमा; निजजनों के प्रति परम उदारता एवं वात्सल्यता की सीमा, लीला-माधुर्य्य की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सीमा, रति-कला-केलि-माधुरी की सीमा एवं सुख की परम सीमा श्रीराधा ही सर्वोत्कृष्टता को प्राप्त हैं।

१३१

उक्त-कथित सर्वोत्कृष्ट श्रीराधा ही मेरी एक-मात्र गति हैं। इस भाव को प्रकट करते हैं—

यस्यास्तत्सुकुमार सुन्दर पदोन्मीलन्मखेन्दुच्छटा,
लावण्यैक लवोपजीवि सकल श्यामा मणी मण्डलम्।
शुद्ध प्रेम-विलास मूर्तिरधिकोन्मीलन्महा माधुरी,
धारा-सार-धुरीण-केलि-विभवा सा राधिका मे गतिः॥

जिनके उन सुकुमार एवं सुन्दर चरणों के प्रफुल्लित नखेन्दु की छटा के लावण्य का लव-मात्र ही समस्त श्यामा-रमणी मणियों के पूर्ण मण्डल का जीवन है। जो शुद्ध प्रेम-विलास की मूर्ति हैं एवं जो अधिकाधिक रूप में उन्मीलित महा माधुरी-धारा के सम्पतन को धारण करने में समर्थ हैं; वे केलि-विभव स्वरूपा श्रीराधिका ही मेरी गति हैं।

१३२

अब केलि-विभव का दर्शन कराते हैं—

कलिन्द-गिरि—नन्दिनी सलिल—विन्दु सन्दोहभृन्,
मृदूद्गति रतिश्रमं मिथुनमद्भुत क्रीडया।
अमंद रस तुन्दिल भ्रमर-वृन्द वृन्दाटवी,
निकुञ्ज वर—मन्दिरे किमपि सुन्दरं नन्दति॥

श्रीकलिन्दगिरि-नन्दिनी यमुना के जल-सीकरों को

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धारण किये हुए एवं किञ्चित् वृद्धि प्राप्त रतिश्रम से युक्त कोई अनिर्वचनीय नागरी-नागर (युगल) अमन्द रस से जड़ीभूत हो रहे हैं और भ्रमर-समूहाकीर्ण वृन्दावनस्थ वर निकुञ्ज-मंदिर में अद्भुत क्रीड़ा द्वारा आनन्दित हो रहे हैं।

१३३

पुनः उक्त भावानुसार ही—

व्याकोशेन्दीवर विकसिता मन्द हेमारविन्द,
श्रीमन्निस्यंदन रतिरसांदोलि कन्दर्प–केलि।
वृन्दारण्ये नव रस-सुधास्यन्दि पादारविन्दं,
ज्योतिर्द्वन्द्वं किमपि परमानन्द कन्दं चकास्ति॥

जो प्रफुल्लित नील-कमल और पूर्ण विकसित स्वर्ण-कमल की शोभा से युक्त है; जो स्रवित रतिरस की आन्दोलन-शील काम-केलि से समन्वित है; जिसके चरण-कमल, नव रस-सुधा को प्रवाहित करते रहते हैं एवं जो अनिर्वचनीय परमानन्द की उत्पत्ति-स्थान है, ऐसी कोई अनिर्वचनीय युगल-ज्योति श्रीवृन्दावन में चमत्कृत हो रही है।

१३४

अब युगल-किशोर की विविध सेवा-प्राप्ति की अभिलाषा करते हैं—

ताम्बूलं क्वचदर्पयामिचरणौ संवाहयामि क्वचि–
न्मालाद्यैः परिमण्डये क्वचिदहो संवीजयामि क्वचित्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कर्पूरादि सुवासितं क्व च पुनः सुस्वादु चाम्भोमृतं,
पायाम्येव गृहे कदा खलु भजे श्रीराधिका-माधवौ ॥

अहा ! कभी ताम्बूल-वीटिका अर्पित करूँगी, कभी माला, आभूषणादि से उन्हें आभूषित करूँगी, तो कभी व्यजन ही डुलाऊँगी और कभी कर्पूरादि-सुवासित सुस्वाद अमृतोपम जल-पान भी कराऊँगी । इस प्रकार निकुञ्ज-भवन में कब निश्चय रूप से मैं श्रीराधा-माधव युगल-किशोर की सेवा करूँगी ?

१३५

अब श्रीस्वामिनीजी के स्वरूप का प्रकाश करते हैं—

प्रत्यङ्गोच्छलदुज्ज्वलामृत--रस--प्रेमैक--पूर्णाम्बुधि——
लावण्यैक सुधानिधिः पुरु कृपा वात्सल्य साराम्बुधिः ।
तारुण्य-प्रथम-प्रवेश विलसन्माधुर्य्य साम्राज्य भू-
र्गुप्तः कोपि महानिधिर्विजयते राधा रसैकावधिः ॥

प्रेम का एक अनुपम परिपूर्णतम सागर है । जिसके अङ्ग-प्रत्यङ्गों से नित्य-प्रति उज्वल अमृत-रस उच्छलित होता रहता है। वह (प्रेम-महानिधि) लावण्य का भी अनुपम समुद्र है और अत्यधिक कृपामय वात्सल्य-सार का भी अम्बुधि है वह तारुण्य के प्रथम-प्रवेश से विलसित माधुर्य्य-साम्राज्य की भूमि है, और रस की एकमात्र सीमा है । वही 'राधा' नामक कोई परम-गुप्त महानिधि सर्वोत्कर्ष-पूर्वक विराजमान् है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१३६

अब श्रीराधा-कृपा-कटाक्ष की श्रेष्ठता का निरूपण करते हैं-

यस्याः स्फूर्जत्पदनखमणि ज्योतिरेकच्छटायाः
सान्द्र प्रेमामृतरस महासिन्धु कोटिर्विलासः ।
सा चेद्राधा रचयति कृपा दृष्टिपातं कदाचिन्,
मुक्तिस्तुच्छी भवति वहुशः प्राकृता प्राकृतश्रीः ॥

जिनकी प्रकाशमान् पद-नख-मणि-ज्योति की एक छटा का विलास सघन प्रेमामृत-रस के कोटि-कोटि सिन्धुओं के समान है; वे श्रीराधा यदि कदाचित् कृपा-दृष्टि-पात कर दें तो अनेक प्राकृत-अप्राकृत शोभायें और मुक्ति भी मेरे लिये तुच्छ हो जायँ ।

१३७

अब श्रीप्रिया-निकुञ्ज-मन्दिर श्रीवृन्दावन में विचरण करने एवं उनके रस से मद-मत्त होने की अभिलाषा करते हैं-

कदा वृन्दारण्ये मधुर मधुरानन्द रसदे,
प्रियेश्वर्य्याः केलीभवन नव कुञ्जानि मृगये ।
कदा श्रीराधायाः पद-कमल माध्वीक लहरी,
परीवाहैश्चेतो मधुकरमधीरं मदयिता ॥

मैं मधुर से भी मधुर आनन्द-रस-प्रद श्रीवृन्दावन में प्रियेश्वरी श्रीराधा के केलि-भवन नव-कुञ्ज-पुञ्जों का कब अन्वेषण करूगी ? और श्रीराधा-पद-कमल-मकरन्द-लहरी के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनवरत वर्षण से मेरा मन-मधुकर कब अधीर और मद-मत्त हो जायगा ?

१३८

श्रीराधा-परिचर्य्या की सर्वोपरिता का दिग्दर्शन कराते हैं-

राधाकेलि-निकुञ्ज-वीथीषु चरन्राधाभिधामुच्चर-
न्राधा अनुरूपमेवपरमं धर्म्म रसेनाचरन् ।
राधायाश्चरणाम्बुजं परिचरन्नानोपचारैर्मुदा,
कर्हि स्यां श्रुति शेखरोपरिचरन्नाश्चर्य्यचर्याचरन् ॥

श्रीराधा-केलि-निकुञ्ज-वीथियों में विचरण करते हुए, श्रीराधा-नाम का उच्चारण करते हुए, श्रीराधा के अनुरूप अपने परम धर्म (अपने किङ्करी-स्वरूप) का रस-पूर्वक आचरण करते हुए श्रीराधा-चरणाम्बुजों की विविधि उपचारों के द्वारा मोद-पूर्वक परिचर्य्या करते हुए, एवं आश्चर्य्य-रूप उपरोक्त चर्य्या का आचरण करती हुई मैं कब वेदातीत (वेदोपरि) आचरण करने के योग्य हो जाऊँगी ?

१३९

अब श्रीवृन्दावन में रति-विहार के अवसर पर श्रीप्रिया-प्रियतम की नूपुर-ध्वनि श्रवण करने की अभिलाषा करते हैं-

यातायातशतेन सङ्गमितयोरन्योन्यवक्रोल्लस-
च्चन्द्रालोकन सम्प्रभूत बहुलानङ्गाम्बुधिक्षोभयोः ।
अन्तः कुञ्ज-कुटीर तल्पगतयोर्दिव्याद्भुत क्रीडयो,
राधा-माधवयोः कदा नु शृणुयां मंजीर काञ्चीध्वनिम् ॥

(श्रीराधा-माधव युगल-किशोर अपने किसी अत्यन्त

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गुप्त अनिर्वचनीय सङ्गम-विहार में संलग्न हैं ।) पारस्परिक वक्र नेत्र-क्षेपण रूप चन्द्र-दर्शन से दोनों ओर विस्तीर्ण अनङ्गाम्बुधि प्रकट हो रहे हैं। अहा! और वे दोनों किसी परम एकान्त कुञ्ज-कुटीर-गत दिव्य तल्प पर विराजमान् होकर किसी दिव्य एवं अद्भुत क्रीड़ा में रत हैं। जिससे श्रीराधा के चरण-मञ्जीर एवं माधव की कटि-किङ्किणि की सम्मिलित रूप से बड़ी ही मधुर ध्वनि यातायात (विहार) के कारण हो रही है। मैं उसे कब सुनूँगी ?

१४०

पुनः रङ्ग-विहार सम्बन्धी भावना करते हुए उस रस से अपने चित्त को मदमत्त कर लेने की वाञ्छा करते हैं-

अहो भुवन-मोहनं मधुर माधवी-मण्डपे,
मधूत्सव-समुत्सुकं किमपि नील-पीतच्छवि ।
विदग्ध मिथुनं मिथो दृढ़तरानुरागोल्लसन्,
मदं मदयते कदा चिरतरं मदीयं मनः ॥

अनिर्वचनीय मधूत्सव-समुत्सुक, पारस्परिक दृढ़तर अनुराग के उल्लास से उन्मद हुए अनुपम नील-पीत-छविमान् भुवन-मोहन विदग्ध-युगल मेरे मन को कब सर्वदा मद-युक्त कर देंगे ?

१४१

मन वचन एवं कर्म तीनों प्रकार से श्रीस्वामिनीजी का ही आराधन सेवन होता रहे। इस भाव को स्पष्ट करते हैं-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राधानाम सुधारसं रसयितुं जिह्वास्तु मे विह्वला,
पादौ तत्पदकाङ्क्षितासुचरतां वृन्दाटवी-वीथिषु।
तत्कर्मैव करः करोतु हृदयं तस्याःपदं ध्यायता–
त्तद्भावोत्सवतः परं भवतु मे तत्प्राणनाथे रतिः॥

मेरी जिह्वा श्रीराधा-नामामृत-रस के आस्वादनार्थ सदा विह्वल (लालचवती) रही आवे। चरण श्रीराधा-पादाङ्कित वृन्दावन-वीथियों में ही विचरण करते रहें। दोनों हाथ उनके सेवा कार्य्यों में ही लगे रहें। हृदय सदा उनके मञ्जुल चरण-कमलों का ही ध्यान करता रहे एवं उन्हीं श्रीराधा के रस-भावोत्सव-सहित श्रीराधा-प्राणनाथ लालजी में मेरी परम प्रीति हो।

१४२

अब श्रीस्वामिनीजी की सर्वोपरिता प्रकट करते हैं कि आपके रस के समक्ष श्रीमुकुन्द-चरणारविन्दों का रस मन्द है—

मन्दीकृत्य मुकुन्द सुन्दर पदद्वन्द्वारविन्दामल,
प्रेमानन्दममन्दमिन्दु तिलकाद्युन्माद कन्दं परम्।
राधा-केलि-कथा-रसाम्बुधि चलद्वीचीभिरान्दोलितं
वृन्दारण्य निकुंज मन्दिर वरालिन्दे मनो नन्दतु॥

श्रीमुकुन्द के युगल सुन्दर पदारविन्द का अमल अमन्द प्रेमानन्द चन्द्र-चूड़ शिवजी आदि के लिये भी परम उन्मादक मूल है, किन्तु मेरा मन उसको भी शिथिल करके श्रीराधा-केलि-कथा-रस-समुद्र की चञ्चल लहरियों से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आन्दोलित बृन्दावनस्थ निकुञ्ज-मंदर के श्रेष्ठ-प्राङ्गण में आनन्द को प्राप्त हो ।

१४३

पुनः दूसरे प्रकार से श्रीस्वामिनीजी की सर्वोत्कृष्टता सूचित करते हैं-

राधानामैव कार्य्यं ह्यनुदिन मिलितं साधनाधीश कोटि
स्त्याज्यो नीराज्य राधापद-कमल-सुधा सत्पुमर्थाग्र कोटिः।
राधा पादाब्ज लीला-भुवि जयति सदा मंद मंदार कोटिः
श्रीराधा-किङ्करीणां लुठति चरणयोरद्भुता सिद्धि कोटिः॥

अनुदिन श्रीराधा-नाम के श्रवण-कीर्त्तनादि के प्राप्त होने पर कोटि-कोटि श्रेष्ठ साधन भी परित्याज्य हो जाते हैं। [तभी तो] श्रीराधा-पादाब्ज-लीला-भूमि श्रीवृन्दावन में अमन्द (वैभव-शाली) कोटि-कोटि कल्पतरु सदा विद्यमान रहते हैं और श्रीराधा-किङ्करी-गणों के चरणों में अद्भुत कोटि-कोटि सिद्धियाँ लोटती रहती हैं।

१४४

अभी तक दो श्लोकों में केवल श्रीस्वामिनीजी की सर्वोत्कृष्टता सूचित की। अब इस श्लोक में युगल नव-किशोर की सर्वोत्कृष्टता सूचित करते हैं-

मिथो भङ्गी कोटि प्रवहदनुरागामृत-रसो—
तरङ्ग भ्रू भङ्ग क्षुभित वहिरभ्यंतरमहो ।
मदाघूर्णन्नेत्रं रचयति विचित्रं रतिकला,
विलासं तत्कुंजे जयति नव-कैशोर-मिथुनम् ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परस्पर में हाव-भाव-समूह के विस्तार से अनुरागामृत रस बह चला है। जिसमें भ्रूनर्त्तन ही तरङ्ग हैं। इस रस से युगल के नेत्र मद-घूर्णित हो रहे हैं; वे नव-किशोर मिथुन निकुञ्ज-भवन के मध्य में रति-विलास-कला की रचना करके सर्वोत्कृष्टता को प्राप्त हो रहे हैं।

१४५

इस प्रकार *युगल-स्वरूप का वर्णन करके पुनः श्रीप्रिया-रूप का प्रत्यक्ष-दर्शी वर्णन करते हैं।*

काचिद्वृन्दावन नवलता-मन्दिरे नन्दसूनो—
र्दर्प्यद्दोष्कन्दल दृढ परीरम्भ निस्पन्द गात्री।
दिव्यानन्ताद्भुत रसकलाः कल्पयन्त्याविरास्ते
सान्द्रानन्दामृत रस-घन प्रेम-मूर्त्तिः किशोरी॥

नन्द-नन्दन श्रीलालजी की दर्प-युक्त बाहु-लताओं के गाढ़ आलिङ्गन से जिनके समस्त अङ्ग शिथिल हो रहे हैं तथा जो अद्भुत एवं अनन्त रस-कलाओं का विस्तार करती हैं। वे घनीभूत आनन्दामृत-रस एवं प्रेम-घन-मूर्ति (अनिर्वचनीय) कोई किशोरी श्रीवृन्दावन के नव-लता-मंदिर में नित्य विराजमान् हैं।

१४६

अब अनन्य भाव से श्रीराधा-रस का भजन करने वाले रसिकों की महत्ता, स्थिति एवं असाधारणता सूचित करते हैं-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

न जानीते लोकं नच निगमजातं कुल-परं—
परां वा नो जानत्यहह न सतां चापि चरितम् ।
रसं राधायामाभजति किल भावं व्रजमणौ
रहस्ये तद्यस्य स्थितिरपि न साधारण गतिः ॥

जो महानुभाव इस एकान्त देश में व्रज-मणि श्रीराधा के भाव और रस का निश्चय रूप से भजन करते हैं; अहो! वे न तो लोक को जानना चाहते हैं, न निगम समूह को; न कुल परम्परा को जानने की इच्छा रखते हैं और न साधु-आचरण की ही। ऐसे रसिकों की स्थिति साधारण नहीं वरन् असाधारण है।

१४७

ब्रह्मवाद, दास्य, एवं सख्य-भाव से भी श्रेष्ठ श्रीराधा-किङ्करी-भाव है। अब इसी की महिमा सूचित करते हैं—

ब्रह्मानन्दैकवादाः कतिचन् भगवद्वन्दनानन्द-मत्ताः
केचिद्गोविन्द-सख्याद्यनुपम परमानन्द मन्ये स्वदन्ते ।
श्रीराधा-किङ्करीणां त्वखिल सुख-चमत्कार-सारैक-सीमा
तत्पादाम्भोज राजन्नख-मणिविलसज्ज्योतिरेकच्छटापि ॥

कोई ब्रह्मानन्द वादी हैं, तो कोई भगवद्वन्दना (दास्य-भाव) में ही उन्मत्त हैं। कुछ लोग गोविन्द के सख्यादि (मैत्री-भाव) को ही परमानन्द मानकर उसके आस्वादन में लग रहे हैं किन्तु श्रीराधा-चरण-कमलों की शोभायमान् नख-मणि ज्योति की एक किरण मात्र ही श्रीराधा-किङ्करियों के लिये अखिल सुख-चमत्कार-सार की सीमा है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१४८

पुनः श्रीराधा-किङ्करी-भाव की सर्व-श्रेष्ठता और उसकी प्राप्ति की इच्छा करते हैं—

न देवैर्ब्रह्माद्यैर्न खलु हरिभक्तैर्न सुहृदा—
दिभिर्यद्वै राधा-मधुपति-रहस्यं सुविदितम् ।
तयोर्दासीभूत्वा तदुपचित केली-रस-मये
दुरन्ताः प्रत्याशा हर-हर दृशोर्गोचरयितुम् ॥

श्रीराधा-मधुसूधन का रहस्य न तो ब्रह्मादि देवताओं को ही विदित है न हरि-भक्तों को ही। और तो और श्याम सुन्दर के सखा आदिकों को भी वह सुविदित नहीं है किन्तु हरि! हरि!! मैंने उनकी दासी होकर [युगल की] सम्बर्द्धमान् केलि को असमय में भी अपने नेत्रोंसे देखने की दुर्गम आशा कर रखी है!

१४६

अब युगल-किशोर के पारस्परिक वार्त्तालाप का स्मरण करते हैं—

त्वयि श्यामे नित्ये प्रणयिनि विदग्धे रसनिधौ
प्रिये भूयोभूयः सुदृढमति रागो भवतु मे ।
इति प्रेष्ठेनोक्ता रमण मम चित्ते तव वचो
वदन्तीति स्मेरा मम मनसि राधा विलसतु ।

प्रियतम ने कहा—"हे श्यामे! हे नित्य प्रणयिनी! हे विदग्धे! हे प्रिये! आप रस-निधि में बारम्बार मेरा सुदृढ़

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुराग हो"। इस प्रकार प्रियतम श्रीकृष्ण के द्वारा कहे जाने पर "हे रमण! मेरे हृदय में आपके (यही) वचन हैं" यह कहती हुई मन्द हास-युक्ता श्रीराधा मेरे हृदय में सदा-सर्वदा विलास करें।

१५०

अब अपनी दीनता का प्रकाश करते हुए कुछ प्रार्थना करते हैं—

सदानन्दं वृन्दावन-नवलता-मन्दिर वरे—
ष्वमन्दैः कन्दर्पोन्मदरति-कला-कौतुक-रसम् ।
किशोरं तज्ज्योतिर्युगलमतिघोरं मम भवं
ज्वलज्ज्वालं शीतैः स्वपद-मकरन्दैः शमयतु ॥

श्रीवृन्दावन के नवलता-वर मन्दिर में तीव्र कामोन्मद-रति-केलि-कला-कौतुक-रस स्वरूप एवं सदा आनन्द-मय किशोरा-कृति वह युगल-ज्योति अपने चरण-कमलों के शीतल मकरन्द से मेरे अति-घोर ज्वलित-ज्वाल-भव को शान्त करे।

१५१

अब सम्बोधन के रूप में श्रीअङ्ग-शोभा का वर्णन करते हुए दर्शन की अभिलाषा करते हैं—

उन्मीलन्नव मल्लिदाम विलसद्धम्मिल्लभारे बृह—
च्छ्रोणी मण्डल मेखला कलरवे शिञ्जान[1] मंजीरिणी ।
केयूराङ्गद कङ्कणावलिलसद्दोर्वल्लि दीप्तिच्छटे
हेमाम्भोरुह कुड्मलस्तनि कदा राधे दृशा पीयसे ॥

१—पाठान्तर—शिञ्जत्सु ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे प्रफुल्लित मल्ली-माल-शोभामाना-कबरि-भारे! हे पृथु-नितम्ब-मण्डल-मेखला-कलरवे! हे शब्दायमान नूपुर-धारिणि! हे केयूर अङ्गद कङ्कणावलि-विलसित भुजलता-दीप्तिच्छटे। हे स्वर्ण-कमल-कलिका-स्तनि! हे श्रीराधे! मैं आपके इस रूप-रस का कब अपने नेत्रों से पान करूँगी?

१५२

पुनः उपरोक्त भावानुसार ही—

अमर्यादोन्मीलत्सुरत रस पीयूष जलधेः
सुधाङ्गैरुत्तुङ्गैरिव किमपि दोलायित तनुः।
स्फुरन्ती प्रेयोङ्के स्फुट कनक-पङ्केरुह-मुखी
सखीनां नो राधे नयनसुखमाधास्यसि कदा॥

प्रफुल्ल कनक-कमल-मुखी हे श्रीराधे! मर्यादा का अतिक्रम करके सुरत-रस का जो सुधा-समुद्र उद्भूत हुआ है, उसके अत्युच्च सुधा-स्वरूप अङ्गों के द्वारा आपका श्रीवपु अनिर्वचनीय रूप-यौवन से आन्दोलित सा हो रहा है। आप प्रियतम के अङ्क में चञ्चल हो रही हैं, हे स्वामिनि! आप हम सखियों के नेत्र-सुख का विधान कब करोगी?

१५३

अब अपने साथ श्रीप्रियाजी के सम्भाषण एवं श्रवण की अभिलाषा करते हैं और उसकी मनोहरता का वर्णन करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्षरन्तीव प्रत्यक्षरमनुपम प्रेम—जलधिं
सुधाधारा वृष्टीरिव विदधती श्रोत्रपुटयोः।
रसार्द्रा सन्मृद्वी परम सुखदा शीतलतरा
भवित्री किं राधे तव सह मया कापि सुकथा॥

अहा! जिसके अक्षर-अक्षर से अनुपम प्रेम-जलधि निर्झरित हो रहा है। जो कर्ण-पुटों में मानों अमृत-धारा-वृष्टि का विधान करता है, एवं जो रस से प्रचुर, परम कोमल, परम सुखद तथा परम शीतल है। हे श्रीराधे! मेरे साथ कभी आपका वह रसमय सम्भाषण होगा जो सब प्रकार से अनिर्वचनीय है?

१५४

अब प्रकारान्तर से श्रीराधा-नाम की महिमा का प्रकाश करते हैं—

अनुल्लिख्यानन्तानपि सदपराधान्मधुपति—
र्महाप्रेमाविष्टस्तव परमदेयं विमृशति।
तवैकं श्रीराधे गृणत इह नामामृत रसं
महिम्नः कः सीमां स्पृशति तव दास्यैकमनसाम्॥

हे श्रीराधे! जो कोई आपके 'श्रीराधा' इस एक ही अमृत-रूप नाम का गान अथवा स्मरण कर लेता है उसके अनन्त-अनन्त महत् अपराधों की आपके महाप्रेमाविष्ट प्रियतम मधुपति गणना न करके यह विचारने लगते हैं कि इसको (इस नामोच्चार के बदले में) क्या देना चाहिये?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अतएव जिन्होंने अपने मन में आपका एक-मात्र दास्य ही स्वीकार कर रखा है; उनकी महिमा-सीमा का स्पर्श कौन कर सकता है ?

१५५

अब श्रीप्रिया-प्रियतम के मुख-चर्वित ताम्बूल को प्राप्त करने की अभिलाषा करते हैं —

ललित नव लवङ्गोदार कर्पूरपूरं —
प्रियतम--मुख--चन्द्रोद्गीर्ण ताम्बूल--खण्डम् ।
घनपुलक कपोला स्वादयन्ती मदास्ये—
र्पयतु किमपि दासी-वत्सला कर्हि राधा ॥

कपूर की शीतलता के कारण जिनके कपोलों पर पुलक का उदय हो रहा है और जो अनिर्वचनीय रूप से दासी-वत्सला हैं। ऐसी श्रीराधा प्रियतम श्रीकृष्ण के मुख-चन्द्र द्वारा चर्वित, नव-लवङ्ग-चूर्ण एवं प्रचुर कर्पूर-समन्वित ताम्बूल-खण्ड का आस्वादन करते-करते कब [उस चर्वित ताम्बूल को] मेरे मुख में अर्पण करेंगी ?

१५६

क्या स्वामिनीजी मुझे अपना दास्य देंगी ? ऐसी प्रार्थना करते हैं—

सौन्दर्यामृत-राशिरद्भुत महालावण्य-लीला-कला
कालिन्दीवर-वीचि-डम्बर परिस्फूर्जत्कटाक्षच्छविः ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सा कापि स्मरकेलि-कोमल-कला-वैचित्र्य-कोटि स्फुर—
त्प्रेमानन्द घनाकृतिर्दिशतु मे दास्यं किशोरी-मणिः ॥

काम-केलि-कोमल-कलाओं की कोटि-कोटि विचित्रताओं का विकाश करने वाली, प्रेमानन्द-घन-मूर्त्ति एवं सौन्दर्य्यामृत-राशि कोई अवर्णनीय किशोरी-मणि हैं। जिनकी नेत्र-कटाक्षच्छवि कालिन्दी के मनोहर वीचि-विलास की विशाल छवि की अपेक्षा अधिक चमत्कृत है। और अन्यान्य अद्भुत एवं महानतम् लावण्य-लीलाएँ भी जिनकी एक कला—अंश मात्र हैं [अथवा जो लीलाओं की निधान हैं।] वे दिव्य किशोरी-मणि मुझे अपना दास्याधिकार प्रदान कर दासी-रूप से स्वीकार करें।

१५७

प्रथम जिनका स्वरूप वर्णित है उन दिव्य तेजोमयी राशि स्वामिनीजी को जानने की अभिलाषा करते हैं—

दुकूलमति कोमलं कलयदेव कौसुम्भकं
निबद्ध मधु-मल्लिका ललित माल्य-धम्मिल्लकम् ।
बृहत्कटितट स्फुरन्मुखर मेखलालङ्कृतं
कदा नु कलयामि तत्कनक-चम्पकाभं महः ॥

जिसने कसूँभे रँग का अत्यन्त कोमल दुकूल धारण किया है, जिसकी कबरी बासन्ती-मल्लिका की ललित मालावली से निबद्ध है एवं जिसके विशाल कटि-तट (नितम्बभाग) में देदीप्यमान् एवं मुखरित मेखला अलंकृत हो रही है। उस कनक-चम्पकमयी ज्योति को मैं कब देखूँगी ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१५८

अब रास-नृत्य-दर्शन की अभिलाषा करते हैं—

कदा रासे प्रेमोन्मद रस-विलासेऽद्भुतमये
दिशोर्मध्ये आजन्मधुपति सखी-वृन्द-वलये ।
मुदान्तः कान्तेन स्वरचित महालास्य-कलया
निषेवे नृत्यन्ती व्यजन नव ताम्बूल-सकलैः ॥

प्रेमोन्मद रस-विलास पूरित अत्यन्त अद्भुत रास; जिसमें मधुपति श्रीलालजी के चारों ओर सखियाँ ऐसी शोभित हो रही हैं जैसे कङ्कण। इस रास में वे अपने प्रफुल्लित-चित्त कान्त— श्रीलालजी के साथ स्वरचित लास्य-कला-पूर्वक नृत्य कर रही हैं। मैं कब व्यजन एवं नव-ताम्बूल, शकल (सुपारी) आदि से उनकी सेवा करूँगी ?

१५९

अब उपरोक्त रास का ही विस्तार-पूर्वक वर्णन करते हैं—

प्रसृमर पटवासे प्रेम–सीमा–विकाशे
मधुर–मधुर हासे दिव्य भूषा–विलासे।
पुलकित दयितांसे सम्बलद्बाहु-पाशे
तदतिललित रासे कर्हि राधामुपासे ॥

जिस रास में विस्तार-प्राप्त-पटवास, प्रेम-सीमा का विकाश, मधुर-मधुर हास, दिव्य आभूषणों का विलास, एवं श्रीप्रियाजी के पुलकित अंस पर सुवलित वाहु-पाश है; उस रास

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में श्रीराधा की मैं कब उपासना (अभ्यर्चना) करूँगी ?

१६०

अब रास-मण्डल में स्थित श्रीप्रिया-मुख-छवि का वर्णन करते हुए कहते हैं —

यदि कनक–सरोजं कोटि–चन्द्रांशु–पूर्णं
नव–नव मकरन्द स्यन्दि सौन्दर्य–धाम ।
भवति[1] लसित चञ्चत्खञ्जन द्वन्द्वमास्यं
तदपि मधुर हास्यं दत्त दास्यं न तस्याः ॥

यदि कोई सौन्दर्य-धाम स्वर्ण-कमल कोटि-कोटि चन्द्रों की किरणों से पूर्ण हो और जिससे नवीन-नवीन मकरन्द झरता ही रहता हो, वह कमल, सौन्दर्य का तो मानो धाम ही हो; जिसमें दो खञ्जन खेल रहे हों ऐसा अनुपम कमल भी श्रीप्रियाजी के मुख-कमल के मधुर हास के दास्य को प्राप्त नहीं करता ।

१६१

पहिले श्लोक में जिस मुख-कमल का वर्णन किया गया है, अब इस श्लोक में उसी मुख-कमल के दर्शन की अभिलाषा करते हैं-

सुधाकरसुधाकरं प्रतिपदस्फुरन्माधुरी
धुरीण नव चन्द्रिका जलधि तुन्दिलं राधिके ।
अतृप्त हरि–लोचन-द्वय चकोर–पेयं कदा
रसाम्बुधि समुन्नतं वदन–चन्द्रमीक्षे तव ॥

१—पाठान्तर—भजति ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो सुधाकर (चन्द्र) को भी असत् कर दिखाने वाला है, जो पद-पद पर देदीप्यमान् माधुरी के श्रेष्ठतम् सार-रूप नवीन किरणों के समुद्र से पूरित है, जो श्रीहरि के युगल-लोचन-चकोरों का पेय है और जो रस-समुद्र-द्वारा प्रकर्ष को प्राप्त है। हे श्रीराधे ! मैं आपके उस वदन-चन्द्र को कब देखूँगी ?

१६२

इस प्रकार श्रीमुख-चन्द्र का वर्णन करके अब केलि का वर्णन करते हैं—

अङ्ग-प्रत्यङ्ग रिङ्गन्मधुरतर महा कीर्त्ति—पीयूष सिन्धो:
रिन्दो: कोटिर्विनिद्धदनमति मदालोल नेत्रं दधत्या: ।
राधाया सौकुमार्य्याद्भुत ललित तनो: केलि-कल्लोलिनीना—
मानन्दस्यन्दिनीनां प्रणय-रसमयान् किं विगाहे प्रवाहान् ॥

जिनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग से मधुरातिमधुर महा-कीर्ति-पीयूष-सिन्धु प्रवाहित होता रहता है, जिनका कोटि-कोटि चन्द्र-विनिन्दक शोभाशाली श्रीमुख अति मद-चञ्चल नेत्रों से युक्त है; अहो ! जो अत्यद्भुत सौकुमार्य्य से अति-ललित तनु हैं। क्या मैं ऐसी श्रीराधा की प्रणय-रसमयी आनन्द-निर्झरिणी केलि-सरिता-प्रवाह में कभी अवगाहन करूँगी ?

१६३

अब एक चमत्कार-पूर्ण मनोरथ की भावना करते हुए कहते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मत्कण्ठे किं नखरशिखया दैत्यराजोऽस्मि नाहं
मैवं पीडां कुरु कुच-तटे पूतना नाहमस्मि ।
इत्थं कीरैरनुकृत--वचः प्रेयसा--सङ्गतायाः
प्रातः श्रोष्ये तव सखि कदा केलि-कुञ्जे मृजन्ती ॥

"मेरे कण्ठ में नखाग्र-घात क्यों करते हो मैं कोई दैत्यराज (तृणावर्त्त) तो हूँ नहीं ? अरे ! मेरी कुच-तटी में पीड़ा मत दो मैं पूतना नहीं हूँ !" हे सखि ! प्रियतम-सङ्गम के समय तुम्हारे इन शुक-अनुकृत बचनों को प्रातःकाल केलि-कुञ्ज का मार्जन करती हुई मैं कब सुनूँगी ?

१६४

अब श्रीस्वामिनीजी के प्रति अपनी अनन्यता प्रकट करते हुए कहते हैं—

जाग्रत्स्वप्न सुषुप्तिषु स्फुरतु मे राधापदाब्जच्छटा
वैकुण्ठे नरकेथ वा मम गतिर्नान्यस्तु राधां विना ।
राधा-केलि-कथा-सुधाम्बुधि महावीचीभिरान्दोलितं
कालिन्दी-तट-कुञ्ज-मन्दिर-वरालिन्दे मनो विन्दतु ॥

श्रीराधा-केलि-कथा-सुधा-समुद्र की महान् लहरियों से आन्दोलित मेरा मन कालिन्दी कूलवर्त्ती श्रेष्ठ लता-मन्दिर के प्राङ्गण में ही आनन्द पाता रहे और जागृत, स्वप्न एवं सुषुप्ति में भी श्रीराधा-पद-कमलों की छटा ही मेरे मन में स्फुरित होती रहे, किं वहुना, बैकुण्ठ अथवा नरक में भी श्रीराधा के अतिरिक्त मेरे लिये कोई अन्य गति न हो ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१६५

अब निकुञ्ज-महल की रहस्य-कालीन-टहल की भावना करते हुए कहते हैं—

अलिन्दे कालिन्दी-तट-तव-नवलता-मन्दिरवरे—
रतामर्दोद्भूत श्रमजल—भरापूर्ण वपुषोः।
सुख स्पर्शोनामीलित नयनयोः शीतमतुलं
कदा कुर्य्यां सम्वीजनमहह राधा-मुरभिदोः॥

अहा! कालिन्दी-कूलवर्त्ती नव-लता-मन्दिर-गत-प्राङ्गण में रति-केलि-मर्दन से उद्भूत (प्रकट हुए) श्रम-जल-प्रवाह से परिपूरित शरीर और सुख-स्पर्श से आमीलित (मुँदे हुए) नयन श्रीराधा-सुधा-मधुसूदन को मैं कब अतुल सम्वीजन (द्वारा बयार) करूँगी?

१६६

अब नित्य-विहार की एक रूप-रेखा प्रकट करते हैं—

क्षणं मधुर गानतः क्षणममन्द हिन्दोलतः
क्षणं कुसुम वायुतः सुरत-केलि-शिल्पैः क्षणम्।
अहो मधुरसद्रस प्रणय-केलि वृन्दावने
विदग्धवरनागरी- रसिक- शेखरौ-खेलतः॥

अहो! मधुर एवं श्रेष्ठ रस-केलिकय श्रीवृन्दावन में विदग्ध श्रेष्ठ, नागरी-मणि (श्रीप्रियाजी) एवं रसिक-शेखर (श्रीलालजी) कभी तो मधुर-मधुर गान से, कभी अमन्द

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(वेगवान्) हिण्डोल से, (झूलकर) कभी कुसुम-सुरभित वायु के सेवन से, तो कभी सुरत-केलि-चातुरी का प्रकाश करके क्रीड़ा करते रहते हैं।

१६७

अब उक्त सुरत-केलि-चातुरी का वर्णन करते हैं—

अद्यश्याम किशोर मौलिरहह प्राप्तो रजन्या-मुखे
नीत्वा तां करयोः प्रगृह्य सहसा नीपाटवीं प्राविशत्।
श्रोष्ये तल्प मिलन्महा रतिभरे प्राप्तेपि शीत्कारितं
तद्वीची-सुख-तर्जनं किमु हरेः स्वश्रोत्र रन्ध्राश्रितम् ॥

अहह ! आज सहसा सन्ध्या-समय श्याम-किशोर-मौलि उन (श्रीराधा) के दोनों हाथ पकड़कर एकान्त कदम्ब-अटवी में प्रवेश कर गये; वहाँ केलि-तल्प-मिलित महा-रति-प्रवाह को प्राप्त हुए श्रीलालजी के श्रवण-रन्ध्रों के आश्रय-रूप (श्रीराधा) सुख-तरङ्ग के तर्जन—शीत्कार को क्या मैं श्रवण करूँगी ?

१६८

अब एक श्लोक के द्वारा प्रथमावस्था के मिलन-शृंगार का वर्णन करते हैं—

श्रीमद्राधे त्वमथ मधुरं श्रीयशोदाकुमारे
प्राप्ते कैशोरकमतिरसाद्वल्गसे साधु-योगम् ।
इत्थं बाले महसि कथया नित्यलीला-वयःश्री
जातावेशा प्रकट सहजा किन्नु दृश्या किशोरी ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अहो ! यशोदानन्दन श्रीकृष्ण तो कैशोरावस्था को प्राप्त हो ही चुके हैं, और श्रीमती राधे ! तुम भी प्रेमाधिक्य के वश होकर उसी मधुर साधु-योग को प्राप्त हो गई हो; इस प्रकार कहते ही जिनका नित्य लीलानुकूल वयःश्री में प्रवेश हुआ है; ऐसी [प्राकट्य के साथ ही] किशोरावस्था को प्राप्त किशोरी क्या हमारे दृष्टि-गोचर होंगी ?

१६९

अब युगल-क्रीड़न की एक झाँकी का वर्णन किसी सखी से करते हैं—

एकं काञ्चन चम्पकच्छवि परं नीलाम्बुद श्यामलं,
कन्दर्पोत्तरलं तथैकमपरं नैवानुकूलं बहिः ।
किञ्चैकं बहुमान-भङ्गि रचवच्चाटूनि कुर्वत्परं
वीक्षे क्रीडति कुञ्जसीम्नि तदहो द्वन्द्वं महा मोहनम् ॥

एक कनक-चम्पक-छविमान् है, तो दूसरा सजल-सघन-नील-मेघवत् श्याम । एक कन्दर्प-ज्वर से चञ्चल हो रहा है, तो दूसरा अन्तर से अनुकूल होकर भी बाहर से प्रतिकूल है । ऐसे ही एक मान की अनेक भङ्गिमाओं से पूर्ण है तो दूसरा रस-पूर्ण वचनों के द्वारा चाटुकारी-परायण । अहो ! क्या मैं केलि-निकुञ्ज की सीमा में इन महा मोहन युगल को देख सकूँगी ?

१७०

पुनः उपरोक्त भावानुसार ही—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विचित्र रति-विक्रमं दधदनुक्रमादाकुलं
महा मदन-वेगतो निभृत मञ्जु कुञ्जोदरे ।
अहो विनिमयन्नवं किमपि नील-पीतं पटं
मिथो मिलितमद्भुतं जयति पीत-नीलं महः ॥

अहो! महा-मदन-वेग से आकुल होकर दोनों कभी तो अनुक्रम से विचित्र रति-पराक्रम को धारण करते हैं और कभी अनिर्वचनीय अभिनव-नील-पीत पट का आपस में विनिमय करते हैं। इस प्रकार मञ्जुल निभृत निकुञ्ज-मन्दिर में अलौकिक अद्भुत रूप से मिलित कोई दो अनिर्वचनीय नील-पति ज्योति सर्वोत्कृष्टता को प्राप्त हैं।

१७१

पुनः फिर भी उक्त भावानुसार ही—

करे कमलमद्भुतं भ्रमयतोर्मिथोंसार्पित
स्फुरत्पुलक दोर्लता युगलयोः स्मरोन्मत्तयोः ॥
सहास-रस-पेशलं मद करीन्द्र-भङ्गीशतै—
र्गतिं रसिकयोर्द्वयोः स्मरत चारु वृन्दावने ॥

अद्भुत कमल को हाथों में घुमाते हुए, एवं परस्पर स्कन्धों पर पुलकित भुजलता अर्पित किये हुए, कामोन्मत्त, वृन्दावन-विहारी, रसिक युगल की सहास-रस-सुन्दर, शत-शत मदपूर्ण करीन्द्र-गतिमान् भङ्गिमाओं के समान गति का (हे मेरे मन!) तू स्मरण कर?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[stamp]

१७२

इस प्रकार युगल-स्वरूप का वर्णन करके अब अपनी श्रीस्वामिनीजी के युगल-चरणों की सेवा-वाञ्छा करते हैं—

खेलन्मुग्धाक्षि मीन स्फुरदधरमणी विद्रुम-श्रोणि-भार
द्वीपायामोत्तरङ्ग स्मरकलभ-कटाटोप वक्षोरुहायाः।
गम्भीरावर्त्तनाभेर्वहलहरि महा प्रेम-पीयूषसिन्धोः
श्रीराधाया पदाम्भोरुह परिचरणे योग्यतामेव मृग्ये[1] ॥

जिनके मुग्ध नयन ही चञ्चल-मीन हैं, देदीप्यमान् अधर ही विद्रुम-मणि हैं, जिनके पृथु नितम्ब ही द्वीप हैं उस द्वीप-विस्तार के तरङ्गायित-प्रदेश में काम-करि-शावक के कुम्भ-द्वय के समान युगल-कुच हैं, जिनकी नाभि गम्भीर आवर्त्त के समान है; मैं ऐसी श्रीकृष्ण-प्रेमामृत-सिन्धु-रूपा श्रीराधा के युगल-चरणारविन्दों की परिचर्य्या करने की योग्यता का अन्वेषण करती हूँ।

१७३

अब यह प्रकट करते हैं कि इन युगल-किशोर परम ज्योति को ही मैंने सर्वोपरि जाना और माना है एवं इन्हीं में मेरी परम आसक्ति है—

विच्छेदाभास मानादहह निमिषतो गात्रविस्रंसनादौ,
चञ्चत्कल्पाग्नि कोटि ज्वलितमिव भवेद्बाह्यमभ्यन्तरं च।
गाढ स्नेहानुबन्ध-ग्रथितमिव तयोरद्भुत प्रेम-मूर्त्योः
श्रीराधा-माधवाख्यं परमिह मधुरं तद् द्वयं धाम जाने ॥

---

1. पाठान्तर—गेपे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कैसा आश्चर्य है कि केवल शरीर से ही विलग होने में निमेष-मात्र का वियोगाभास ही जिनके मन और देह के लिये प्रकाशमान् कोटि-प्रलयाग्नि-ज्वाला के समान प्रतीत होता है। बस; उन्हीं गाढ़-स्नेहानुबन्ध से ग्रथित (गुंथे हुए से) अद्भुत प्रेम-मूर्ति श्रीराधा-माधव-नामक युगल को ही मैं इस संसार में (अपना) परम-मधुर आश्रय जानती हूँ।

१७४

अब अपने उपास्य की अन्तरङ्ग-सेवा की भावना करते हुए उसी सेवा की अभिलाषा करते हैं—

कदा रत्युन्मुक्तं कचभरमहं संयमयिता
कदा वा संधास्ये त्रुटित नव-मुक्तावलिमपि।
कदा वा कस्तूर्यास्तिलकमपि भूयो रचयिता,
निकुञ्जान्तर्वृत्ते नव रति-रणे यौवन मणेः॥

नव-निकुञ्ज में नित्याभिनव रतिरण के उपरान्त, यौवन-मणि श्रीराधा के विगलित (उन्मुक्त) केश-पाश का मैं कब बन्धन करूँगी ? उनकी टूटी मुक्त-माला को कब पिरोऊँगी अथवा कस्तूरी-पङ्क के द्वारा तिलक की पुनः रचना कब करूँगी ?

१७५

श्रीवृन्दावन का महत्व वैकुण्ठ से भी अधिक है, इसका प्रकाश करते हुए अब यह प्रकट करते हैं कि श्रीराधिका-किङ्करियों के अतिरिक्त यह वृन्दावन सबके लिये अगम्य है—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किं ब्रूमोन्यत्र कुण्ठीकृतकजनपदे धाम्न्यपि श्रीविकुण्ठे
राधा माधुर्य्य वेत्तामधुपतिरथ तन्माधुरीं वेत्ति राधा ।
वृन्दारण्य-स्थलीयं परम-रस-सुधा-माधुरीणां धुरीणां
तद्द्वन्द्वं स्वादनीयं सकलमपि ददौ राधिका-किङ्करीभ्यः।।

अन्यत्र की तो बात ही क्या श्रीविकुण्ठ-धाम भी (श्रीराधा-माधुर्य्य के अभाव से) कुण्ठित-प्रदेश बन गया है, क्योंकि श्रीराधा के माधुर्य्य को केवल श्रीमाधव ही जानते हैं और श्रीमाधव के माधुर्य्य को केवल श्रीराधा जानती हैं। और इन आस्वादनीय युगल को परम रस-सुधा-माधुरी-अग्रगण्य श्रीवृन्दारण्य-स्थली ने श्रीराधा-किङ्करी-गणों को सम्पूर्ण रूप से प्रदान कर दिया है।

१७६

अब गङ्गा के रूपक से श्रीस्वामिनीजी की सर्वोत्कृष्टता सूचित करते हैं—

लसद्वदन–पङ्कजा नव गभीर नाभि-भ्रमा,
नितम्ब-पुलिनोल्लसन्मुखर काञ्चि-कादम्बिनी ।
विशुद्ध रस-वाहिनी रसिक-सिन्धु-सङ्गोन्मदा
सदा सुर-तरङ्गिणी जयति कापि वृन्दावने ॥

जिसमें प्रफुल्ल मुख ही कमल है। नव-गम्भीर नाभि ही भँवर है। नितम्ब ही पुलिन हैं। उस नितम्ब-देश (पुलिन) में मुखरित काञ्ची ही मानो मेघ-माला है। जिसमें केवल विशुद्ध

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रस ही प्रवाहित होता रहता है और जो रसिक-सिन्धु (श्रीलाल-जी) से सङ्गम करने के लिये उन्मद हो रही है। उस श्रीवृन्दा-वनस्थ अनिर्वचनीय सुर-तरङ्गिणी की सदा जय हो।

१७७

उपरोक्त भाव को ही फिर प्रकारान्तर से प्रकट करते हैं—

अनङ्ग नव रङ्गिणी रस-तरङ्गिणी सङ्गतां
दधत्सुख-सुधामये स्वतनु-नीरधौ-राधिकाम् ।
अहो मधुप-काकली मधुर-माधवी मण्डपे
स्मरक्षुभितमेधते सुरत-सीधुमत्तं महः ॥

अहो! आश्चर्य तो देखो! मधुप-मन्द-गुञ्जन-पूरित मधुर माधवी-मण्डप में कोई सुरतामृत-मत्त दिव्य (नील) ज्योति स्मर-पीड़ा से क्षुभित होकर भी वृद्धि को प्राप्त हो रही है। और उस दिव्य ज्योति ने अपने सुख-सुधामय शरीर-समुद्र में ही नव-नव अनङ्गों को भी अनुरञ्जित करनेवाली रस-तरङ्गिणी श्रीराधिका को धारण कर रखा है!

१७८

अब श्रीवृन्दावन के रूपक से श्रीस्वामिनीजी का वर्णन करते हैं—

रोमाली मिहिरात्मजा सुललिते बन्धूक-बन्धु प्रभा
सर्वाङ्गस्फुटचम्पकच्छविरहो नाभी-सरः शोभना ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वक्षोजस्तवका लसद्भुजलता शिञ्जापतञ्छुङ्कृतिः
श्रीराधा हरते मनोऽमधुपतेरन्येव वृन्दाटवी ॥

अहो ! जिनकी रोमावली यमुना के समान है। अङ्ग-प्रभा, बन्धूक-बन्धु (पुष्प-विशेष) के समान है। जिनके सुललित सर्वाङ्ग में चम्पक की छवि प्रकट हो रही है। जो नाभि-सरोवर के कारण दर्शनीय (शोभना) बन रही हैं। जिनके वक्षोज ही पुष्प-गुच्छ हैं। भुजा ही लता-रूप में शोभित हैं और जिनके आभूषणों का शब्द ही मधुर झङ्कार है। ऐसी श्रीराधा दूसरी वृन्दाटवी के समान माधव के मन का हरण कर रही हैं।

१७६

अब अन्तरङ्ग सेवा-सम्बन्धी दूसरा मनोरथ करते हैं—

राधामाधवयोर्विचित्र सुरतारम्भे निकुञ्जोदर—
स्रस्त प्रस्तर सङ्गतैर्वपुरलं कुर्वेङ्ग रागैः कदा ॥
तत्रैव त्रुटिताः स्रजो निपतिताः संधायभूयः कदा,
कण्ठे धारयितास्मि मार्जन कृते प्रातः प्रविष्टास्म्यहम् ॥

मैं प्रातःकाल निकुञ्ज-मन्दिर के मध्य भाग के सम्मार्जन के लिये प्रविष्ट होकर श्रीराधा-माधव के विचित्र सुरत-केलि के आरम्भ में अस्त-व्यस्त शय्या में लगे हुए पङ्किल अङ्गराग के द्वारा कब अपने शरीर को भूषित करूँगी ? एवं वहीं टूटकर गिरी हुई उनकी पुष्प-माला का पुनः संधान करके उसे कब कण्ठ में धारण करूँगी ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१८०

किसी समय वियोगात्मक शृंगार का अनुभव करने के लिये श्रीलालजी नन्द-भवन में चले गये इसलिये कि देखें; मेरे वियोग में श्रीप्रियाजी की क्या दशा होती है? उसी दशा का श्रीहितचन्द्र प्रभु प्रकाश करते हैं—

श्लोकान्प्रेष्ठ यशोङ्कितान् गृहशुकानध्यापयेत्कर्हिचिद्
गुञ्जा-मञ्जुलहार वर्हमुकुटं निर्माति काले क्वचित्।
आलिख्य प्रियमूर्त्तिमाकुल कुचौ सङ्घट्टयेद्वा कदा—
प्येवं व्यापृतिभिर्दिनं नयति मे राधा प्रिय स्वामिनी॥

कभी घर के तोतों को अपने प्रियतम के यश से अङ्कित श्लोकों का अध्यापन कराती हैं, तो कभी मञ्जुल गुञ्जा-हार और मोर-मुकुट का निर्माण करती हैं। कभी प्रियतम की प्रिय-मूर्त्ति का चित्रण करके उसे अपने आकुल युगल-कुचों से चिपका ही लेती हैं। इस प्रकार के व्यापारों द्वारा मेरी प्रिय स्वामिनी श्रीराधा अपना वियोग-पूर्ण दिन व्यतीत करती हैं।

१८१

अब अपने सर्वात्म-समर्पण-भाव का प्रकाश करते हुए मानो प्रकारान्तर से उपदेश करते हैं—

प्रेयः सङ्ग-सुधा सदानुभवनी भूयो भवद्भाविनी,
लीला-पञ्चम रागिणी रति-कला-भङ्गी-शतोद्भाविनी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कारुण्य-द्रव-भाविनी कटि-तटे काञ्ची-कलाराविणी
श्रीराधैव गतिर्ममास्तु पदयोः प्रेमामृत-श्राविणी ॥

जो सदैव प्रियतम-सङ्ग-सुधास्वादन का ही अनुभव करती हैं, जो नित्य नवीन भाविनी (कामिनी) हैं, जो लीला-काल में पञ्चम-राग की अनुरागवती हैं, जो रतिकला की शत-शत भङ्गिमाओं का उद्भावन करने वाली हैं, जो करुण रस की सृष्टि कर्त्री हैं, जो कटि-तट में काञ्ची-कला-शब्द-कारिणी हैं, तथा जिनके पद-युगल से प्रेमामृत झरता ही रहता है, वे श्रीराधा ही मेरी एकमात्र गति हैं।

१८२

पुनः श्रीस्वामिनीजी का वर्णन करते हुए प्रार्थना करते हैं—

कोटीन्दुच्छवि हासिनी नव-सुधा-सम्भार सम्भाषिणी
वक्षोज द्वितयेन हेम-कलश श्रीगर्व-निर्वासिनी ।
चित्र-ग्राम-निवासिनी नव-नव प्रेमोत्सवोल्लासिनी
वृन्दारण्य-विलासिनी किमुरहो भूयाद्धृदुल्लासिनी ॥

जो कोटि-चन्द्रों की छवि का उपहास करने वाली हैं, जिनका सम्भाषण नवीनतम् सुधा-समूह से पूर्ण है। जो अपने युगल-वक्षोज से स्वर्ण-कुम्भ के श्रीगर्व का निर्वासन करती हैं; वे प्रेमोत्सव-उल्लासमयी चित्र-ग्राम (वृहत्सानु, बरसाना)-निवासिनी श्रीवृन्दारण्य-विलासिनी (श्रीराधा) क्या मेरे लिये एकान्त-हृदयोल्लास की दाता होंगी ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१८३

अब श्रीललिता सखी से सङ्गीत-कला-शिक्षण की अभिलाषा करते हैं—

कदा गोविन्दाराधन ललित ताम्बूल शकलं
मुदा स्वादं स्वादं पुलकित तनुर्मे प्रिय सखी।
दुकूलेनोन्मीलन्नव कमल किञ्जल्क रुचिना
निवीताङ्गी सङ्गीतक निजकलाः शिक्षयति माम्॥

गोविन्द की प्रसन्नता से प्राप्त हुए ललित ताम्बूल-खण्ड का बारम्बार स्वाद लेते-लेते जिनका शरीर पुलकित हो रहा है एवं जिन्होंने देदीप्मान् नव-कमल-किञ्जल्क के रङ्ग का सुन्दर दुकूल अपने श्रीअङ्ग में धारण कर रखा है; वह मेरी प्रिय सखी (ललिता) क्या कभी मुझे सङ्गीत-नाट्य में अपनी निपुणता की शिक्षा देंगी ?

१८४

अब श्रीराधिका-वदन-मण्डल का स्मरण करते हैं—

लसद्दशन-मौक्तिक प्रवर-कान्ति-पूरस्फुरन्,
मनोज्ञ नव पल्लवाधर-मणिच्छटा-सुन्दरम्।
चरन्मकर-कुण्डलं चकित चारु नेत्राञ्चलं
स्मरामि तव राधिके वदनमण्डलं निर्मलम्॥

हे श्रीराधिके ! मैं आपके निर्मल वदन-मण्डल का स्मरण करती हूँ। अहा ! जिसमें शोभायमान् दन्तावली मानों मोतियों की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उज्ज्वल कान्ति से पूर्ण है एवं अधर-पल्लव बड़े ही मनोज्ञ, देदीप्यमान् और विद्रुम-मणि की छटा से भी अधिक सुन्दर हैं। कपोलों पर चञ्चल मकराकार कुण्डल और मुख-मण्डल पर चकित चारु नेत्राञ्चलों की अपूर्व शोभा है !

१८५

पुनः श्रीराधा-वदन-मण्डल की ही भावना करते हैं—

चलत्कुटिल कुन्तलं तिलक-शोभि-भालस्थलं
तिल-प्रसव नासिका-पुट-विराजि मुक्ता-फलम् ।
कलङ्करहितामृतच्छवि समुज्ज्वलं राधिके,
तवाति रति-पेशलं वदन-मण्डलं भावये ॥

हे श्रीराधिके ! आपके जिस वदन-मण्डल में कुटिल अलकावली चञ्चल हो रही है, भाल-स्थल तिलक से शोभित है, नासा-पुट में तिल-पुष्प की भाँति मुक्ताफल जगमगा रहा है और जो कलङ्क-रहित सजीव छवि से समुज्ज्वल है, आपके उस अति रस-पेशल (रसाधिक्य सुन्दर) वदन-मण्डल की मैं भावना करती हूँ।

१८६

अब युगल-ज्योति की अनिर्वचनीयता का वर्णन करते हैं—

पूर्ण प्रेमामृत-रस समुल्लास सौभाग्यसारं
कुञ्जे-कुञ्जे नव रति-कला-कौतुकेनात्तकेलि ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्फुलेन्दीवर कनकयोः कान्ति-चोरं किशोरं
ज्योतिर्द्वन्द्वं किमपि परमानन्द कन्दं चकास्ति ॥

जो पूर्ण प्रेमामृत-रस के समुल्लास-सौन्दर्य के भी सार रूप हैं। जिन्होंने नवीन रति-कला के कौतुक से कुञ्जों-कुञ्जों में केलि करना अङ्गीकार किया है एवं जो विकसित-नील-कमल और कनक-कमल की कान्ति को भी हरण करने वाले हैं, वही किशोराकृति ज्योति-युगल किसी अनिवर्चनीय परमानन्द-कन्द स्वरूप में शोभा को प्राप्त हो रहे हैं।

१८७

श्रीस्वामिनीजी के नयन-कटाक्ष का प्रभाव वर्णन करते हुए उनकी कृपा की याचना करते हैं—

यर्योन्मीलत्केली-विलसित कटाक्षैक कलया
कृतो बन्दी वृन्दाविपिन कलभेन्द्रो मदकलः।
जडीभूतः क्रीडामृग-इव यदाज्ञा-लव कृते
कृती नः सा राधा शिथिलयतु साधारण-गतिम् ॥

जिन्होंने किञ्चित् विकसित केलि-विलास-जन्य कटाक्षों की एक ही कला से श्रीवृन्दावन के मदोन्मत्त गजराज-किशोर (श्रीलालजी) को बन्दी बना लिया है। और ऐसा बन्दी कि पूर्ण चतुर होते हुए भी वे उनकी लेश-मात्र आज्ञा के वशवर्त्ती बने क्रीड़ा-मृग की तरह जड़ हो रहे हैं; वही श्रीराधा मेरी साधारण गति (संसार-गति) को शिथिल करें।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१८८

अब अत्यन्त दीनता एवं कातरतापूर्वक श्रीप्रियाजी की दया-दृष्टि की याचना करते हैं—

श्रीगोपेन्द्र-कुमार-मोहन-महाविद्ये स्फुरन्माधुरी,
सारस्फार रसाम्बुराशि सहज प्रस्यन्दि-नेत्राञ्चले।
कारुण्यार्द्र कटाक्ष-भङ्गि मधुरस्मेराननांभोरुहे
हा हा स्वामिनि राधिके मयिकृपा-दृष्टिं मनाङ् निक्षिप॥

हे गोपेन्द्र-कुमार-मोहन कारिणि महाविद्ये! देदीप्यमान् माधुरी-सार-विस्तारक रस-समुद्र का सहज प्रवाह करने वाले नेत्र-प्रान्त वाली प्रिये! हे करुणा-स्निग्ध कटाक्ष-भङ्गिमा-सहिते! हे मधुर मन्द हास्यमय वदन-कमले! हे स्वामिनि! हे श्रीराधिके! हा! हा!! आप मुझ पर अपनी थोड़ी-सी ही तो कृपा-दृष्टि का निक्षेप कीजिये?

१८९

श्रीस्वामिनीजी की शोभा-पूर्ण एक झाँकी दिखाते हैं—

ओष्ठ प्रान्तोच्छलित दयितोद्गीर्ण ताम्बूल रागा—
रागानुच्चैर्निज-रचितया-चित्र भङ्ग्योन्नयन्ती।
तिर्यग्ग्रीवा रुचिर रुचिरोदञ्चदाकुञ्चितभ्रूः
प्रेयः पार्श्वे विपुल पुलकैर्मण्डिता भाति राधा॥

जिन्होंने प्रियतम को अपना चर्वित ताम्बूल देने के लिये उसे अधरों तक लाया है, जिससे ओष्ठ-प्रान्त में लालिमा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उच्छलित हो रही है। जो विचित्र भङ्गिमाओं के सहित स्वरचित विभिन्न रागिनियों का उच्च स्वर में गान कर रही हैं, इस कारण ग्रीवा कुछ तिरछी सी हो रही है और युगल रुचिर भ्रू-लताएँ कुछ-कुछ कुञ्चित होकर ऊपर की ओर चढ़ सी रही हैं। गान-सिद्धि के आनन्द से विपुल-पुलकावलि-मण्डित वे श्रीराधा अपने प्रियतम के पार्श्व में शोभा पा रही हैं।

१६०

अब एक हास्य-रस-पूर्ण विचित्र चमत्कारमयी केलि का वर्णन करते हैं—

किं रे धूर्त्त-प्रवर निकटं यासि नः प्राण सख्या
नूनंबाला कुच-तट-कर स्पर्श मात्राद्विमुह्येत् ।
इत्थं राधे पथि-पथि रसान्नागरं तेनुलग्नं
क्षिप्त्वा भङ्ग्या हृदयमुभयोः कर्हि सम्मोहयिष्ये॥

"क्यों रे धूर्त्त श्रेष्ठ ! हमारी प्राण-प्यारी सखी के निकट क्यों चला आता है ? दूर ही रह। तू नहीं जानता कि सुकुमारी बाला की कुच-तटी का स्पर्श करने मात्र से ही तू विमुग्ध हो जायगा !"

हे श्रीराधे ! इस प्रकार वाणी-चातुर्य्य के द्वारा मैं कब तुम्हारे अनुगमन-शील रसिक-नागर को दूर हटाकर, तुम दोनों के हृदय को विमुग्ध करूँगी ?

१६१

अब वेद-विधि-निषेधातीत परम-सिद्ध अवस्था की भावना करते हुए मनोरथ करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कदा वा राधायाः पदकमलमायोज्य हृदये—
दयेशं निःशेषं नियतमिह जह्यामुपविधिम् ।
कदा वा गोविन्दः सकल सुखदः प्रेम करुणा—
दनन्ये धन्ये वै स्वयमुपनयेत स्मरकलाम् ॥

मैं कब श्रीराधा के करुणा-पूर्ण पद-कमलों को हृदय में धारण करके इस संसार में नित्य-आगत वेद-विधियों का अशेष रूप से त्याग कर दूँगी और कब सर्व-सुखद गोविन्द मुझे सेवाधिकार प्रदान करने के निमित्त मुझ अनन्य-धन्य को स्मर-कला (निकुञ्जान्तर सेवा-योग्य काम-कला) का शिक्षण करेंगे ?

१६२

पहिले की गई भावना के अनुसार सिद्धावस्था का अनुभव करके अब अन्तरङ्ग-सेवा की भावना करते हैं—

कदा वा प्रोद्दाम स्मर-समर-संरम्भ-रभस,
प्ररूढ़ स्वेदाम्भः प्लुत ललित चित्राखिलतनू ।
गतौ कुञ्ज-द्वारे सुख मरुति-संवीज्य परया,
मुदाहं श्रीराधा-रसिक-तिलकौ स्यां सुकृतिनी ॥

प्रकर्ष काम-सङ्ग्राम के आवेश-युक्त वेग के कारण उत्पन्न हुए प्रस्वेद-जल से जिनके युगल-वपु आर्द्र, (गीले) शिथिल और चित्रित हो रहे हैं, वे श्रीराधा और रसिक-शेखर दोनों कुञ्जद्वार में समासीन हैं मैं कब परम-हर्ष के साथ उन दोनों को बयार करके पुण्य-शालिनि बनूँगी ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१६३

अब पाद-सम्बाहन-सेवा-प्राप्ति की अभिलाषा करते हैं—

मिथः प्रेमावेशाद्घन पुलक दोर्वल्लि रचित,
प्रगाढ़ा श्लेषेणोत्सव रसभरोन्मीलित दृशौ।
निकुञ्जक्लृप्ते वै नव कुसुस-तल्पेधि शयितौ,
कदा पत्सम्वाहादिभिरहमधीशौ नु सुखये॥

निकुञ्ज-भवनान्तर-स्थित नव-नव-पुष्प-रचित शय्या पर शयन करते हुए, एवं परस्पर प्रेमावेश-जनित घन पुलकाङ्कित भुजलताओं से आवेष्टित, गाढ़ आलिङ्गन के उत्सव-रस से परिपूर्ण अर्ध निमीलित दृष्टि-युक्त युगल अधीश्वरों को मैं कब पादसम्बाहनादि सेवाओं के द्वारा सुख पहुँचाऊँगी ?

१६४

अब श्रीस्वामिनीजी की रूप-छटा का वर्णन करते हुए उन्हें अपने हृदय में स्फुरित देखना चाहते हैं—

मदारुण विलोचनं कनक-दर्पकामोचनं,
महा प्रणयमाधुरी रस-विलास नित्योत्सुकम्।
लसन्नववयः श्रिया ललित भङ्गि-लीलामयं,
हृदा तदहमुद्वहे किमपि हेमगौरं महः॥

जिनके युगल विलोचन मद से अरुण वर्ण के हो रहे हैं। जो (अपनी गौरता से) कुन्दन के भी मद का मोचन करती हैं। जो महा प्रणय-माधुरी के रस-विलास में नित्य उत्साह-पूर्ण हैं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एवं जिनकी उल्लसित नवीन वयःश्री अत्यन्त ललित भङ्गि-लीलामयी है। मैं उन अनिर्वचनीय हेम-गौर ज्योति को अपने हृदय में धारण करती हूँ।

१६५

अब सङ्गम-सुख की सूचना करते हुए युगल-स्वरूप का वर्णन करते हैं—

मदाघूर्णन्नेत्रं नव रति-रसावेश-विवशो—
ल्लसद्गात्रं प्राण-प्रणय-परिपाट्यां परतरम्।
मिथो गाढाश्लेषाद्वलयमिव जातं मरकत,
द्रुत स्वर्णच्छायं स्फुरतु मिथुनं तन्मम हृदि॥

मद-घूर्णित विलोचन, नवीन रति रसावेश विवशता से उल्लसित वपु और प्राण-सहित प्रणय-परिपाटी में परतर, (परम श्रेष्ठ) पारस्परिक आलिङ्गन से वलयाकार-भूत, इन्द्र-नील मणि (श्याम) और द्रवीभूत स्वर्णच्छविमान् (गौर) श्यामल–गौर युगल मेरे हृदय में स्फुरित हों।

१६६

ऊपर जिन युगल-किशोर की केलि वर्णित है, वे कहाँ विराजते हैं? मानों इसी बात का उत्तर देते हुए श्रीहित महा-प्रभु कहते हैं—

परस्परं प्रेम-रसे-निमग्न—
मशेष सम्मोहन रूप-केलि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वृन्दावनान्तर्नवकुञ्जगेहे,
तन्नीलपीतं मिथुनं चकास्ति ॥

जो परस्पर प्रेम रस में निमग्न हैं और जिनकी केलि सम्पूर्ण चराचर के लिये सम्मोहन रूप है। वे कोई नील-पीत युगल श्रीवृन्दावनान्तर्गत नव-कुञ्ज-भवन में शोभा पा रहे हैं।

१९७

अब इन नील-पीत युगल की प्राप्ति-विषयक प्रार्थना करते हैं—

आशास्य-दास्यं-वृषभानुजाया—
स्तीरे समध्यास्य च भानुजायाः।
कदा नु वृन्दावन-कुञ्ज-वीथी—
ष्वहं नु राधे ह्यतिथिर्भवेयम् ॥

भानु-नन्दिनी श्रीयमुना के तट में अविचल भाव से स्थित रहकर एवं वृषभानु-नन्दिनी के दास्य-भाव को मन में धारण करके मैं श्रीवृन्दावन की कुञ्ज-वीथियों में क्या कभी अतिथि (अभ्यागत) होऊँगी ?

१९८

कालिन्दी केतट में सम्यक् प्रकार से स्थित होने का क्या प्रयोजन है ? उस तट में क्या है ? इस मर्म को प्रकट करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कालिन्दी-तट-कुञ्जे,
पुञ्जीभूतं रसामृतं किमपि ।
अद्भुत केलि-निधानं
निरवधि राधाभिधानमुल्लसति ॥

कालिन्दी-तट के कुञ्ज में कोई अनिर्वचनीय पुञ्जीभूत रसामृत एवं निरवधि अद्भुत केलि-निधान श्रीराधा नामक स्वरूप उल्लसित हो रहा है ।

१९९

अब राधा-नामक श्रीवृन्दावनाधीश्वरी का स्वरूप प्रकाशित करते हैं कि वे कैसी हैं ?—

प्रीतिरिव मूर्ति-मती—
रस-सिन्धोः सार सम्पदिव विमला ।
वैदग्धीनां हृदयं—
काचन वृन्दावनाधिकारिणी जयति ॥

मूर्तिमती प्रीति-स्वरूपा, रस-सिन्धु की विमल सार सम्पत्ति, एवं चतुर-शिरोमणि सखियों की भी हृदय-रूपा कोई अनिर्वचनीय श्रीवृन्दावनाधिकारिणी (स्वामिनी) सर्वोत्कृष्टता को प्राप्त हैं ।

२००

प्रश्न हो सकता है कि आपने अभी तक कई बार विशुद्ध रूप से श्रीप्रियाजीका वर्णन किया है किन्तु श्रीलालजी का तो एक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बार भी नहीं किया; अतएव इस प्रश्न के उठने के पूर्व ही अब एक श्लोक में विशुद्ध रूप से श्रीकृष्ण-स्वरूप का वर्णन और नमन करते हैं—

रसघन मोहन मूर्त्ति,
विचित्रकेलि-महोत्सवोल्लसितम् ।
राधा-चरण विलोडित,
रुचिर शिखण्डं-हरि वन्दे ॥

जिनका रुचिर मयूर-पिच्छ श्रीराधा चरणों में यत्र-तत्र विलोडित होता रहता है तथा जो विचित्र केलि-महोत्सव से उल्लसित हैं, मैं उन रस-घन-मोहन-मूर्ति श्रीहरि (श्रीकृष्ण) की वन्दना करती हूँ ?

२०१

युगल-किशोर की रसमयी सेवा करते हुए मैं कब रस-समुद्र में निमग्न होऊँगी ? ऐसी भावना करते हैं—

कदा गायं गायं मधुर-मधुरीत्या मधुभिद—
श्चरित्राणि स्फारामृत-रस विचित्राणि बहुशः ।
मृजन्ती तत्केली-भवनमभिरामं मलयज—
च्छटाभिः सिञ्चन्ती रसह्रद निमग्नास्मि भविता ॥

मैं कब मधुसूदन के घनीभूत अमृत-रस-पूर्ण विचित्र

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एवं अनन्त चरित्रों का मधुर-मधुर रीति से गायन करती हुई और उनके अभिराम केलि-भवन का सम्मार्जन तथा मलयज मकरन्द से सिञ्चन करती हुई रस-समुद्र में निमग्न होऊँगी ?

२०२

अब श्रीराधा-दर्शन की विह्वलता प्रकट करते हैं—

उदञ्चद्रोमाञ्च-प्रचय-खचितां वेपथुमतीं,
दधानां श्रीराधामतिमधुर लीलामय तनुम् ।
कदा वा कस्तूर्या किमपि रचयन्त्येव कुचयो-
र्विचित्रां पत्रालीमहमहह वीक्षे सुकृतिनी ॥

अहो ! कस्तूरी द्वारा अपने युगल कुचों पर अनिर्वचनीय विचित्र पत्रावली की रचना कर पुण्यवती होकर, मैं कब उन पुलकित रोमावली से शोभित, कम्पायमान्, अति मधुर लीला-मय तनु-धारिणी श्रीराधा का दर्शन करूँगी ?

२०३

अब स्वामिनीजी के प्रेम-मय स्वरूप का वर्णन करते हैं एवं जय-जयकार करते हैं—

क्षणं सीत्कुर्वन्ती क्षणमथ महावेपथुमतीं,
क्षणं श्याम श्यामेत्यमुमभिलपन्ती पुलकिता ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महा प्रेमा कापि प्रमद मदनोद्दाम-रसदा,
सदानन्दा मूर्तिर्जयति वृषभानोः कुलमणिः ॥

कोई अनिर्वचनीय वृषभानु-कुल-मणि किशोरी ही सर्वोत्कृष्टता को प्राप्त हैं। जो सदा आनन्द की मूर्ति, महा प्रेम-स्वरूपा एवं प्रमद मदन के लिये भी श्रेष्टतम् रस की प्रदाता हैं। (अत्यन्त प्रेम- वैचित्य के कारण) जो किसी क्षण सीत्कार करने लगती हैं, तो दूसरे ही क्षण अत्यन्त कम्पित होने लगती हैं फिर किसा क्षण "हे श्याम! हे श्याम!! ऐसा प्रलाप करने लगती हैं, और पुलकित होने लगती हैं।

२०४

अब श्रीस्वामिनीजी के दास्य-भाव की श्रेष्टता का वर्णन करते हुए उसकी याचना करते हैं—

यस्याः प्रेमघनाकृतेः पद-नख-ज्योत्स्ना भरस्नापित-
स्वान्तानां समुदेति कापि सरसा भक्तिश्चमत्कारिणी।
सा मे गोकुल-भूप-नन्दनमनश्चोरी किशोरी कदा,
दास्यं दास्यति सर्व वेद-शिरसां यत्तद्रहस्यं परम् ॥

जिन प्रेम-घनाकृति किशोरी के पद-नख-ज्योत्स्ना-प्रवाह में स्नान करके (भक्त-) हृदयों में कोई अनिर्वचनीय सरस चमत्कारिणी भक्ति सम्यक् रूप से उदय हो जाती है। वे गोकुल-भूप-नन्दन (श्रीलालजी) के भी मन का हरण करने वाली किशोरी मुझे अपना सर्व वेद-शिरोमणि (उपनिषद् का भी परम रहस्य-रूप) दास्य कब प्रदान करेंगी?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२०५

'श्रीराधा-चरण-द्वयी ही मेरी गति है,' इस कथन के आधार पर यहाँ श्रीचरणों की महिमा सूचित करते हैं—

कामं तूलिकया करेण हरिणा यालक्तकैरङ्किता,
नानाकेलि-विदग्ध गोप-रमणी-वृन्दे तथा वन्दिता।
या सङ्गुप्ततया तथोपनिषदां हृद्येव विद्योतते,
सा राधा-चरण-द्वयी मम गतिर्लास्यैक-लीलामयी॥

श्रीहरि के करकमलों द्वारा तूलिका से जिसमें यथेच्छ चित्रों की रचना की गई है। जो अनेक-अनेक केलि-चतुर गोप-रमणी-वृन्दों से वन्दित है एवं जो वेद-शिरोभाग (उपनिषदों) के हृदय में संगुप्त भाव से विद्यमान् है, वही नृत्य-लीलामयी श्रीराधा-चरण-द्वयी मेरी गति है।

२०६

अब अपनी दशा का निवेदन करते हैं कि मैं आपके दास्योत्सव में बिक चुकी हूँ—

सान्द्र प्रेम- रसौघ-वर्षिणि नवोन्मीलन्महामाधुरी,
साम्राज्यैक-धुरीण केलि-विभवत्कारुण्य कल्लोलिनि।
श्रीवृन्दावनचन्द्र-चित्त-हरिणी--बन्धु स्फुरद्वागरे,
श्रीराधे नव-कुञ्ज-नागरि तव क्रीतास्मि दास्योत्सवैः॥

हे घनीभूत प्रेम रस-प्रवाह-वर्षिणि! हे नवीन विकसित महामाधुरी साम्राज्य की सर्व-श्रेष्ठ केलि-विभव-युक्त करुणा-कल्लोलिनि! (सरिते!) हे श्रीवृन्दावन-चन्द्र के चित्त रूप मृगी-बन्धु (हरिन) के लिये प्रकाशमान् बन्धन-रूपे!

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे नवकुञ्ज-नागरि ! हे श्रीराधे ! मैं आपके दास्योत्सव में बिक चुकी हूँ ।

२०७

अब श्रीस्वामिनीजी की प्रसन्नता के लिये अपनी चातुरी का प्रदर्शन करते हुए अपना दास्याधिकार प्रकट करते हैं—

स्वेदापूरः कुसुम चयनैर्दूरतः कण्टकाङ्को,
वक्षोजेऽस्यास्तिलक विलयो हंत घर्माम्भसैव ।
ओष्ठः सख्या हिम-पवनतः सव्रणो राधिके ते,
क्रूरास्वेवं स्वघटितमहो गोपये प्रेष्ठसङ्गम् ॥

अहो ! श्रीराधिके !! आपने स्वयमेव प्रियतय के सङ्गम-विहार की जो रचना की है; मैं उसे क्रूर (हास-परायण) सखियों से यह कहकर छिपाऊँगी, कि "दूर प्रदेश से पुष्प-चयन करने के कारण ही प्रिय-सखी के शरीर में स्वेद-प्रवाह है, आपके वक्षोजों को भी कण्टकों ने क्षत-विक्षत किया है और ओष्ठ पर जो व्रण हैं वह भी हिम-वायु के स्पर्श से ही उद्भूत हैं ।"

२०८

अब रति-विलास-युक्त श्रीस्वामिनी-दर्शन की प्रार्थना वितर्क रूप से करते हैं—

पातं-पातं पद कमलयोः कृष्णभृङ्गेण तस्या,
स्मेरास्येन्दोर्मुकुलित कुच द्वन्द्व हेमारविन्दम् ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पीत्वा वक्त्राम्बुजमतिरसान्नूनमंतः प्रवेष्टु—
मत्यावेशान्नखरशिखया पाट्यमानं किमीक्षे ॥

क्या मैं कभी ऐसा देखूँगी कि श्रीप्रिया-मुख-कमल का मधुपान करके अत्यन्त प्रेमावेश से भरे हुए श्रीकृष्ण-मधुकर निकुञ्ज-भवन के भीतर फिर प्रवेश पा लेने के लिये बार-बार श्रीराधा-चरण-कमलों में गिरकर प्रार्थना कर रहे होंगे ?

और [जब निकुञ्ज-प्रवेश हो जायगा, तब] उन मधुर हास्य-मयी चन्द्र-मुखी (श्रीराधा) के मुकुलित युगल-कुच रूप कनक-कमलों को अपनी नखर-शिखाओं से विदीर्ण करते होंगे ?

२०६

समस्त केलि-सामग्री के उपस्थित रहने पर भी यदि प्राणेश्वरि का दर्शनाभाव है, तो सब व्यर्थ हैं। इसी भाव को प्रकट करते हैं—

अहो तेमी कुञ्जास्तदनुपम रासस्थलमिदं,
गिरिद्रोणी सैव स्फुरति रति-रङ्गे-प्रणयिनी।
न वीक्षे श्रीराधां हर-हर कुतोपीति शतधा-
विदीर्येन्त प्राणेश्वरि मम कदा हन्त हृदयम् ॥

अहो ! बड़े आश्चर्य्य की बात है ! यह सब वही कुञ्जें ! वही अनुपम रासस्थल तथा रति-रङ्ग-प्रणयिनी गिरि (गोवर्द्धन) गुहाएँ हैं !! किन्तु हाय ! हाय !! बड़ा खेद है कि श्रीराधा कहीं नहीं दीखतीं ! हे प्राणेश्वरि ! ऐसा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होने पर मेरा हृदय कब शतधा (शत खण्ड) होकर विदीर्ण हो जायगा ?

२१०

अब प्रत्येक स्थल को देख-देख कर स्मृति का आनन्द प्राप्त करते हुए कह रहे हैं—

इहैवाभूत्कुञ्जे नव-रति-कला मोहन तनो-
रहोऽत्रैवानृत्यद्दयित सहिता सा रसनिधिः।
इति स्मारं-स्मारं तव चरित-पीयूष-लहरीं,
कदा स्यां श्रीराधे चकित इह वृन्दावन-भुवि ॥

अहो ! मोहन-तनु श्रीप्रियाजी की नव-रति-कला इसी कुञ्ज में अनुष्ठित हुई थी और उन रस-निधि ने अपने प्राण-प्यारे के साथ इसी स्थल पर नृत्य किया था।" हे श्रीराधे ! इस प्रकार आपकी चरितामृत-लहरी का स्मरण कर-करके मैं कब इस वृन्दावन में चकित हो रहूँगी ?

२११

अब श्रीस्वामिनीजी के ऐश्वर्य्य-स्वरूप का वर्णन करते हैं—

श्रीमद्बिम्बाधरे ते स्फुरति नव सुधा-माधुरी-सिन्धु कोटि-
र्नेत्रान्तस्ते विकीर्णाद्भुत कुसुम धनुश्चण्ड सत्काण्डकोटिः।
श्रीवक्षोजे तवाति प्रमद रस-कला-सार-सर्वस्व कोटिः
श्रीराधे त्वत्पदाब्जात्स्रवति निरवधि प्रेम-पीयूष कोटिः ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे श्रीराधे ! आपके श्रीसम्पन्न अधर-बिम्बों से नवीन अमृत-माधुरी के कोटि-कोटि सिन्धु स्फुरित होते रहते हैं। आपके नेत्र-कोणों से पुष्प-धन्वा कामदेव के कोटि-कोटि प्रचण्ड शर विखरते रहते हैं। आपके उरोजों में अति प्रमत्त रति-कला का सार-सर्वस्व कोटि-कोटि प्रकार से शोभा पाता है और आपके श्रीचरण-कमलों से प्रेम-पीयूष-कोटि निरवधि रूप से प्रवाहित होता रहता है।

२१२

अब 'तत्सुखी भाव' का प्रकाश करते हैं—

सान्द्रानन्दोन्मदरसघन प्रेम-पीयूष मूर्तेः,
श्रीराधाया अथ मधुपतेः सुप्तयोः कुञ्ज-तल्पे।
कुर्वाणाहं मृदु-मृदु पदाम्भोज-सम्वाहनानि,
शय्यान्ते किं किमपि पतिता प्राप्त तन्द्रा भवेयम्॥

निविड़ आनन्दोन्मद-रस के घनत्व से प्रकट प्रेमामृत-मूर्ति श्रीराधा और मधुपति श्रीलालजी के कुञ्ज-शय्या पर निद्रित हो जाने पर उनके अति कोमल पद-कमलों का सम्वाहन करते-करते मैं तन्द्रा प्राप्त होने पर शय्या के समीप ही क्या लुढ़क रहूँगी ?

२१३

पुनः किसी सुख-मयी अवस्था की याचना करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राधा पादारविन्दोच्छलित नव रस प्रेम-पीयूष पुञ्जे,
कालिन्दी-कूल-कुञ्जे हृदि कलित महोदार माधुर्य्य-भावः।
श्रीवृन्दारण्य-वीथी ललित रतिकला-नागरी तां गरीयो,
गम्भीरैकानुरागान्मनसि परिचरन् विस्मृतान्यः कदा स्याम्॥

कितना सुन्दर यमुना तट ! श्रीराधा-चरण-कमलाङ्कित एवं नव-रस-प्रेमामृत पुञ्ज !! और उस कूल पर विराजमाना मैं ? परम सुन्दर, अत्यन्त उदार एवं मधुर भावना से भावित मेरा हृदय। कौनसी मेरी भावना ? श्रीवृन्दावन-वीथी-ललित-कला-चतुरा मैं और अतुल तथा गम्भीर अनुराग की एकमात्र मूर्ति श्रीस्वामिनीजी की वह मानसी सेवा परिचर्य्या। तो क्या होगा इससे ? क्या होगा ! मैं कब इस भावना से पूर्ण होकर अन्य सब कुछ भूल जाऊँगी ?

२१४

अब विप्रयोग शृङ्गार का वर्णन करते हैं—

अदृष्ट्वा राधाङ्के निमिषमपि तं नागर-मणिं,
तया वा खेलन्तं ललित ललितानङ्ग कलया।
कदाहं दुःखाब्धौ सपदि पतिता मूर्च्छितवती,
न तामास्वस्यार्त्तां सुचिरमनुशोचे निज दशाम्॥

श्रीराधा के साथ अति ललित कन्दर्प-कला-केलि करते हुए नागरमणि श्रीकृष्ण को श्रीराधा के अङ्क में निमिष-मात्र के लिये भी न देखकर मूर्छित-वती मैं दुःख-सागर में एकदम पतित होकर उसी वियोगार्त्ता (श्रीप्रियाजी) को

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

को आश्वासन न दे सकने के कारण अपनी उस (विह्वल) दशा की कब चिर अनुशोचना करूँगी?

२१५

अब शृङ्गार-भावना-पूर्ण दूसरा मनोरथ करते हैं—

भूयोभूयः कमलनयने किं मुधावार्य्यतेऽसौ,
वाङ्मात्रेऽपि त्वदनुगमनं न त्यजत्येव धूर्त्तः।
किञ्चिद्राधे कुरु कुच-तटी-प्रान्तमस्य प्रदीयं—
श्चक्षुर्द्वारा तमनुपतितं चूर्णतामेतु चेतः॥

हे कमल नयने! आप बांर-बार केवल वाणी से ही इनका निवारण कर रही हैं और ये धूर्त्तराज आपका अनुगमन किसी प्रकार भी छोड़ते ही नहीं; अतएव आप कुछ ऐसा कीजिये, जिससे इनका मृदुल चित्त इनके ही चक्षु-मार्ग से आपके कुच-तटी-प्रान्त में अनुपतित होकर चूर्ण-चूर्ण हो जाय।

२१६

अब श्रीवृन्दावन के प्रति अपनी प्रगाढ़ अनन्यता प्रगट करते हैं—

किंवा नस्तैः सुशास्त्रैः किमथ तदुदितैर्वर्त्मभिः सद्गृहीतै-
र्यत्रास्ति प्रेम-मूर्त्तेर्नहि महिम-सुधा नापि भावस्तदीयः।
किं वा वैकुण्ठ लक्ष्म्याप्यहह परमया यत्र मे नास्ति राधा,
किन्त्वाशाप्यस्तु वृन्दावन भुवि मधुरा कोटि जन्मान्तरेऽपि॥

जिनमें प्रेम-मूर्ति श्रीराधा की महिमा-सुधा किंवा उनके भाव कां वर्णन नहीं है उन सुशास्त्र समूहों से अथवा उन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शास्त्र-विहित, साधुजन-गृहीत मार्ग-समूहों से भी हमको क्या प्रयोजन है? अहा! जहाँ हमारी श्रीराधा नहीं है उस वैकुण्ठ-शोभा से हो हमको क्या? किन्तु कोटि जन्मान्तरों में भी श्रीवृन्दावन-भूमि के प्रति हमारी मधुर आशा बनी रहे, यही वाञ्छा है।

२१७

अहो! जिनके सामने वैकुण्ठ-लक्ष्मी भी तिरस्कृत है वे श्रीराधा कैसी हैं? उनका वर्णन करते हुए उनसे अपनी रक्षा की याचना करते हैं—

श्याम-श्यामेत्यनुपम रसापूर्ण वर्णैर्जपन्ती,
स्थित्वा-स्थित्वा मधुर-मधुरोत्तारमुच्चारयन्ती।
मुक्तास्थूलान्नयन गलितानश्रु-विन्दून्वहन्ती,
हृष्यद्रोमा प्रति-पदि चमत्कुर्वती पातु राधा॥

श्रीकृष्ण-प्रेम से विह्वल होकर जो "श्याम श्याम!" इन अनुपम वर्णों का जाप करती हैं। कभी अपने बड़े-बड़े नयनों से स्थूल मुक्ता-माला के समान अश्रु-विन्दुओं का का वर्षण (पतन) करती हैं तथा कभी प्रियतम-आगमन के सम्भ्रम से पद-पद पर चमत्कृत हो उठती हैं, वे हर्ष-पूर्ण पुलकित-रोम्नि श्रीराधा हमारी रक्षा करें।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२१८

अब प्रियतम की प्रेमोद्रेक-मयी दशा का वर्णन करते हैं—

तादृङ्मूर्तिर्व्रजपति-सुतः पादयोर्मे पतित्वा
दन्ताग्रे णाथ धृत्वा तृणकममलान्काकुवादान्ब्रवीति।
नित्यं चानुव्रजाति कुरुते सङ्गमायोद्यमं चे—
त्युद्वेगं मे प्रणयिनि किमावेदयेयं नु राधे॥

हे प्रणयिनि! हे श्रीराधे! मोहन-मूर्ति श्रीव्रजपति-कुमार (लालजी) मेरे चरणों में गिरकर एवं दन्ताग्र-भाग में तृण दबा कर निष्कपट चाटुकारी की बचनावली कहते हैं और निरन्तर ही मेरा अनुगमन भी करते हैं। उद्देश्य यह है कि मैं उनका आपके साथ सङ्गम करा दूँ किन्तु मैं (श्रीलालजी के इस प्रकार मेरे साथ व्यवहार-जन्य) अपने उद्वेग का आपसे क्या निवेदन करूँ?

२१९

अब श्रीवृन्दावन-भूमि में युगल-सरकार के वन-बिहार का वर्णन करते हैं—

चलल्लीलागत्या क्वचिदनुचलद्धंस मिथुनं
क्वचित्केकिन्यग्रे कृत नटन चन्द्रक्यनुकृति।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लताश्लिष्टं शाखि प्रवरमनुकुर्वत् क्वचिदहो
विदग्ध-द्वन्द्वं तद्रमत इह वृन्दावन-भुवि ॥

अहो! वे चतुर युगल इस वृन्दावन-भूमि में कहीं लीला-पूर्ण गति द्वारा हंस-मिथुन का अनुसरण करके, कहीं मयूरी के आगे मयूर की नटन-भङ्गी की अनुकृति करके एवं कहीं लता-श्लिष्ट तरुवर का अनुकरण करके क्रीड़ा कर रहे हैं।

२२०

पुनः उपरोक्त भावानुसार ही—

[1]व्याकोशेन्दीवराष्टा पद-कमल रुचा हारि कान्त्या स्वया-
यत् कालिन्दीयं सुरभिमनिलं शीतलं सेवमानम् ।
सान्द्रानंदं नव-नव रसं प्रोल्लसत्केलि-वृन्दं,
ज्योतिर्द्वन्द्वं मधुर-मधुरं प्रेम-कन्दं चकास्ति ॥

जिन्होंने अपनी कान्ति से विकसित इन्दीवर (नील-कमल) एवं स्वर्ण-कमल की शोभा को भी हरण कर लिया है और जो कालिन्दी के सुरभित एवं शीतल वायु का सेवन करते रहते हैं वह सघन आनन्द-मय, मधुराति-मधुर एवं प्रेम की उत्पत्ति-स्थान युगल-ज्योति श्रीवृन्दावन में विराजमान हैं।

२२१

फिर भी उपरोक्त भावानुसार ही—

पाठान्तर—

१ व्याकोशेन्दीवरमथ रुचा हारि हेमारविन्दम् ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कदा मधुर सारिकाः स्वरस पद्यमध्यापय—
त्प्रदाय कर तालिकाः क्वचन् नर्त्तयत्केकिनम् ।
क्वचित् कनक वल्लरीवृत तमाल लीलाधनं,
विदग्ध मिथुनं तदद्भुतमुदेति वृन्दावने ॥

कभी मधुर-स्वरा सारिकाओं को निज रस सम्बन्धी पद्यों का अध्यापन कराते हुए, कभी ताली बजा-बजाकर मयूरों को नचाते हुए, तो कहीं कनक-लता से आवृत तमाल के लीला-धन से धनी चतुर युगल श्रीवृन्दावन में जगमगा रहे हैं।

२२२

इस प्रकार युगल-किशोर के स्वरूप, विहारादि का वर्णन करके अब अपनी कृतार्थता के लिए प्रार्थना करते है—

पत्रालीं ललितां कपोल फलके नेत्राम्बुजे कज्जलं,
रङ्गं बिम्बफलाधरे च कुचयोः काश्मीरजा लेपनम् ।
श्रीराधे नव-सङ्गमाय-तरले पादाङ्गुली-पंक्तिषु,
न्यस्यन्ती प्रणयादलक्तक-रसं पूर्णा कदा स्यामहम् ॥

हे श्रीराधे ! मैं आपके कपोल-स्थलों पर ललित पत्रावली, कमल-दल वत् नयनों में काजल, बिम्बा-फल सदृश अधरोष्ठों में ताम्बूल-रङ्ग एवं युगल-उरोजों में केशर का अनुलेपन करूँ तथा हे नव-सङ्गमार्थ तरले ! चञ्चल रूपे ! आपकी पादाङ्गुली-पंक्ति में प्रीति-पूर्वक सुरङ्ग लाक्षा-रस (जावक-रङ्ग) रञ्जित करके मैं कब पूर्ण मनोरथा बनूँगी ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२२३

अब श्रीस्वामिनीजी की प्रसन्नता के लिए एक परिहास-मय बात करते हैं—

श्रीगोवर्द्धन एक एव भवता पाणौ प्रयत्नाद्धृतो
राधावर्ष्मणि हेम-शैल युगले दृष्टेऽपि ते स्याद्भयम् ।
तद्गोपेन्द्रकुमार मा कुरु वृथा गर्वं परीहासतः
कह्येवं वृषभानुनन्दिनि तव प्रेयांसमाभाषये ॥

"हे गोपेन्द्र कुमार ! तुम व्यर्थ गर्व क्यों करते हो ! तुमने तो केवल एक ही गोवर्द्धन पर्वत को प्रयत्न-पूर्वक धारण किया था, किन्तु श्रीराधा तो अपने सुन्दर शरीर पर [एक नहीं दो-] दो हेम-शैल धारण कर रही हैं जिन्हें देखकर ही तुम्हें भय लगता है।"

हे वृषभानु-नन्दिनि ! मैं कब परिहास-पूर्वक इस प्रकार आपके प्रियतम से कहूँगी ?

२२४

अब रति-सङ्ग्राम की झाँकी का एक रूपक से वर्णन करते हैं—

अनङ्ग जय मङ्गल ध्वनित किङ्किणी डिण्डिम,
स्तनादि वर ताडनैर्नखर-दन्त-घातै युतः ।
अहो चतुर नागरी नव-किशोरयोर्मञ्जुले,
निकुञ्ज-निलयाजिरे रतिरणोत्सवो जृम्भते ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अहो! मञ्जुल निकुञ्ज-भवनाङ्गण में चतुर नागरी और नव किशोर का अनङ्ग-जय-मङ्गल-ध्वनित किङ्कणी का शब्द, स्तनादि का वर ताडन और नखर-दन्ताघात से युक्त रति-रणोत्सव प्रकाशित हो रहा है।

२२५

आचार्य द्वारा ही कोई व्यक्ति विद्याएं प्राप्त करता है, अतः यहाँ पर इसी न्याय से यौवन की प्रथमावस्था में प्रेममयी लज्जा, गम्भीरता आदि विद्याध्ययन की सूचना करते हैं—

यूनोर्वीक्ष्य दरत्रपा नट-कलामादीक्ष्ययन्ती दृशो—
वृण्वाना चकितेन सञ्चित महा रत्नस्तनं चाप्युरः।
सा काचिद्वृषभानुवेश्मनि सखी मालासु बालावली,
मौलिः खेलति विश्व-मोहन महा सारूप्यमाचिन्वती॥

किन्हीं दो युवक-युवती की किञ्चित् लज्जा युक्त नटकला को देखकर जिन्होंने अपने नवाङ्कुरित सञ्चित महा रत्न-स्तनों को चकित-भाव से ढाँप लिया। ढाँप क्या लिया? मानो, जिन्होंने यौवन की पाठशाला में नेत्रों द्वारा यह प्रथम दीक्षा ग्रहण की। इस प्रकार विश्व के मोहन करने वाले महा-रूप-लावण्य का सञ्चयन करती हुई कोई अनिर्वचनीय ललना-वृन्द-मौलि अपने सखी-वृन्द के साथ श्रीवृषभानु-भवन में खेल रही हैं।

२२६

पूर्व श्लोक में जो बाल-क्रीड़ा देखी है, उसी आंधार पर यौवनोन्मेष-कालीन छवि का वर्णन करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ज्योतिः पुञ्जद्वयमिदमहो मण्डलाकारमस्या,
वक्षस्युन्मादयति हृदयं किं फलत्यन्यदग्रे ।
भ्रू कोदण्डं नकृतघटनं सत्कटाक्षौघ बाणैः,
प्राणान्हन्यात्किमु परमतो भावि भूयो न जाने ॥

अहो ! बड़े आश्चर्य्य की बात है ! इस (अज्ञात-यौवना बाला) के वक्ष पर शोभित मण्डलाकार ये दो ज्योति-पुञ्ज [जब अभी ही] हृदय को उन्मत्त बना रहे हैं, फिर आगे चलकर उन्माद से भी अधिक क्या फल देंगे, यह देखना है और ये सत्कटाक्ष-प्रवाह-रूप बाण-समूह भ्रू-कोदण्ड का संयोग हुए बिना ही प्राणों का हनन करते हैं तो संयोग होने पर क्या होगा, यह नहीं कहा जा सकता ?

२२७

सखी-भावाविष्ट श्रीमहाप्रभुपाद श्रीलालजी की प्रेम-विह्वल अवस्था को देखकर उनके सखाओं से उस दशा का वर्णन करते हैं—

भोः श्रीदामन्सुबल वृषभस्तोक कृष्णार्जुनाद्याः,
किंवो दृष्टं मम नु चकिता दृग्गता नैव कुञ्जे ।
काचिद्देवी सकल भुवनाप्लाविलावण्यपूरा—
दूरादेवाखिलमहरत प्रेयसो वस्तु सख्युः ॥

[श्यामसुन्दर ने कहा]—"हे श्रीदाम, सुबल, वृषभ, स्तोक-कृष्ण, अर्जुन आदि सखाओ ! तुमने क्या देखा ? मेरी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चकिता दृष्टि ने कुञ्ज में प्रवेश न करने पर भी जो देखा है, उसे सुनो—अपने सौन्दर्य्य-प्रवाह से निखिल-भुवन को डुबा देने वाली एक अवर्णनीय देवी ने दूर से ही अपने प्रिय सखा मुझ श्रीकृष्ण की अखिल वस्तुओं का अपहरण कर लिया है।"

२२८

श्रीप्रियाजी की दिव्य झाँकी करके श्रीलालजी देह-सुधि भूलकर मूर्च्छित हो गये। उनकी दशा देखकर सखा-गण कहते हैं—

गता दूरे गावो दिनमपि तुरीयांशमभज—
द्वयं दातुं श्रांतास्तव च जननी वर्त्मनयना।
अकस्मात्तूष्णीके सजल नयने दीन वदने,
लुठत्यस्यां भूमौ त्वयि नहि वयं प्राणिणिषवः॥

[सखाओं ने कहा—हे श्याम सुन्दर!] हमारी गायें दूर निकल गयी हैं, दिन भी समाप्त हो आया है, हम लोग भी थकित से हो चुके हैं। उधर तुम्हारी जननी मार्ग पर दृष्टि लगाये बैठी हैं इधर अकस्मात् तुम्हारे पृथ्वी पर मूर्च्छित हो गिरने, चुप हो जाने एवं सजल नयन, दीन वदन, हो जाने के कारण हम लोग भी निश्चय है कि अब प्राण नहीं धारण करना चाहते।

२२९

अब विशुद्ध रूपि से श्रीस्वामिनीजी का सौन्दर्य वर्णन करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नासाग्रे नव मौक्तिकं सुरुचिरं स्वर्णोज्वलं बिभ्रती,
नानाभङ्गिरनङ्गरङ्ग विलसल्लीला तरङ्गावलिः ।
राधे त्वं प्रविलोभय व्रज-मणिं रत्नच्छटा-मञ्जरी,
चित्रोदश्चित् कञ्चुकस्थि गतयोर्वक्षोजयोः शोभया ॥

हे राधे! आपने अपनी नासिका के अग्रभाग में स्वर्णोज्वल रुचिर नव-मौक्तिक धारण कर रखा है और आप [स्वयं] नाना-भङ्गि-विशिष्ट अनङ्ग-रङ्ग-विलास-युक्त लीला-तरङ्गों की अवलि हैं। आपके युगल वक्षोज रत्नच्छटा-युक्त चित्र-विचित्र कञ्चुकि से रुद्ध हैं—ढँके हैं। अब आप इनकी अनुपम शोभा से व्रज-मणि श्रीलालजी को सम्यक् प्रकार से प्रलुब्ध करें।

२३०

युगल की अपह्नुति [मानसी] क्रीड़ा का वर्णन करते हुए अपनी प्रसन्नता की सूचना करते हैं—

अप्रेक्षे कृत निश्चयापि सुचिरं वीक्षेत दृक्कोणतो,
मौने दार्ढ्यमुपाश्रितापि निगदेत्तामेव याहीत्यहो ।
अस्पर्शे सुधृताशयापि करयोर्धृत्वा वहिर्यापये—
द्राधाया इति मानदस्थितिमहं प्रेक्षे हसन्ती कदा ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यद्यपि [श्रीप्रियाजी ने प्रियतम की ओर] न देखने का निश्चय कर लिया है, फिर भी नेत्र-कोणों से [उनकी ओर] देर तक देखती ही रहती हैं। अहो! [आश्चर्य्य है] मौन का दृढ़ता-पूर्वक आश्रय लेकर भी "वहीं चले जाओ" इस प्रकार कह ही देती हैं एवं स्पर्श न करने का निश्चय करके भी उन्हें दोनों हाथ पकड़कर बाहर निकालती हैं। मैं हँसते-हँसते श्रीराधा के मान की इस दुःस्थिति को कब देखूँगी ?

२३१

प्रियतम-मिलन की भावना को दृढ़ करते हुए कहते हैं—

रसागाधे राधा हृदि-सरसि हंसः करतले,
लसद्वंशस्रोतस्यमृत-गुण-सङ्गः प्रति-पदम् ।
चलत्पिच्छोत्तंसः सुरचितवतंसः प्रमदया,
स्फुरद्गुञ्जा-गुच्छः सहि रसिक मौलिर्मिलतु माम् ॥

अहा! जो श्रीराधा हृदय-रूप अगाध सरोवर के हंस हैं, जिनके करतल में मुरली शोभित है, जिस मुरली के छिद्रों से सदा अमृत-गुण (आनन्द) पद-पद पर झरता ही रहता है। जिनके सिर पर चञ्चल मयूर-चन्द्रिका तथा कानों में प्रमदाओं द्वारा सुरचित सुन्दर कर्ण-भूषण जगमगा रहे हैं एवं जिनके गले में प्रकाशमान् गुञ्जा-गुच्छ (माला) शोभित है वे रसिक-मौलि मुझे निश्चय ही मिलें।

२३२

वे रसिक मौलि कहाँ पर मिलेंगे ? इसके उत्तर में कहते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अकस्मात्कस्याश्चिन्नव वसनमाकर्षति परां,
मुरल्या धम्मिल्ले स्पृशति कुरुतेन्या कर धृतिम् ।
पतन्नित्यं राधा-पद-कमल-मूले व्रज-पुरे,
तदित्थं वीथीषु भ्रमति स महा लम्पट-मणिः ॥

अहो ! वे सहसा किसी (गोपी) के नव-वसन को खींचने लगते हैं, तो दूसरी के केश-पाश को मुरली से स्पर्श करते हैं और किसी के हाथ ही पकड़ लेते हैं परन्तु वही श्रीराधा-पद-कमल-मूल में सदैव लोटते ही रहते हैं। इस प्रकार व्रज-पुर की गलियों में वे महा लम्पट-मणि (श्रीकृष्ण) भ्रमण करते रहते हैं।

२३३

पुनः उपरोक्त भावानुसार ही—

एकस्या रतिचौर एव चकितं चान्यास्तनान्ते करं,
कृत्वा कर्षति वेणुनान्य सदृशो धम्मिल्ल-मल्ली-स्रजम् ।
धत्तेन्या भुज-वल्लिमुत्पुलकितां सङ्केतयत्यन्यया,
राधायाः पदयोर्लुठत्यलममुं जाने महा लम्पटम् ॥

सखी ने कहा—"मैं इस महा लम्पट को खूब जानती हूँ। यह किसी एक सखी का तो रति-चोर है और किसी अन्य के स्तन पर चकित होकर कर-स्पर्श करता है। किसी अन्य सुनयनी की कबरी-स्थित मल्ली-माल को वेणु से खींचता है, किसी की पुलकित भुज-लता को पकड़ लेता—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धारण करता है, तो किसी अन्य के सहित कुञ्जान्तर-प्रवेश का सङ्केत करता है। किन्तु श्रीराधा के चरणों में सम्पूर्ण-रूप से लोटता ही रहता है, (इसकी यहाँ एक नहीं चलती"।)

२३४

इस प्रकार वाह्य-लाम्पट्य का वर्णन करके अब अन्तर्लाम्पट्य का स्वरूप वर्णन करते हैं—

प्रियांसे निक्षिप्तोत्पुलक भुज-दण्डः क्वचिदपि,
भ्रमन्वृन्दारण्ये मद-कल करीन्द्राद्भुत-गतिः।
निजां व्यंजन्नत्यद्भुत सुरत-शिक्षां क्वचिदहो,
रहः कुञ्जे गुञ्जा ध्वनित मधुपे क्रीडति हरिः॥

अहो! वे श्रीलालजी कभी तो अपनी प्रियतमा के स्कन्ध पर पुलकित भुजदण्ड स्थापित करके मदोन्मत्त करीन्द्र की भाँति अद्भुत गति से श्रीवृन्दावन में विचरण करते हैं और कभी मधुप-गुञ्जन-मुखरित एकान्त कुञ्ज में स्वकीय अत्यद्भुत सुरत-शिक्षा की अभिव्यञ्जना करते हुए क्रीड़ा करते हैं।

२३५

कोई कोई श्रीश्याम सुन्दर में ऐश्वर्य का आरोप करते हैं; उनके आरोप को स्वीकार न करके—तुच्छ करके अब नन्द-नन्दन श्रीकृष्ण की शुद्ध रसमयी अवस्था का प्रकाश करते हुए श्रीहिताचार्य्य महाप्रभु कहते हैं—

दूरे सृष्ट्यादि वार्त्ता न कलयति मनाङ् नारदादीन्स्वभक्ता-
ञ्छ्रीदामाद्यैःसुहृद्भिर्न मिलति हरति स्नेह वृद्धिं स्वपित्रोः।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किंतु प्रेमैक सीमां परम रस-सुधा-सिन्धु-सारैरगाधां,
श्रीराधामेव जानन्मधुपतिरनिशं कुञ्ज-वीथीमुपास्ते ॥

श्रीश्मासुन्दर ने सृष्टि आदि की चर्चा ही दूर करदी है। वे नारदादि निज भक्तों का बिलकुल विचार भी नहीं करते। श्रीदामा आदि मित्र वर्ग के साथ भी नहीं मिलते और पिता-माता की स्नेह-वृद्धि भी नहीं चाहते। किन्तु मधुपति (श्रीकृष्ण) मधुर-रस-सुधा-सिन्धु की सारभूता अगाध प्रेम की एकमात्र सीमा श्रीराधा को ही जानकर अहर्निश कुञ्ज-वीथी में ही स्थित रहते हैं।

२३६

पुनः उक्त बात को ही दूसरे रूप से कहते हैं—

सुस्वादु सुरस तुन्दिलमिन्दीवर वृन्द सुन्दरं किमपि।
अधिवृन्दाटवि नन्दति राधा-वक्षोज भूषणं ज्योतिः ॥

अहो! सुस्वादनीय सुरस से पुष्ट अनिर्वचनीय नील-कमल-समूह के समान सुन्दर एवं श्रीराधा के वक्षोज की भूषण रूप कोई ज्योति श्रीवृन्दावन में आनन्दित हो रही है।

२३७

अब श्रीप्रियाजी की महिमा का गान करते हैं—

कान्तिः कापि परोज्वला नव मिलञ्छ्रीचन्द्रिकोद्भासिनी,
रामाद्यद्भुत वर्ण काश्चित् रुचिर्नित्याधिकाङ्गच्छविः।
लज्जा-नम्रतनुः स्मयेन-मधुरा प्रीणाति केलिच्छटा,
सन्मुक्ता फल चारु हार सुरुचिः स्वात्मार्पणेनाच्युतम् ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो नवीन प्राप्त हुई शोभामयी चन्द्रिका का प्रकाश करने वाली हैं एवं अद्भुत वर्ण की सहचरियों में जटित मणि-सदृश हैं। जिनकी अङ्गच्छबि प्रतिक्षण अधिक-अधिक बढ़ती ही रहती है और जो उज्वल मुक्ताफल के सुन्दर हारों से दीप्तिमान् हैं। वे कोई लज्जा-नम्र-तनु एवं मन्द मुस्कान से मधुर केलिच्छटा-रूप परम उज्वल अनिर्वचनीय कान्ति [श्रीराधा] अपने सर्वस्व-समर्पण के द्वारा अच्युत [श्रीलालजी] को सन्तुष्ट कर रही हैं अथवा आप स्वयं सन्तुष्ट हो रही हैं।

२३८

पुनः उक्त भावानुसार ही—

यन्नारदाजेश शुकैरगम्यं वृन्दावने वञ्जुल मञ्जुकुञ्जे।
तत्कृष्ण-चेतो हरणैक विज्ञमत्रास्ति किञ्चित्परमं रहस्यम्॥

यहीं श्रीवृन्दावन में मनोहर वेतस्-कुञ्ज में नारद, अज, ईश और शुकदेव के द्वारा भी सर्वथा अगम्य, श्रीकृष्ण के चित्त का अपहरण करने में एकमात्र विज्ञ कोई परम रहस्य विद्यमान् है।

२३९

अब उस परम रहस्य की अगम्यता का बोध कराते हुए यह प्रकट करते हैं कि वह केवल दासी-भाव से ही सुलभ है—

लक्ष्म्यायश्च न गोचरी भवति यन्नापुः सखायः प्रभोः,
सम्भाव्योपि विरञ्चि नारद शिव स्वायंभुवाद्यैर्नयः।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यो वृन्दावननागरी पशुपति स्त्रीभाव लभ्यः कथं,
राधामाधवयोर्ममास्तु सरहो दास्याधिकारोत्सवः ॥

अहा ! जो लक्ष्मी के भी गोचर नहीं हैं जो प्रभु श्रीकृष्ण अपने सखाओं को भी प्राप्त नहीं है और जो ब्रह्मा, नारद, शिव, स्वयाम्भुव आदि के लिये भी गम्य नहीं हैं, किन्तु वही वृन्दावन-नागरी गोपाङ्गनाओं के भाव से किसी प्रकार लभ्य है। मुझे वही श्रीराधा-माधव का रहस्य दास्याधिकारोत्सव प्राप्त हो; (ऐसी वाञ्छा है।)

२४०

अब मन वचन कर्म—त्रिधा अनन्यता-पूर्वक सर्वात्म-समर्पण का भाव निवेदित करते हैं—

उच्छिष्टामृत भुक्तवैव चरितं शृण्वंस्तवैव स्मरन्,
पादाम्भोज रजस्तवैव विचरन्कुञ्जास्तवैवालयान् ।
गायन्दिव्य गुणांस्तवैव रसदे पश्यंस्तवैवा तिं,
श्रीराधे तनुवाङ्मनोभिरमलै सोहं तवैवाश्रितः ॥

हे श्रीराधे ! हे रसदे !! तुम्हारी ही उच्छिष्ट अमृत-भोजी मैं तुम्हारे ही चरित्रों का श्रवण करती हुई तुम्हारे ही कुञ्जालय में विचरण करती हुई तुम्हारे ही दिव्य गुण-गणों का गान करती हुई एवं तुम्हारी ही रसयर्यी आकृति (छवि) का दर्शन करती हुई, शुद्ध काय, मन और वचन-द्वारा केवल तुम्हारी ही आश्रिता हूँ।

२४१

सर्वात्म-समर्पण-पूर्वक मन, वचन, कर्म, शरीर आदि की अनन्यता बताकर अब श्रीस्वामिनीजी की सेवा का अन्वेषण करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रीडन्मीनद्वयाक्ष्याः स्फुरदधरमणी-विद्रुम श्रोणि भार,
द्वीपायामोन्तराल स्मर-कलभ-कटाटोप वक्षोरुहायाः ।
गम्भीरावर्त्तनाभेर्बहुलहरि-महा प्रेम-पीयूष सिन्धोः,
श्रीराधायाः पदाम्भोरुहपरिचरणे योग्यतामेव चिन्वे ॥

जिनके युगुल-नेत्र मानो क्रीड़ा करते हुए मीन हैं। देदीप्यमान् अधर ही विद्रुम मणि हैं। पृथुल नितम्ब-द्वय ही दो द्वीप-विस्तार हैं। जिनके अन्तराल में काम-करि-शावक के कुम्भ-द्वय के आडम्बर (घेरे) के सदृश स्तन-द्वय हैं। जिनकी नाभि मानो गम्भीर भँवर है और जो श्रीहरि के विपुल-प्रेमामृत की सिन्धु स्वरूपा हैं। मैं उन श्रीराधा के युगल चरणारविन्दों की परिचर्य्या की केवल योग्यता का ही अन्वेषण करती हूँ।

२४२

अब परिचर्य्या का स्वरूप दिखलाते हुए उसकी प्राप्ति की अभिलाषा करते हैं—

मालाग्रन्थन-शिक्षया मृदु-मृदु श्रीखण्ड-निर्घर्षणा—
देशेनाद्भुत मोदकादि विधिभिः कुञ्जान्त सम्मार्जनैः ।
वृन्दारण्य रहः स्थलीषु विवशा प्रेमार्त्ति भारोद्गगात्—
प्राणेशं परिचारिकैः खलु कदा दास्या मयाधीश्वरी ॥

श्रीवृन्दावन के निभृत-निकुञ्ज में विराजमान् और अपने प्रियतम के प्रति प्रेमार्त्तिभार के उदय से विवश अधीश्वरी श्री-राधा पुष्प-माला गूँथने की शिक्षा देकर, मृदु-मृदु चन्दन घिसने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का आदेश देकर, अद्भुत मोदकादि की रचना का विधान करके एवं कुञ्ज-प्रान्त-पर्य्यन्त-सम्मार्जन की आज्ञा देकर परिचर्य्या-सम्बन्धी विस्तार-कार्य में मुझे कब दासी स्वीकार करेंगी ?

२४३

अब श्रीस्वामिनीजी के रति-विहार की नित्यता का निदर्शन करते हैं—

प्रेमाम्भोधिरसोल्लसत्तरुणिमारम्भेण गम्भीर दृग्—
भेदाभङ्गि मृदुस्मितामृत नव ज्योत्स्नाचित श्रीमुखी ।
श्रीराधा सुखधामनि प्रविलसद्वृन्दाटवी-सीमनि,
प्रेयोङ्के रति-कौतुकानि कुरुते कन्दर्प-लीला-निधिः ।।

प्रेम-समुद्र-रस के उल्लास की तरुणिमा के प्रारम्भ के कारण जिनकी दृष्टि-भङ्गिमा गम्भीर बन रही है। भङ्गिमा-सहित मृदु मुस्कान-अमृत की नव ज्योत्स्ना से जिनका श्रीमुख शोभित हो रहा है वही कन्दर्प-लीला-निधि स्वरूपा श्रीराधा शोभायमान् वृन्दावन की सुख-धाम कुञ्ज में प्रियतम के अङ्क में रति-कौतुक कर रही हैं।

२४४

अब श्रीस्वामिनीजी का रहस्यमय स्वरूप प्रकट करते हैं—

शुद्ध प्रेम-विलास-वैभव-निधिः कैशोर शोभानिधि—
वैदग्धी मधुराङ्ग भङ्गिम-निधिर्लावण्य-सम्पन्निधिः ।
श्रीराधा जयतान्महारसनिधिः कन्दर्प-लीला-निधिः,
सौन्दर्य्यैक सुधा-निधिर्मधुपतेः सर्वस्वभूतो निधिः ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अप्राकृत प्रेम-विलास-वैभव की निधि, कैशोर-शोभा की निधि, विदग्धता-पूर्ण मधुर अङ्ग-भङ्गिमा की निधि, लावण्य-सम्पत्ति की निधि, महारस की निधि, काम-लीला की निधि, सौन्दर्य की एकमात्र सुधा-निधि एवं मधुपति श्रीलालजी की सर्वस्वभूत निधि श्रीराधा की जय हो।

२४५

अब एक अत्यन्त चमत्कारिक ढँग से प्रियतम-सम्मोहन चरित्र का वर्णन करते हैं—

नीलेन्दीवरवृन्दकान्ति लहरी-चौरं किशोर-द्वयं—
त्वय्ये तत्कुचयोश्चकास्ति किमिदं रूपेण सम्मोहनम्।
तन्मामात्म सखीं कुरु द्वितरुणीयं नौ दृढं श्लिष्यति,
स्वच्छायामभिवीक्ष्य मुह्यति हरौ राधा-स्मितं पातु नः॥

श्रीप्रियाजी के युगल कुचों में अपनी परछाईयाँ देखकर श्रीलालजी ने कहा—'प्रिये! तुम्हारे इन युगल कुचों में नील-कमल समूह की कान्ति-लहरी को भी चुराने वाले दो किशोर शोभा पा रहे हैं और उनके इस अनिर्वचनीय रूप से मेरा सम्मोहन हो रहा है। अतएव अब आप मुझको अपनी सखी बना लें; जिससे यह दोनों युवा हम दोनों तरुणियों का दृढ़ आलिङ्गन करेंगे।' इस प्रकार श्रीहरि के मोह को देखकर प्रकट हुआ श्रीराधा का मृदु हास्य हमारी रक्षा करे।

२४६

अब सम्भ्रम मान का वर्णन करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सङ्गत्यापि महोत्सवेन मधुराकारां हृदि प्रेयसः,
स्वच्छायामभिवीक्ष्य कौस्तुभ मणौ सम्भूत शोका-क्रुधा।
'उत्क्षिप्य प्रिय पाणिमेव विनयेत्युक्त्वा गताया वहिः,
सख्यै सास्र निवेदतानि किमहं श्रोष्यामि ते राधिके ॥

हे श्रीराधे ! सुख-सङ्ग महोत्सव में सम्मिलित होने पर भी प्रियतम के हृदय-स्थित कौस्तुभ-मणि में अपना मधुराकार प्रतिबिम्ब देखकर उत्पन्न क्रोध और शोक के कारण प्रियतम के हाथ को दूर हटाकर एवं "अविनय।" ऐसा कहकर बाहर गई हुई आपका अश्रु-पूर्ण निवेदन क्या मैं सुनूँगी ?

२४७

अब श्रीप्रिया-कवरी-दर्शन की अभिलाषा करते हैं—

महामणि वरस्रजं कुसुम-सञ्चयैरञ्चितं,
महा मरकत प्रभा ग्रथित मोहित श्यामलम् ।
महारस महीपतेरिव विचित्र सिद्धासनं,
कदा नु तव राधिके कबर-भारमालोकये ॥

हे श्रीराधिके ! जो महामणि की श्रेष्ठ माला एवं कुसुम-कलाप से शोभित है; जिसने महा मरकत मणि की प्रभा से ग्रथित होकर श्यामलता को भी मोहित कर रखा है और जो

पाठान्तर—

'उत्क्षिप्ता प्रिय पाणि तिष्ठसि नयेत्युक्त्वा गताया वहिः ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रसराज शृंगार का भी सिंहासन है, उस आपके कबरी-भार को मैं कब देखूँगी ?

२४८

पुनः वही—

मध्ये-मध्ये कुसुम-खचितं रत्न-दाम्ना निबद्धं,
मल्लीमाल्यैर्घन परिमलैर्भूषितं लम्बमानैः ।
पश्चाद्राजन्मणिवर कृतोदार माणिक्य-गुच्छं,
धम्मिल्लं ते हरि-कर-धृतं कर्हि पश्यामि राधे ॥

हे श्रीराधे ! बीच-बीच में पुष्पों द्वारा खचित; रत्नों की माला से बँधी हुई; सघन परिमल युक्त; मालती-माल-भूषित, लम्बमान्; पीछे के भाग में महामणि माणिक्य-गुच्छ से शोभित एवं श्रीहरि के हाथों द्वारा रचित आपकी वेणी को मैं कब देखूँगी ?

२४९

वेणी का वर्णन करके अब सीमन्त-स्थित कनक-पट्ट का वर्णन करते हैं—

विचित्राभिर्भङ्गी विततिभिरहो चेतसि परं,
चमत्कारं यच्छंल्ललित मणि-मुक्तादि ललितः ।
रसावेशाद्धित्तः स्मर मधुर वृत्ताखिलमहो—
द्भुतस्ते सीमन्ते नव-कनक-पट्टो विजयते ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अहो श्रीराधे ! आपका सीमन्त-स्थित अद्भुत कनक-पट्ट ही सर्वतः जय-जयकार को प्राप्त है। वह सुन्दर कनक-पट्ट; ललित मणि-मुक्ताओं से जटित, रसावेश सम्पत्ति एवं समस्त काम-चरित्रों से पूर्ण है। स्वामिनि ! वह कनक-पट्ट आपकी विविध भङ्गिमाओं के द्वारा मानो हमारे चित्त को परम विस्मय और आनन्द प्रदान करता है।

२५०

अब सीमन्त-स्थित सिन्दूर-रेखा का वर्णन करते हुए उसका जय जयकार करते हैं—

अहोद्वैधीकर्त्तुं कृतिभिरनुरागामृत-रस—
प्रवाहैः सुस्निग्धैः कुटिल रुचिर श्याम उचितः।
इतीयं सीमन्ते नव रुचिर सिन्दूर-रचिता,
सुरेखा नः प्रख्यापयितुमिव राधे विजयते ।।

हे श्रीराधे आपके सीमन्त में यह नव-रुचिर सिन्दूर-रचित सुरेखा हमको मानो यह विज्ञापित करने के लिये ही विजय को प्राप्त हो रही है कि अनुरागामृत-रस के सुस्निग्ध प्रवाह रूप क्रिया-विशेष के द्वारा कुटिल एवं रुचिर श्याम को द्विधा करना ही उचित है।

२५१

प्रियतम श्रीलालजी सर्व-भाव से श्रीप्रियाजी पर ही आसक्त हैं। मानों श्रीप्रियाजी ही उनका जीवन हैं। इस बात को अब उपमाओं द्वारा प्रकट करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चकोरस्ते वक्त्रामृत किरण विम्बे मधुकर—
स्तव श्रीपादाब्जे जघन पुलिने खञ्जनवरः ।
स्फुरन्मीनो जातस्त्वयि रस-सरस्यां मधुपतेः,
सुखाटव्यां राधे त्वयि च हरिणस्तस्य नयनम् ॥

हे श्रीराधे! उन मधुपति श्रीलालजी के नयन तुम्हारे मुख-चन्द्र के चकोर, (तुम्हारे) श्रीचरण-कमल के मधुकर जघन-पुलिन के श्रेष्ठ खञ्जन, अहो! आप रस सरसी (कुण्डिका) के चञ्चल मीन और [आपके] सुख अटवी के हरिण-स्वरूप हो रहे हैं।

२५२

अब विहार-व्याप्ति का वर्णन करते हैं—

स्पृष्ट्वा स्पृष्ट्वा मृदु करतलेनाङ्गमङ्गं सुशीतं,
सान्द्रानन्दामृत रस-ह्रदे मज्जतो माधवस्य ।
अङ्के पङ्केरुह सुनयना प्रेम-मूर्त्तिः स्फुरन्ती,
गाढ़ाश्लेषोन्नमित चिबुका चुम्बिता पातु राधा ॥

जिनके सुशीतल अङ्ग प्रत्यङ्गों को बारम्बार अपने करतलों से स्पर्श करके माधव घनीभूत अनान्दामृत-रस-समुद्र में मग्न हो जाते हैं। जो अपने प्रियतम के अङ्क (गोद) में विराजमान हैं। गाढ़ालिङ्गन के कारण जिनका सुन्दर चिबुक कुछ ऊपर उठ रहा है, प्रियतम ने जिसका चुम्बन भी कर लिया है, इस कारण जो और भी चञ्चल हो उठी हैं; वह कमल-दल सुलोचना प्रेम-मूर्त्ति श्रीराधा हमारी रक्षा करें।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२५३

अब श्रीप्रिया-प्रियतम की लीला-कथा आदि के श्रवण की वाञ्छा करते हैं—

सदा गायं-गायं मधुरतर राधा-प्रिय यशः,
सदा सान्द्रानन्दा नव रसद राधापति-कथाः।
सदा स्थायं-स्थायं नव निभृत राधा-रति-वने,
सदा ध्यायं-ध्यायं विवश हृदि राधा-पद-सुधाः॥

मैं श्रीराधा के नव-निभृत केलि-कुञ्ज-कानन में स्थित रहती हुई, सदा मधुरतर श्रीराधा के प्रिय यशों का तथा घनीभूत नव-नव आनन्द-रस-दायी श्रीराधापति की कथाओं का बारम्बार गान करती हुई एवं श्रीराधा-पद-सुधा का सर्वदा ध्यान करती हुई कब विवश हृदय होऊँगी ?

२५४

अब प्रेम-वैचित्य-दशा का वर्णन करते हैं—

श्याम-श्यामेत्यमृत-रस संस्रावि वर्णाञ्जपन्ती,
प्रेमौत्कण्ठ्यात्क्षणमपि स रोमाञ्चमुच्चैर्लपन्ती।
सर्वत्रोच्चाटनमिव गता दुःख-दुःखेन पारं,
काङ्क्षत्यह्नो दिनकरमलं क्रुध्यती पातु राधा॥

[प्रियतम-वियोग के भ्रम से कभी तो] अनुपम रस-स्रावी शब्द—"हे श्याम ! हे श्याम !!" ऐसे जपती हैं, तो दूसरे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ही क्षण प्रेमोत्कण्ठा से रोमाञ्चसहित हो जाती हैं और उच्च-स्वर से आलाप करने लगती हैं। चित्त सब ओर से उच्चाटन को प्राप्त है और बहुत दुःख के साथ दिन के व्यतीत हो जाने की वाञ्छा करती हैं। जो [कभी-कभी] सूर्य के प्रति अत्यधिक क्रोधित हो उठती हैं। ऐसी [विह्वला] श्रीराधा हमारी रक्षा करें।

२५५

पुनः उपरोक्त प्रकार से ही—

कदाचिद्गायन्ती प्रियरतिकला वैभवगतिं,
कदाचिद्ध्यायन्तीप्रिय सह भविष्यद्विलसितम्।
अलं मुञ्चामुञ्चे त्यति मधुर मुग्ध प्रलपितै—
र्नयन्ती श्रीराधा दिनमिह कदा नन्दयतु नः॥

कभी प्रियतम की रति-कला-वैभव-गति (लीला-विलास) का गान करती हैं, तो कभी प्रियतम के सङ्ग होने वाले भावी विलास का ध्यान करती हैं। फिर कभी "छोड़ो! मुझे छोड़ो? अरे बस; हो गया??" इस प्रकार मधुर एवं मुग्ध प्रलाप करती हुई दिन व्यतीत करती हैं। वे श्रीराधा हमें कब आनन्दित करेंगी?

२५६

अब श्रीस्वामिनीजी के कैङ्कर्य्य-प्राप्ति की प्रार्थना श्रीलालजी से करते हैं—

श्रीगोविन्द व्रज-वर-वधू-वृन्द-चूडामणिस्ते,
कोटि प्राणाभ्यधिक परम प्रेष्ठ पादाब्जलक्ष्मीः।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कैङ्कर्य्येणाद्भुत नव रसेनैव मां स्वीकरोतु,
भूयोभूयः प्रति मुहुरधिस्वामि सम्प्रार्थयेहम् ॥

हे सर्वश्रेष्ठ स्वामिन् ! हे श्रीगोविन्द ! मैं आपसे बारंबार यही प्रार्थना करती हूँ कि व्रज-वर-वधू-वृन्द-चूड़ामणि [श्रीप्रियाजी] जिनकी पादाब्ज-लक्ष्मी आपको अपने कोटि-कोटि प्राणों से भी अधिक प्रिय है। वे [श्रीराधा] मुझे अपने अद्भुत नित्य-नवीन कैङ्कर्य्य में स्वीकार करें।

२५७

अब श्रीलालजी के आराधन द्वारा श्रीस्वामिनीजी के दासत्व-प्राप्ति की याचना करते हैं—

अनेन प्रीता मे दिशतु निज कैङ्कर्य्य-पदवीं,
दवीयो दृष्टीनां पदमहह राधा सुखमयी ।
निधायैवं चित्ते कुवलय-रुचिं वर्ह-मुकुटं,
किशोरं ध्यायामि द्रुत कनकपीतच्छवि पटम् ॥

अहो ! यह जो मैं तरल-सुवर्ण-सदृश पीतच्छवि वसन एवं मयूर-पिच्छ-रचित मुकुट-धारी नीलेन्दीवर-कान्ति किशोर श्रीकृष्ण को अपने हृदय में धारण करके उनका ध्यान करती हूँ; इससे सुखमयी श्रीराधा प्रसन्न होकर दूर-दर्शी लोगों के पद-स्वरूप अपनी कैङ्कर्य्य-पदवी मुझे प्रदान करें।

२५८

अब समस्त साधनों के फल का उपदेश करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ध्यायंस्तांशिखिपिच्छमौलिमनिशं तन्नाम-सङ्कीर्त्तय—
न्नित्यं तच्चरणाम्बुजं परिचरंन्तन्मन्त्रवर्य्यं जपन् ।
श्रीराधा-पद-दास्यमेव परमाभीष्टं हृदा धारयन्,
कर्हि स्यां तदनुग्रहेण परमोद्भूतानुरागोत्सवः ॥

उन शिखि-पिच्छ-मौलिधारी श्रीकृष्ण का ध्यान करती हुई, उनके नामों का कीर्त्तन करती हुई, उनके चरण-कमलों की की नित्य-परिचर्य्या करती हुई, उनके मन्त्रराज का जप करती हुई एवं अपना परम अभीष्ट श्रीराधा-पद-दास्य अपने हृदय में धारण करती हुई, मैं कब उनके अनुग्रह से परम अद्भुत अनुरागोत्सव-शाली होऊँगी ?

२५६

पुनः उक्त भावानुसार ही—

श्रीराधा-रसिकेन्द्र रूप गुणवद्गीतानि संश्रावयन्,
गुञ्जा मञ्जुल हार-बर्ह-मुकुटाद्यावेदयंश्चाग्रतः ।
श्याम-प्रेषित पूग-माल्य नव गन्धाद्यैश्च संप्रीणयं—
स्त्वत्पादाब्ज नखच्छटा रस हृदे मग्नः कदा स्यामहम् ॥

श्रीराधा और रसिकेन्द्र के रूप गुणादि समन्वित गीत-समूह का श्रवण करती हुई, उन [श्रीलालजी] के आगे सुन्दर गुञ्जाहार और मोर-मुकुटादि समर्पण करती हुई एवं श्याम-सुन्दर द्वारा प्रेषित सुपारी, माला, नवीन-गन्ध (इत्रादि) के द्वारा आपको प्रसन्न करती हुई, मैं कब आपके चरण-कमल की नखच्छटा रूप रस-सरसी में मग्न होऊँगी ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२६०

श्रीप्रिया-प्रियतम की महिमा, अपनी लघुता, दैन्य एवं श्रीवृन्दावन की महिमा एक साथ ही प्रकाशित करते हैं —

कासौ राधा निगमपदवी दूरगा कुत्र चासौ,
कृष्णस्तस्याः कुच-कमलयोरन्तरैकान्त वासः ।
क्वाहं तुच्छः परममधमः प्राण्यहो गर्ह्यकर्मा,
यत्तान्नाम स्फुरति महिमा एष वृन्दावनस्य ॥

कहाँ तो निगम पदवी से सुदूर वर्त्तमान् श्रीराधा ? और कहाँ उनके युगल-कुच-कमलों के मध्य में एकान्त भाव से निवास करने वाले श्रीकृष्ण ? अहो ! और कहाँ मैं अति अधम गर्हित-कर्मा, तुच्छ प्राणी ? इतने पर भी जो उनके नाम का स्फुरण होता है, वह निश्चय ही श्रीवृन्दावन की ही महिमा है ।

२६१

श्रीवृन्दावन में शरीर त्याग करके सिद्ध-स्वरूप से दासी हो जाने की अभिलाषा करते हैं—

वृन्दारण्ये नव रस-कला-कोमल प्रेम-मूर्त्तेः,
श्रीराधायाश्चरण- कमलामोद-माधुर्य्य-सीमा ।
राधां ध्यायन् रसिक-तिलकेनात्त केली-विलासां,
तामेवाहं कथमिह तनुं न्यस्य दासी भवेयम् ॥

जिन्होंने रसिक-तिलक श्रीलालजी के साथ केलि-विलास

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करना स्वीकार किया है, उन नव-रस-कला-कोमल-मूर्त्ति श्रीराधा का ध्यान करती हुई क्या मैं किसी प्रकार इस बृन्दावन में अपने शरीर को त्याग कर उनके चरण-कमल के आमोद-माधुर्य्य की अवधि-स्वरूपा दासी होऊँगी ?

२६२

अत्यन्त आर्त्ति और परम आदर के साथ अपने उपास्य के लिये सर्वत्र दैन्य-भाव का प्रकाश करते हैं—

हा कालिन्दि त्वयि मम निधिः प्रेयसा क्षालितो भू—
ङ्गो भो दिव्याद्भुत तरुलतास्त्वत्कर-स्पर्श भाजः ।
हे राधायाः रति-गृह-शुका हे मृगा हे मयूराः,
भूयो भूयः प्रणतिभिरहं प्रार्थये वोनुकम्पाम् ॥

हा कालिन्दि ! आप मेरी निधि-स्वरूपा स्वामिनि तथा प्रियतम से क्षालित हुई हैं; अर्थात् आप में ही उन्होंने जल-विहार किया है । अहा ! दिव्य एवं अद्भुत तरुलता गण ! तुम उनके सुकोमल कर-स्पर्श-भाजन हो । श्रीराधा-रति-गृह-निवासी हे शुको ! हे मृगो ! हे मयूरो !! मैं बारम्बार आपकी अनुकम्पा-प्राप्ति के लिये प्रणति-पूवक प्रार्थना करती हूँ ।

२६३

पहले वृन्दावन-वासी स्थिर-चर सबकी अनुकम्पा चाही, अब केवल यमुनाजी की कृपा-वांच्छा करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वहन्ती राधायाः कुच-कलश-काश्मीरजमहो,
जलक्रीडा वेशाद्गलितमतुल प्रेम-रसदम् ।
इयं सा कालिन्दी विकसित नवेन्दीवर रुचि—
स्सदा[1] मन्दीभूतं हृदयमिह सन्दीपयतु मे ॥

अहो ! जो जल-क्रीड़ाके आवेश से प्रक्षालित एवं अनुपम कुच कलशों में लगी हुई प्रेम-रस-प्रदायिनि केशर को वहन (प्रवाहित) करती रहती हैं; वही यह प्रफुल्लित नील-कमल की शोभा वाली कलिन्द-नन्दिनी यमुना मेरे इस मन्दीभूत हृदय को सदा सन्दीपित करें (प्रकाशित करें)।

२६४

अब श्रीवृन्दावन के वास्तविक स्वरूप का वर्णन करते हैं—

सद्योगीन्द्र सुदृश्य सान्द्र रसदानन्दैक सन्मूर्त्तयः,
सर्वेप्यद्भुत सन्महिम्नि मधुरे वृन्दावने सङ्गताः ।
ये क्रूरा अपि पापिनो न च सतां सम्भाष्य दृश्याश्चये,
सर्वान्वस्तुतया निरीक्ष्य परम स्वाराध्य बुद्धिर्मम ॥

अद्भुत महिमा-पूर्ण मधुर वृन्दावन से जिनका सङ्ग है, वे भले ही क्रूर, पापी और सज्जनों के दर्शन-सम्भाषण के अयोग्य व्यक्ति हों किन्तु वे सभी योगीन्द्र-गणों के सुन्दर दर्शनीय, सघन रसदायी और एकमात्र आनन्द की मूर्त्ति हैं। उनको वस्तुतया—उनके वास्तविक रूप में—देखकर उनमें मेरी परम आराध्य बुद्धि है ।

१—पाठान्तर—च्छटा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२६५

अब और भी श्रीवृन्दावन का प्रभाव वर्णन करते हैं—

यद्राधा-पद-किङ्करी-कृत हृदां सम्यग्भवेद्गोचरं,
ध्येयं नैव कदापि यद्धृदि विना तस्याः कृपा-स्पर्शतः ।
यत्प्रेमामृत-सिन्धु-सार रसदं पापैकभाजामपि,
तद्वृन्दावन दुष्प्रवेश महिमाश्चर्य्यं हृदिस्फूर्जतु ॥

जो श्रीराधा-चरणों में किङ्करी-भाव-पूर्ण हृदय वालों के लिये ही सम्यक् प्रकार से दृष्टि-गत हो सकता है, जो उन [श्रीराधा] की कृपा के स्पर्श बिना कदापि हृदय में नहीं आता एवं जो एकमात्र पाप-भाजनों—महापापियों—को भी प्रेमामृत-सिन्धु-सार-रस का दान करता है ! उस श्रीवृन्दावन की आश्चर्य्यमयी दुष्प्रवेश-महिमा मेरे हृदय में स्फुरित हो ।

२६६

अब श्रीवृन्दावन में नित्य-निवास करने की अभिलाषा करते हैं—

राधाकेलि कलासु साक्षिणि कदा वृन्दावने पावने,
वत्स्यामि स्फुटमुज्वलाद्भुत रसे[1] प्रेमैक-मत्ताकृतिः ।
तेजो-रूप निकुञ्ज एव कलयन्नेत्रादि पिण्डस्थितं,
तादृक्स्वोचित दिव्य कोमल वपुः स्वीयं समालोकये ॥

मैं कब प्रेम-विवशाकृति होकर श्रीराधा-केलि के साक्षी प्रकट-उज्ज्वल-अद्भुत-रस-पूर्ण एवं पवित्र वृन्दावन में निवास

१—पाठान्तर—रसं ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करूँगी ? तथा नेत्र-पिण्डों में स्थित तेजोमय निकुञ्ज की भावना करती हुई उसी के अनुसार उपयोगी अपने कोमल वपु का कब अवलोकन करूँगी ?

२६७

अब अपनी एकान्त-निष्ठा का परिचय देते हैं—

यत्र-यत्र मम जन्म कर्मभिर्नारकेऽथ परमे पदेऽथवा ।
राधिका-रति-निकुञ्ज-मण्डली तत्र-तत्र हृदि मे विराजताम् ॥

कर्मवशतः नरक में अथवा स्वर्ग में जहाँ-जहाँ मेरा जन्म हो वहाँ-वहाँ श्रीराधा-केलि-कुञ्ज-मण्डली [श्रीप्रिया, प्रियतम, सहचरि और वृन्दावन] मेरे हृदय में विराजमान् रहे ।

२६८

अब श्रीराधा-नाम-रस आदि से अपने आपका अन्तर प्रकट करते हैं—

क्वाहं मूढ़मतिः क्व नाम परमानन्दैक सारं रसः[1]
श्रीराधा-चरणानुभावकथया निस्यन्दमाना गिरः ।
लग्नाः कोमल कुञ्ज पुञ्ज विलसद्वृन्दाटवी-मण्डले
क्रीडच्छ्रीवृषभानुजा-पद-नख-ज्योतिच्छटा प्रायशः ॥

कहाँ तो मूढ़-मति मैं ? और कहाँ परमानन्द का भी

---

१ पाठान्तर—रसं ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सार और रस-रूप उनका श्रीनाम ? तथापि श्रीराधा के चरणानुभाव-कथन-द्वारा दोलायमान् मेरा वाक्य-समूह, कोमल कुञ्ज-पुञ्ज विलसित श्रीवृन्दावन में संलग्न और प्रायशः क्रीड़ा-परायण श्रीवृषभानु-नन्दिनी की पद-नख-ज्योति की छटा से युक्त है।

२६९

ग्रन्थ का उपसंहार करते हुए प्रार्थना-व्याज से कहते हैं—

श्रीराधे श्रुतिभिर्बुधैर्भगवताप्यामृग्यसद्वैभवे,
स्वस्तोत्र स्वकृपात एव सहजो योग्योऽप्यहं कारितः।
पद्येनैव सदापराधिनि महन्मार्गं विरुद्ध्यत्वदे—
काशेस्नेह जलाकुलाक्षि किमपि प्रीतिं प्रसादी कुरु ॥

हे श्रीराधे ! आपका वैभव श्रुतियों, बुधजनों एवं स्वयं भगवान् के लिये भी अन्वेषणीय है। किन्तु फिर भी आपकी कृपा के द्वारा आपका स्तोत्र पद्य रूप करने के लिये मैं सहज योग्य बना दिया गया हूँ। अतएव हे स्नेह-जल-पूर्ण आकुल-नयनि ! सदापराधी एवं महत् मार्गों का भी विरोध करके एक-मात्र तुम्हारी ही आशा रखने वाले मुझ पर अपनी अनिवर्चनीय कृपा-प्रीति का प्रसाद दीजिये।

२७०

इस प्रकार सम्पूर्ण ग्रन्थ का वर्णन करके पठन-पाठन के अधिकारी पात्रों के प्रति कहते हैं—

अद्भुतानन्द लोभश्चेन्नाम्ना 'रस-सुधा-निधिः'।
स्तवोयं कर्ण-कलशैर्गृहीत्वा पीयतां बुधाः ॥

हे बुधजनो ! यदि आपको अद्भुत आनन्दोपभोग का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लोभ हो तो इस "श्रीराधा-सुधा-निधि" नामक स्तव को प्राप्त करके—[ग्रहण करके] कर्ण-कलशों से पान कीजिये।

इति श्रीवृन्दावनेश्वरी-चरण-कृपावलम्ब-
जृम्भित श्रीहित हरिवंशचन्द्र
गोस्वामिना विरचितं
'श्रीराधा-सुधा-निधि'
—स्तोत्रं,—
समाप्तम्।

इस प्रकार श्रीवृन्दानेश्वरी—श्रीराधा-चरण-
कृपा के आश्रय से कल्लोलमान्
श्रीहित हरिवंशचन्द्र गोस्वामी-
पाद द्वारा रचित यह
'श्रीराधा-सुधा-निधि'
नामक स्तोत्र
समाप्त
हुआ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीराधे

अकारादि क्रमानुगत श्लोक-सूची ।

क्रम सं०	श्लोक-	श्लोक-सं०
	अ	
१	अकस्मात्कस्याश्चिन नव वसन	२३२
२	अङ्कस्थितेऽपि दयिते किमपि	४६
३	अङ्ग प्रत्यङ्गरिङ्गन्मधुर तर	१६२
४	अति स्नेहादुच्चैरपि च हरि	५४
५	अदृष्ट्वा राधाङ्के निमिषमपि	२१४
६	अद्भुतानन्द लोभश्चेन्नाम्ना	२७०
७	अद्य श्यामकिशोर मौलिरहह	१६७
८	अनङ्ग जय मङ्गल ध्वनित	२२४
९	अनङ्ग नवरङ्गिणी रस तरङ्गिणी	१७७
१०	अनुल्लिख्यानन्तानपि	१५४
११	अनेन प्रीता मे दिशतु निज	२५७
१२	अन्योन्य हास परिहास	४९
१३	अप्रेक्षे कृत निश्चयापि सुचिरं	२३०
१४	अमन्द प्रेमाङ्क श्लथ सकल	५१
१५	अमर्य्यादोन्मीलत् सुरत रस	१५२
१६	अलिन्दे कालिन्दी तट नव	१६५
१७	अलं विषय वार्त्तया नरक	८३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
१८	अहो तेमी कुञ्जास्तदनुपम	२०६
१६	अहो द्वैधी कर्त्तुं	२५०
२०	अहो भुवन मोहनं मधुर	१४०
२१	अहो रसिक शेखरः स्फुरति	१११

आ

२२	आधाय मूर्द्धनि यदा	४
२३	आनम्रानन चन्द्रमीरित	१२३
२४	आशास्य दास्यं वृषभानु	१६७

इ

२५	इतो भयमितस्त्रपा कुल	१०६
२६	इहैवाभूत्कुञ्जे नव	२१०

उ

२७	उच्छिष्टामृत भुक्तवैव	२४०
२८	उज्जागरं रसिक नागर	१६
२६	उज्जृम्भमाण रसवारि	११
३०	उद्गच्चन्द्रोमाञ्च प्रचय	२०२
३१	उन्मीलन्नव मल्लिदाम	१५१
३२	उन्मीलन्मिथुनानुराग	६४
३३	उन्मीलन्मुकुटच्छटा	१२०
३४	उपास्य चरणाम्बुजे	१२२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

. CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
	ए	
३५	एकस्या रतिचौर एव	२३३
३६	एकं काञ्चन चम्पक	१६९
	ओ	
३७	ओष्ठप्रान्तोच्छलित	१८९
	क	
३८	कदा गायं गायं	२०१
३९	कदा गोविन्दाराधन	१८३
४०	कदाचिद्गायन्ती प्रिय	२५५
४१	कदा वृन्दारण्ये मधुर	१३७
४२	कदा मधुर सारिका	२२१
४३	कदा रत्युन्मुक्तं कच	१७४
४४	कदा रासे प्रेमोन्मद	१५८
४५	कदा वा खेलन्तौ व्रज	६५
४६	कदा वा प्रोद्दाम स्मर	१९२
४७	कदा वा राधायाः पद	१९१
४८	कदा सुमणि किङ्कणी वलय	११३
४९	कर्म्माणि श्रुति बोधितानि	८२
५०	करे कमलमद्भुतं भ्रमयतो	१७१
५१	करं ते पत्रालीं किमपि	१०५
५२	कलिन्दगिरि-नन्दिनी पुलिन	९२
५३	कलिन्दगिरि-नन्दिनी सलिल	१३२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
५४	काचिद्वृन्दावन नव लता	१४५
५५	कान्ताढ्याश्चर्य्य कान्ता	६१
५६	कान्तिः कापि परोज्वला	२३७
५७	कामं तूलिकया करेण	२०५
५८	कालिन्दी कूल कल्पद्रुम	१२६
५९	कालिन्दी तट कुञ्ज मन्दिर	६५
६०	कालिन्दी तट कुञ्जे पुञ्जीभूतं	१६८
६१	क्वासौ राधा निगम पदवी	२६०
६२	क्वाहं मूढ़मतिः क्व नाम	२६८
६३	किं ब्रूमोन्यत्र कुण्ठीकृतक	१७५
६४	किं रे धूर्त्तप्रवर निकट	१६०
६५	किं वा नस्तैः सुशास्त्रैः	२१६
६६	क्रीडन्मीनद्वयाढ्याः	२४१
६७	क्रीडासरः कनक पङ्कज	३५
६८	कुञ्जान्तरे किमपि जात	४७
६९	कृष्णः पद्मो नव कुवलयं	८८
७०	कृष्णामृतं चलु विगाढुमिति	१४
७१	केनापि नागर वरेण पदे	६
७२	कैशोराद्भुत माधुरी भर	८०
७३	कोटीन्दुच्छवि हासिनी	१८२
७४	क्षणं मधुर गानतः क्षण	१६६
७५	क्षणं शीत्कुर्वन्ती क्षण	२०३
७६	क्षरन्तीव प्रत्यक्षरमनुपम	१५३

ख

७७	खेलन्मुग्धाक्षि मीन	१७२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
	ग	
७८	गता दूरे गावो दिनमपि	२२८
७९	गत्वा कलिन्द तनयाविजनावतार	२३
८०	गात्रे कोटि तडिच्छवि	९८
८१	गौराङ्गे म्रदिमा स्मिते	७४
	च	
८२	चकोरस्ते वक्त्रामृत	२५१
८३	चन्द्रास्ये हरिणाक्षि	११६
८४	चलत्कुटिल कुन्तलं	१८५
८५	चलल्लीला गत्या क्वचिदनु	२१९
८६	चिन्तामणिः प्रणमतां	२६
	ज	
८७	जागृत्स्वप्न सुषुप्तिषु	१६४
८८	ज्योतिः पुञ्जद्वयमिदमहो	२२६
	त	
८९	तज्जीयान्नव यौवनोदय महा	६८
९०	तत्सौन्दर्यं सच नव वयो	८४
९१	तन्नः प्रतिक्षण चमत्कृत	६
९२	त्वयि श्यामे नित्ये प्रणयिनि	१४९
९३	तस्या अपार रससार	३९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
९४	ताहङ् मूर्त्तिर्व्रजपतिसुतः	२१८
९५	ताम्बूलं क्वचदर्पयामि	१३४
	द	
९६	दिव्य प्रमोद रस सार	५
९७	दुकूलमति कोमलं	१५७
९८	दुकूलं बिभ्राणामथ	५२
९९	दूरादपास्य स्वजनान्सुख	३२
१००	दूरे स्निग्ध परम्परा	७३
१०१	दूरे सृष्ट्यादि वार्त्ता	२३५
१०२	दृशौ त्वयि रसाम्बुधौ	६०
१०३	दृष्ट्या यत्र क्वचन	६२
१०४	दृष्ट्वैव चम्पक लतेव	१८
१०५	देवानामथ भक्त मुक्त सुहृदा	६६
	ध	
१०६	धर्माद्यर्थ चतुष्टयं विजयतां	७७
१०७	धम्मिल्लं ते नव परिमलैः	६६
१०८	ध्यायंस्तं शिखिपिच्छमौलि	२५८
	न	
१०९	न जानीते लोकं न च	१४६
११०	न देवैर्ब्रह्माद्यैर्नखलु	१४८
१११	नासाग्रे नव मौक्तिकं सुरुचिरं	२२९
११२	निज प्राणेश्वर्य्या यदपि	५५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
११३	निर्माय चारु मुकुटं नव	३०
११४	नीलेन्दीवर वृन्द कान्ति	२४५

प

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
११५	पत्रालीं ललितां कपोल	२२२
११६	पत्रावलीं रचयितुं कुचयोः	३६
११७	परस्परं प्रेम रसे निमग्नं	१६६
११८	प्रत्यङ्गोच्छलदुज्वलामृत	१३५
११९	प्रस्मर पटवासे प्रेम	१५९
१२०	पातं पातं पद-कमलयोः	२०८
१२१	पाद स्पर्श रसोत्सवं	६०
१२२	पादाङ्गुली निहित दृष्टि	१५
१२३	प्रातः पीतपटं कदा	७५
१२४	प्रियांसे निक्षिप्तोत्पुलक	२३४
१२५	पीतारुणच्छविमनन्त	२९
१२६	प्रीतिरिव मूर्त्तिमती रस	१९९
१२७	प्रीतिं कामपि नाम मात्र	५६
१२८	पूर्ण प्रेमामृत रस	१८६
१२९	पूर्णानुराग रसमूर्त्ति	४०
१३०	प्रेम्णः सन्मधुरोज्वलस्य	७८
१३१	प्रेमानन्द रसैक वारिधि	६९
१३२	प्रेमाम्भोधि रसोल्लसत्तरुणिमा	२४३
१३३	प्रेमोल्लसद्रस विलास	४१
१३४	प्रेमोल्लासैक सीमा परम	१३०
१३५	प्रेयः सङ्ग सुधा सदा	१८१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
	ब	
१३६	बलान्नीत्वा तल्पं किमपि	१०४
१३७	बृन्दाटवी प्रकट मन्मथ	३३
१३८	बृन्दाटव्यां नव नव रसानन्द	१०७
१३९	बृन्दानि सर्वमहतामपहाय	८
१४०	बृन्दारण्य निकुञ्ज मञ्जुल	५९
१४१	बृन्दारण्य निकुञ्ज सीमनि	७०
१४२	बृन्दारण्य निकुञ्ज सीमसु सदा	१२८
१४३	बृन्दारण्ये नव रस कला	२६१
१४४	बृन्दावनेश्वरि तवैव	१२
१४५	ब्रह्मानन्दैकवादाः कतिचन्	१४७
१४६	ब्रह्मेश्वरादि सुदुरूह	२
	भ	
१४७	भ्रमद्भ्रूकुटि सुन्दरं	११६
१४८	भूयो भूयः कमलनयने	१३६
१४९	भोः श्रीदामन्सुवल	२२७
	म	
१५०	मञ्जु स्वभावमधिकल्प	२७
१५१	मत्कण्ठे किं नखरशिखया	१६३
१५२	मदाघूर्णन्नेत्रं नव रतिकला	१९५
१५३	मदारुण विलोचनं कनक	१९४
१५४	मध्ये मध्ये कुसुम खचितं	२४८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक				श्लोक सं०
१५५	मन्दीकृत्य मुकुन्द सुन्दर	...	...	...	१४२
१५६	मल्लीदाम निबद्ध चारु	...	...	...	१२६
१५७	महाप्रेमोन्मीलन्नव रस	...	...	...	५०
१५८	महामणि वरस्रजं कुसुम	...	...	...	२४७
१५९	माला ग्रन्थन शिक्षया मृदु	...	...	...	२४२
१६०	मिथोभङ्गी कोटिप्रवहदनुराग	...	...	...	१४४
१६१	मिथः प्रेमावेशाद्धन पुलक	...	...	...	१६३
१६२	मुक्तापंक्तिप्रतिम दशना	...	...	...	९९

य

१६३	यज्जापः सकृदेव गोकुल	...	...	...	६४
१६४	यत्र यत्र मम जन्म	...	...	...	२६७
१६५	यद्राधा पद किङ्करी कृत	...	...	...	२६५
१६६	यदि कनक सरोजं कोटि	...	...	...	१६०
१६७	यदि स्नेहाद्राधे दिशसि	...	...	...	८७
१६८	यत्किङ्करीषु वहुशः खलु	...	...	...	७
१६९	यद्गोविन्द कथा सुधा रस	...	...	...	११४
१७०	यन्नारदाजेश शुकैरगम्यं	...	...	...	२३८
१७१	यत्पादपद्म नख-चन्द्र मणि	...	...	...	१०
१७२	यत्पादाम्बुरुहैक रेणु	...	...	...	७२
१७३	यद्वृन्दावन मात्र गोचरमहो	...	...	...	७६
१७४	ययोन्मीलत्केली विलसित	...	...	...	१८७
१७५	यल्लक्ष्मी शुक नारदादि	...	...	...	८५
१७६	यस्याः कदापि वसनाञ्चल	...	...	...	१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
१७७	यस्याः प्रेमघनाकृतेः पद	२०४
१७८	यस्यास्तत्सुकुमार सुन्दर	१३१
१७९	यस्यास्ते वत किङ्करीषु	६३
१८०	यस्यास्स्फूर्ज्जत्पद नख	१३६
१८१	यातायातं शतेन सङ्गमितयो	१३९
१८२	यावाराधयति प्रियं व्रज	६७
१८३	यूनोर्वीक्ष्यदरत्रपा नटकला	२२५
१८४	येषां प्रेक्षां वितरति नवोदार	१०३
१८५	यो ब्रह्म रुद्र शुक नारद	३

र

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
१८६	रसघन मोहन मूर्त्तिं	२००
१८७	रसागाधे राधा हृदि	२३१
१८८	रहोगोष्ठी श्रोतुं तव निज	१०६
१८९	रहोदास्यं तस्या किमपि	११५
१९०	राका चन्द्रो वराको यदनुपम	१२४
१९१	राकानेक विचित्र चन्द्र उदितः	१२५
१९२	राधा करावचित पल्लव वल्लरीके	१३
१९३	राधा केलि कलासु साक्षिणि	२६६
१९४	राधा केलि निकुञ्ज वीथिषु	१३८
१९५	राधादास्यमपास्य यः	७९
१९६	राधा नाम सुधारसं रसयितुं	१४१
१९७	राधा नामैव कार्य्यं ह्यनुदिन	१४३
१९८	राधापाद-सरोज-भक्तिमचला	११७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
१६६	राधापादारविन्दोच्छलित	२१३
२००	राधामाधवयोर्विचित्र	१७६
२०१	रूपं शारदचन्द्र कोटि वदने	१०८
२०२	रोमालीमिहरात्मजा सुललिते	१७८

ल

२०३	लक्ष्मी कोटि विलक्ष्य	६७
२०४	लक्ष्म्यायश्च न गोचरी	२३६
२०५	लज्जान्तः पटमारचय्य	१०१
२०६	लब्ध्वा दास्यं तदति	८६
२०७	लसद्दशन मौक्तिक प्रवर	१८४
२०८	लसद्दशन पङ्कजा नव	१७६
२०६	लावण्यसार रस सार	२५
२१०	लावण्यामृत वार्त्तया जगदिदं	६१
२११	लावण्यं परमाद्भुतं	११८
२१२	लिखन्ति भुज मूलतो न	८१
२१३	लीलापाङ्ग तरङ्गितैरिव दिशो	८६
२१४	लीलापाङ्ग तरङ्गितैरुदभव	७१
२१५	लुलित नव लवङ्गोदार कर्पूर	१५५

व

२१६	वहन्ती राधायाः कुचकलश	२६३
२१७	विचित्र रति विक्रमं दधदनु	१७०
२१८	विचित्र वर भूषणोज्वल दुकूल	११२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
२१९	विचित्राभिर्भङ्गी वितति	२४६
२२०	विचिन्वन्ती केशान् क्वचन	५३
२२१	विच्छेदाभासमानादहह	१७३
२२२	विपञ्चित सुपञ्चमं रुचिर	५७
२२३	वीणां करे मधुमतीं मधुर	४८
२२४	वेणुः कराग्निपतितः स्खलितं	३८
२२५	वैदग्ध्य-सिन्धुरनुराग	१७
२२६	व्याकोशेन्दीवर विकसिता	१३३
२२७	व्याकोशेन्दीवराष्टापद	२२०

श

२२८	शुद्ध प्रेम विलास वैभव निधिः	२४४
२२९	शुद्ध प्रेमैक लीलानिधि	१२७
२३०	श्याम श्यामेत्यमृत रस संस्राव	२५४
२३१	श्याम श्यामेत्यनुपम रसापूर्ण	२१७
२३२	श्यामा मण्डल मौलि मण्डन	१२१
२३३	श्यामे चाटुरुतानि कुर्वति	११०
२३४	श्यामेति सुन्दरवरेति	३७
२३५	श्रीगोपेन्द्रकुमार मोहनमहा	१८८
२३६	श्री गोवर्द्धन एक एव भवता	२२३
२३७	श्रीगोविन्द व्रजवर वधू	२५६
२३८	श्रीमद्राधे त्वमथ मधुरं	१६८
२३९	श्रीमद्विम्बाधरे ते स्फुरति	२११
२४०	श्रीराधारसिकेन्द्र रूप	२५९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
२४१	श्रीराधिकां निज विटेन	२८
२४२	श्रीराधिके तव नवोद्गम चारु	४४
२४३	श्रीराधिके सुरतरङ्गिणि दिव्य केलि	२०
२४४	श्रीराधिके सुरतरङ्गि नितम्ब	१६
२४५	श्रीराधेश्रुतिभिर्बुधैर्भगवता	२६६
२४६	श्लोकान्प्रेष्ठ यशोङ्कितान्गृह	१८०

स

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
२४७	सङ्केत कुञ्ज निलये मृदु	४२
२४८	सङ्केत कुञ्जमनुकुञ्जर	२२
२४९	सङ्केतकुञ्जमनुपल्लवमास्तरीतुं	३१
२५०	सङ्गत्यापि महोत्सवेन मधुरा	२४६
२५१	सद्गन्ध माल्य नवचन्द्र	४३
२५२	सत्प्रेम राशि सरसो	२४
२५३	सत्प्रेम सिन्धु मकरन्द	२१
२५४	सदा गायं गायं मधुर	२५३
२५५	सदानन्दं वृन्दावन नवलता	१५०
२५६	सद्योगीन्द्र सुदृश्य सान्द्र	२६४
२५७	सहासवर मोहनाद्भुत विलास	५८
२५८	सान्द्रप्रेम रसौघ वर्षिणि	२०६
२५९	सान्द्रानन्दोन्मद रसघन प्रेम	२१२
२६०	सान्द्रानुराग रस सार सरः	३४
२६१	सा भ्रूनर्त्तन-चातुरी निरुपमा	६३
२६२	सा लावण्य चमत्कृतिर्नव	१०२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रम सं०	श्लोक	श्लोक सं०
२६३	स्निग्धा कुञ्चित नीलकेशि	१००
२६४	सुधाकरमुधाकरं प्रति	१६१
२६५	सुस्वादु सुरस तुन्दित्त	२३६
२६६	सौन्दर्य्यामृत-राशिरद्भुतमहा	१५६
२६७	संतापमुच्छलदनङ्ग तरङ्ग	४५
२६८	स्पृष्टवा स्पृष्ट्वा मृदुकरतलेनाङ्ग	२५२
२६९	स्वेदापूरः कुसुमचयनैदू रतः	२०७

ह

२७०	हा कालिन्दि त्वयि मम	२६२

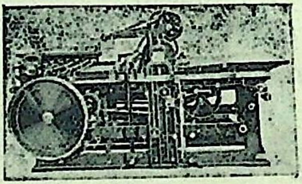

समाप्त ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भावी प्रकाशन—

१ **श्रीबयालीस लीला**

(शब्दार्थ एवं टिप्पणी सहित)

महात्मा श्रीहित ध्रुवदासजी कृत

टिप्पणीकार—बाबा हितदास

सरल और सार-गर्भित ब्रज-भाषा में विशुद्ध शृङ्गार रस का वर्णन करने में महात्मा श्रीहित ध्रुवदासजी से आगे और कोई हो सकेगा, ऐसा नहीं दीखता। ग्रन्थ साहित्यिक अलङ्कार गुणों से परिपूर्ण है। प्रसाद गुण तो इनकी अपनी वस्तु है। इस ग्रन्थ में प्रेमलता, अनुरागलता, सभा-मंडल, प्रीति-चौवनी, ब्रज-लीला, प्रेम-सिद्धान्त, वृन्दावन-महिमा, नेहमञ्जरी, रति-मञ्जरी आदि छोटे-छोटे बयालीस-ग्रंथों का समावेश है; इसीलिये इसका एक समूचा नाम 'बयालीस-लीला' है।

इसके प्रत्येक गम्भीर विषय पर टिप्पणी लिखकर टिप्पणीकार ने इसे समझने में पर्य्याप्त सहायता दी है। साथ ही कठिन शब्दों के शब्दार्थ एवं पद्यों और दोहों के भावार्थ लिखकर इसे हृदय-गम्य बनाने का प्रयत्न किया गया है।

२ **श्रीहित चौरासी**

एवं

स्फुट वाणी

गोस्वामी श्रीहित हरिवंशचन्द्र महाप्रभु कृत

(शब्दार्थ, भावार्थ एवं टिप्पणी सहित)

लेखक—बाबा श्रीवंशीदासजी महाराज

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi